नामधारी इतिहास

(1785 से 1872 ई तक)

लेखक :
सरदार नाहर सिंह एम.ए

उत्तर प्रदेश सरकार ने इस पुस्तक को उच्च-कोटि का इतिहास-साहित्य मानकर लेखक को मार्च 1959 में 400 रु. के पुरस्कार से सम्मानित किया है ।

ISBN Number : **978-81-934627-6-8**

द्वितीय बार – 500

प्रकाशक:
नामधारी सिख संगत, गुरुद्वारा श्री भैणी साहिब (लुधियाना)

श्री सतगुरु राम सिंह जी पातशाही १२वीं

शहीदी साका मलेरकोटला

विषय सूची

द्वितीय संस्करण का आदि कथन 1

राष्ट्रपति श्री डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद जी का एक लेख 5

नेहरू जी का एक सन्देश 5

भारतीय स्वतन्त्रता के पुजारी "नेता सुभाष चन्द्र बोस" जी का कथन 6

जगत्-प्रसिद्ध नेता श्री जवाहरलाल नेहरू का एक भाषण 6

भारतीय स्वतन्त्रता के निर्भीक योद्धा "श्री के. एम. मुन्शी" का एक लेख 8

दो शब्द 14

कुछ और 18

नानक पन्थ और सिक्ख धर्म का प्रचार 24

अध्याय (काण्ड)-2 48

नामधारी नेता गुरु राम सिंह जी जीवन के पहले 40 वर्ष 54

नामधारी आन्दोलन का विकास धर्म प्रचार के छः वर्ष 72

- हरिद्वार अर्धकुम्भ के मेले पर जाना 86
- प्रचार के लिए देशाटन 88
- नई विवाह रीति अथवा आनन्द कार्य की मर्यादा 93
- निगरानी तथा दूतकार्य 96
- पंजाब सरकार का मत 102

नजरबन्दी तथा प्रतिबन्ध के चार वर्ष 105

आनन्दपुर का होला 109

अमृतसर की दीवाली 117

प्रचार के दूसरे चार वर्ष 132

नामधारियों का राजनैतिक कार्यक्रम 139

- भारत के सीमान्त राज्य कश्मीर तथा नेपाल से सम्बन्ध 139

पंजाब पर अंग्रेज शासकों का अधिकार 146

रायकोट की घटना 167

ज्ञानी रतन सिंह तथा रतन सिंह, गाँव नाईवाला को फांसियां 179
विदेशी सरकार को नामधारियों की ओर से आशंका 185
शहीदी जत्थे का उत्थान 194
भैणी में माघी का मेला 12 जनवरी 1871 197
शहीदी जत्थे का मलेरकोटला पहुँचना 205
जत्थे का गिरफ्तार होना 208
नामधारी सिंहों का तोपों से उड़ाया जाना 223
गुरु राम सिंह जी पे क्या बीती ? 235
गुरुद्वारा की तलाशी, तालाबन्दी तथा पुलिस चौकी का बैठना 242
शहीद हुए नामधारी सिंह 248

❋

द्वितीय संस्करण का आदि कथन

अंग्रेज़ सरकार के बाग़ी कूका आंदोलन का इतिहास

अंग्रेज़ी उपनिवेशवादियों के विरुद्ध पंजाब में चलने वाली लोक लहरों में से कूका लहर पहली और प्रमुख लहर थी। इसके जनक सतगुरु राम सिंह जी थे। आपने लाहौर दरबार के पतन के बाद यह अनुभव किया कि पंजाबी लोग, विशेषकर सिख, गुरु नानक देव जी और गुरु गोबिंद सिंह जी द्वारा दिखाए गए गुरमत मार्ग से भटककर लालच, स्वार्थ और ईर्ष्या के शिकार होकर अपना राजपाट विदेशियों के हाथों गँवा बैठे हैं। इसलिए इन लोगों को उस समय की सबसे बड़ी साम्राज्यवादी ताकत अंग्रेज़ सरकार से लड़ने के लिए पहले आध्यात्मिक शक्ति से मजबूत करना होगा। इस उद्देश्य के लिए आपने 12 अप्रैल 1857 को श्री भैणी साहिब में पाँच सिंहों को खंडे बाटे का अमृत छका कर नामधारी संत खालसे की स्थापना की। इसी दिन आपने एक लंबे खंडे वाले बाँस पर सफेद त्रिकोणीय झंडा लहराकर अपनी प्रभु सत्ता का ऐलान किया, क्योंकि गुरु का सच्चा सिख सिर्फ अकाल पुरख से डरता है, किसी दुनियावी ताकत से नहीं।

इसके बाद आपने अंग्रेज़ सरकार की सभी संस्थाओं और ब्रिटिश मिलों में बने सामान के बहिष्कार और सहयोग न करने का ऐलान कर पंजाब में स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत की।

सतगुरु जी ने पूरे पंजाब में प्रचार यात्राएँ कर गुरमत जीवन शैली की नींव पक्की की। यह मर्यादा आपने तख्त श्री हजूर साहिब (नांदेड़) से भाई राय सिंह जी के माध्यम से मंगवाई। एक "रहतनामा" श्री भैणी साहिब से पूरी संगत के नाम जारी करके रोज़ाना के धार्मिक कर्म, सामाजिक कुरीतियों, सभी प्रकार के नशों, मांस-मदिरा और अनैतिक आचरण का विरोध किया। गांवों के गुरुद्वारों में आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बीड़ का प्रकाश किया गया। संगत के लिए सुबह-शाम की संगतें, आसा की वार का कीर्तन, शाम का

दीवान निश्चित किया। स्वदेशी वस्तुओं का प्रचार करके विदेशी वस्त्रों और माल का बहिष्कार किया गया। नवजात कन्याओं को मार डालना, लड़कियों को बेचना, वट्टा साटा विवाह जैसी कुप्रथाओं को बंद करवाया गया।

आपकी शुभ शिक्षाओं का प्रभाव ऐसा हुआ कि बहुत जल्दी आपके अनुयायियों यानी कूका या नामधारियों की संख्या तेजी से बढ़ गई। सरकारी रिकॉर्ड के अनुसार यह संख्या 3 लाख थी। ज्ञानी ज्ञान सिंह जी "पंथ प्रकाश" में इसे 7 लाख लिखते हैं। लुधियाना में शहीद हुए सूबा ज्ञानी रतन सिंह अपने बयानों में इसे 10 लाख बताते हैं, जबकि उस समय पूरे पंजाब की जनसंख्या 50 लाख से अधिक नहीं थी।

सतगुरु जी के प्रचार दौरों में रागी, ढाढ़ी, रबाबी और कीर्तनिए भी शामिल होते थे। आनंदपुर साहिब के होला महल्ला और अमृतसर की दिवाली पर सतगुरु जी के साथ 15 से 30 हज़ार संगतों का इकट्ठा होना अंग्रेज़ सरकार की नींद उड़ाने का कारण बनता था। आपने कूका संगत को गांव से लेकर श्री भैणी साहिब तक एक संगठन में पिरोने के लिए सूबा प्रणाली विकसित की। पूरे पंजाब के विभिन्न हिस्सों में कूका प्रचार के लिए ये सूबे जिम्मेदार थे, जिनकी वाणी और प्रचार शैली बेहद प्रभावशाली थी।

कूका सैनिक प्रशिक्षण के लिए जम्मू-कश्मीर में "कश्मीर कूका रेजीमेंट" बनाई गई। इसी मकसद से नेपाल, अफगानिस्तान, रूस के एशियाई इलाके, हैदराबाद, लखनऊ, ग्वालियर आदि देशी रियासतों में भी अंग्रेज़ सरकार के खिलाफ माहौल बनाने के लिए उच्च स्तर के कूका मिशन भेजे गए। सरकार इन सब गतिविधियों पर गहरी नजर रख रही थी। 1863 से ही सरकार सतगुरु राम सिंह जी को किसी बहाने गिरफ्तार करना चाहती थी। जनवरी 1872 में मलेरकोटला की घटनाओं ने सरकार को यह मौका दे दिया।

अब सतगुरु जी और प्रमुख सूबों को देश निकाला देकर समूचे कूका समुदाय को बागी घोषित कर दिया गया। भैणी साहिब गुरुद्वारे के सामने पुलिस चौकी

बैठा दी गई, जो आधी सदी तक कूका संगत पर जुल्म ढाती रही। सौ से अधिक कूके या तोपों से उड़ा दिए गए, या कई फाँसी चढ़ा दिए गए, और कई काले पानी भेजे गए, उनके घर-बार ध्वस्त कर दिए गए, जमीनें जब्त कर ली गईं, और उनकी अगली पीढ़ी को गरीबी और जिल्लत की खाई में धकेल दिया गया।

लेकिन कूकों ने यह सब अत्याचार अपने धार्मिक रहबरों — पहले गुरु हरि सिंह जी (1872-1906) और फिर सतगुरु प्रताप सिंह जी (1906-1959) — की रहनुमाई में सहन किया। सतगुरु जगजीत सिंह जी का गुरुगद्दी काल 1959 से 2012 तक रहा। वे भी सरदार नाहर सिंह जी के कार्यों के प्रशंसक थे। उन द्वारा संकलित कूका दस्तावेज आपने ही छपवाए थे।

इस शानदार और कुर्बानियों भरे मरजीवड़े इतिहास को हमारे कुछ समकालीन लेखकों और कवियों को छोड़कर किसी ने नहीं लिखा। अंग्रेज़ी हुकूमत के समय यह संभव भी नहीं था। इसी कारण 1944 में प्रोफेसर गंडा सिंह ने अपनी रचना "कूकियां दी विथिया" में नामधारियों के राजनीतिक संग्राम की अनदेखी की।

नामधारी इतिहास के समकालीन स्रोतों और अंग्रेज़ी सरकार के अभिलेखागार में मौजूद रिकॉर्ड को गहराई से पढ़-खोजकर सरदार नाहर सिंह एम.ए. (1904-1998) ने 1955 में सतगुरु प्रताप सिंह जी की आज्ञा और सहयोग से "नामधारी इतिहास" को पंजाबी और हिंदी में प्रकाशित करवाया। सरदार नाहर सिंह जी का गांव नंगल खुर्द (नजदीक पखोवाल, लुधियाना) था और यह इलाका कभी कूका आंदोलन का गढ़ रहा था।

उस समय वे भारत सरकार के डिप्टी मिनिस्टर सरदार सुरजीत सिंह मजीठिया के सचिव थे और दिल्ली में रहते थे, जिससे उन्हें यह सारा मसाला इकट्ठा करने में आसानी हुई। वे पंजाब इतिहास बोर्ड के सदस्य भी थे, इसलिए उन्हें आज़ादी संग्राम की इस महान लोक लहर का इतिहास दर्ज करने में विशेष

रुचि थी। यह काम उन्होंने बखूबी किया और देश के स्वतंत्रता संग्राम में सतगुरु राम सिंह जी और उनके अनुयायियों के महान योगदान का उचित मूल्यांकन किया।

सरदार नाहर सिंह जी ने उपरोक्त पुस्तक के अलावा "ब्रिटिश राज के विरुद्ध पंजाब के बागी" शीर्षक से तीन खंडों में कूकों संबंधी सरकारी दस्तावेजों का संकलन भी किया है।

उक्त "नामधारी इतिहास" की हिंदी में प्रकाशित पुस्तक अब दुर्लभ थी। वर्तमान नामधारी मुखी सतगुरु उदय सिंह जी नामधारी इतिहास-संबंधी नई-पुरानी पुस्तकों के प्रकाशन में सदा सहयोग करते हैं। आपकी इच्छा से बड़े हिंदी समाज तक नामधारी इतिहास पहुँचाने के लिए इसका हिंदी अनुवाद पुनः प्रकाशित किया जा रहा है। इसमें मलेरकोटला के शहीदों की सूची और रियासत पटियाला से प्राप्त प्रमाणिक सूची के अनुसार है। हरनाम सिंह और हरकीरत सिंह इस के प्रकाशन में सहयोगी रहे । आशा है कि यह पुस्तक भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के पंजाब अध्याय को समझने में उपयोगी सिद्ध होगी।

9-3-2025
स्वर्ण सिंह विर्क
श्री भैणी साहिब (लुधियाना)

राष्ट्रपति श्री डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद जी का एक लेख

श्री गुरु राम सिंह जी स्वतंत्रता को भी धर्म का आवश्यक अंग समझते थे । नामधारियों का संगठन बहुत शक्तिशाली हो गया था । हमारे देश में महात्मा गांधी जी ने जो सहयोग इतनी जोर से चलाया, उसको गुरु राम सिंह जी ने प्राय: 50 वर्ष पूर्व ही नामधारियों में प्रचारित किया था । उनके सिद्धांतों में पांच वस्तुएं हैं।

1. सरकारी नौकरी का बहिष्कार ।
2. सरकारी स्कूलों का बहिष्कार ।
3. सरकारी अदालतों का बहिष्कार ।
4. विदेशी वस्त्रो का बहिष्कार ।
5. ऐसे कानून मानने से इनकार जो अपनी आत्मा के विरुद्ध है ।

अखबार सतयुग बसंत अंक
१० माघ १९९२

नेहरू जी का एक सन्देश

सतगुरु राम सिंह जी ने अपनी मातृभूमि को स्वतंत्रता दिलाने के लिए आज से पौनी सदी पहले जो महान गौरवशाली परिश्रम किया था, उसकी महत्ता से कोई भी हिन्दुस्तानी इन्कार नहीं कर सकता । कांग्रेस ने आपके दिखाये हुए रास्ते को स्वीकार करके ही सफलतायें प्राप्त की हैं । लगभग 74 वर्ष का समय बीतने पर भी वह कार्यक्रम पुराना नहीं हुआ, जिसको वास्तविक रूप देने के लिए आपको अधिक कठिनाइयां उठानी पड़ीं ।

मुझे विश्वास है कि अगर समस्त सिक्ख लोग उसी मार्ग पर , जो गुरुजी ने उनको दिखाया था, चल पड़ें तो हिंदुस्तान के स्वतंत्रता संग्राम में बहुत गर्मी पैदा हो जाए और आश्चर्य नहीं कि सिक्खों की आज़माई हुई वीरता के कारण इस गरिमा शाली देश की पराधीनता की जंज़ीरे बहुत जल्दी टूट जायें ।

(सतयुग पत्रिका माघ संवत 1985)

भारतीय स्वतन्त्रता के पुजारी
"नेता सुभाष चन्द्र बोस" जी का कथन

"गुरु राम सिंह जी के स्थापित किये हुए आज़ादी के झंडे के नीचे नामधारीयों ने जो कुर्बानियां की हैं, हमारे देशवासियों को उन पर सदा गौरव रहेगा । अब फिर भारतवासियों के देश प्यार की परीक्षा होने वाली है। पौनी सदी से शान्तिमय असहयोग आन्दोलन का अनुभव रखने वाले नामधारी सिक्खों से यह आशा की जाती है कि वे आजादी का झंडा उठा कर सारे देश के आगे चलते हुए दिखाई देते रहेंगे और दूसरे देशवासियों को भी बलिदान देने के लिए उत्साहित करते रहेंगे ।"

(सतयुग माघ संवत 1994, श्री भैणी साहिब।)

जगत्-प्रसिद्ध नेता श्री जवाहरलाल नेहरू का एक भाषण

(नामधारी केन्द्र श्री भैणी साहिब की प्रथम यात्रा के समय)

श्री गुरु जी, बहनों और भाइयों,

'बहुत दिन हुए मैंने इतिहास में नामधारी पंथ और उनके गुरु राम सिंह जी के कुछ सँदर्भ पढ़े थे। आप लोगों की देश के लिए की गई कुर्बानियों के हाल पढ़ कर मेरे दिल पर गहरा प्रभाव पड़ा और मुझको इससे बड़ी दिलचस्पी हो गई। यहाँ आने के लिए पहले भी कई बार मेरी इच्छा हुई, मगर कोई अवसर न हाथ आया । अब लुधियाना में इस कॉन्फ्रेंस में आने का अवसर मिला, तो इस वीर भूमि के भी दर्शन हो गए। इस समय भी एक भारी विघन आ खड़ा हुआ था। आज ही मुझे दिल्ली से एक तार मिला, जिसमें मुझे दिल्ली पहुँचने का संदेश था और वह संदेश भी ऐसा जिसको मैं टाल नहीं सकता था। मगर प्रेम भरी श्रद्धा के कारण मैंने उसको टाल दिया। अगर मैं इस भूमि पर न आ सकता तो मुझे बहुत दुख होता। आप लोगों की कृपा है, जो मुझे भी ऐसे स्थान के दर्शन करने का सौभाग्य हुआ ।

मैने काफी दुनियां देखी है। कई रंगों वाले, कई भेषों वाले और अलग अलग भाषाएं बोलने वाले लोग देखे हैं। पुराने और नये ज़माने के हालात पढ़े हैं और आजकल के समय के हालात भी देखे हैं। मगर आज मुझे हिन्दुस्तान की एक नई ही शक्ल दिखाई पड़ी है। जिसको देखकर मुझे बड़ी ही उम्मीद और खुशी हुई है । अपने देश में भी पेशावर से लेकर लंका तक घूमा हूँ। हमारे देश में भी लोग भांति-भांति के भेष पहनते हैं और अलग अलग भाषायें बोलते हैं। मगर उनकी एकता सब जगह साफ नज़र आई है। वह यह है कि वे सब हिन्दुस्तान को अपनी जन्म भूमि समझते हैं। कई लोगों ने बहुत कोशिश की है कि हिंदुस्तान की इस एकता को मिटा दिया जाय, पर उनकी सब कोशिशें नष्ट हुई हैं।' वह लोग हमारे देश की एकता को नहीं मिटा सके । अगर हमने उस एकता को बनाये रखा, उसके मार्ग में अपने निजी स्वार्थों को न आने दिया, तो हमारा देश फिर अपनी पहली शान को प्राप्त कर लेगा। भारतीयों की भारत को अपनी मातृभूमि समझने वाली एकता को देखकर यह मालूम होता है कि हिन्दुस्तान हजारों सालों से एकता की लड़ी में बंधा रहा है। हमें चाहिये कि जहां हम अलग अलग सभ्यताओं की रक्षा करते हैं, वहाँ हम सामूहिक सभ्यता अथवा देश एकता की भी रक्षा करें । यह जानकर मुझे बहुत ही प्रसन्नता हुई है कि असहयोग और शान्ति के जिन शस्त्रों से हिंदुस्तान इस समय अपनी आज़ादी का युद्ध लड़ रहा है, उसका प्रयोग सबसे पहले आप लोगों से ही आरम्भ हुआ । इस जगह जो दृश्य मेरे देखने में आया है, मैं उसे कभी भी न भूलूँगा ।

अंत में मैं गुरु जी और नामधारी बहिनों और भाइयों का धन्यवाद करता हूँ, जिन्होंने मुझे इतना सम्मान दिया और ऐसे सुन्दर स्थान के दर्शन करवाये हैं ।

नामधारी केन्द्र श्री भैणी साहिब,
17-2-1939

भारतीय स्वतन्त्रता के निर्भीक योद्धा
"श्री के. एम. मुन्शी" का एक लेख

(अनुवादक-नाहर सिंह)

स्वर्ण युग का भैणी साहिब

एक वैदिक आश्रम, लम्बे बहुत दूर दूर तक विस्तृत हरे भरे खेत और उसके मध्य में पुराने सुन्दर वृक्षों का समूह तथा उन वृक्षों के नीचे स्वस्थ जुगाली करती हुई गौएं, मिट्टी की झोपड़ियों में लम्बी दाढ़ी वाले ऊँचे कद्दावर, हृष्ट-पुष्ट पुरुष, रूपवती स्त्रियां, खादी के कपड़े पहने हुए सीधी-साधी जाति, प्रसन्न मुख-मुद्रा, शिष्ट एवं अतिथि सत्कार के लिए तत्पर । वृक्ष-समूह के मध्य में प्रार्थना करने के लिए एक कच्ची दालान जिसकी छत फूस की बनी हुई है और जहां प्रभात काल से भगवान की स्तुति में मंत्रोच्चारण का मन्द मन्द मधुर स्वर गूंजा करता है, हवन कुंड के चारों ओर लम्बी श्वेत दाढ़िओं वाले पुजारी बैठे हुए अग्नि में घी की आहुति दिया करते हैं। हवन-कुण्ड से उठती हुई ऊंची ऊंची लपटें ऐसी प्रतीत होती है, मानों मानव-आत्मा ईश्वर की खोज करने ऊपर जा रही है ।

यह वही दृश्य है जिसकी कल्पना मैंने अपने 'लोपामुद्रा' नामक उपन्यास में अगस्त्य मुनि के वैदिक आश्रम के बारे में की थी, परन्तु यह कल्पना मैंने यहाँ आकर अपनी चर्म-चक्षुओं से प्रत्यक्ष देखी। उस दिन नवम्बर 1941 ई की पहली तारीख थी और वह आश्रम लुधियाना से केवल 16 मील की दूरी पर स्थित है। उस स्थान का नाम 'भैणी-साहब' है। यहां पर नामधारी सिखों के सतगुरु महाराज प्रताप सिंह जी निवास करते हैं।

जब में वहां पहुंचा तो चांदनी रात थी। कल्पना सत्य में परिणत हो गई थी। मैं सहसा विश्वास न कर सका कि इस बीसवीं शताब्दी में वैदिक काल की सुरम्य रात्रि के सदृश एक ऐसा शांत विश्राम-स्थल पंजाब में हो

सकता है।

गुरु जी का अद्भुत व्यक्तित्व है, शरीर पर श्वेत निर्मल खादी के वस्त्र थे, गले में उज्ज्वल ऊन की माला थी, उन्हें देखकर ऐसा लगता था मानों ऋग्वेद संहिता का कोई ऋषि प्रकट हो गया है। उनकी मुख-मुद्रा गंभीर एवं होंठों पर मुस्कुराहट की ऐसी छवि शोभायमान थी जो दूसरे को अनायास ही आनंद देती थी । समाज सेवा की भावना उनकी मुख-मुद्रा से स्पष्ट रूप से दिखाई दे रही थी । वे सात लाख नाम धारियों पर निरंकुश राज्य करते हैं। उनके बचन उस जाति के लोगों के लिए ब्रह्म-वाक्य के सदृश होते हैं। उस जाति के लोग न्यायालयों में नहीं जाते, अपितु गुरु जी के निर्णय ही उन्हें शिरोधार्य होते हैं ।

गुरु जी शिष्टता एवं सौम्यता की साक्षात-मूर्ति है। उनकी भद्रता में आधुनिक काल की कृत्रिमता नहीं दिखाई देती, अपितु कुछ आंतरिक शुद्धता एवं स्वाभाविकता की झलक आती है; जो केवल हमारे सभ्य पूर्वजों में ही दृष्टिगोचर होती है। उनकी शिष्टता के सम्मुख आधुनिक सभ्यता अधूरी एवं नग्न दिखाई देती है । शिष्टता तो उनके स्वभाव में ही जान पड़ती है। वे संगीत एवं काव्य में भी दक्ष हैं । यही नहीं घोड़ों और गायों के भी विशेषज्ञ हैं तथा वे राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं के विषय में भी बहुत कुछ ज्ञान रखते हैं।

उन्होंने हमारा स्वागत ईंटों की बनी हुई एक झोपड़ी में किया, जिसमें शीशे के दरवाज़े थे और जो कदाचित् हम जैसे आधुनिक व्यक्तियों की सुविधा के लिए गुरु जी ने बनवाई थी। उन्होंने मेरा परिचय अपने दो नवयुवा पुत्रों से कराया। वे स्वस्थ तथा सुन्दर थे और जिनसे भविष्य में नामधारियों पर शासन करने की आसा की जा सकती थी। मैं उनके एक प्रमुख शिष्य से मिला, जिसका कद ऊंचा, कंधे चौड़े और दाढ़ी लम्बी तथा काली थी तथा जिसके सम्मुख अन्य व्यक्ति बौने दिखाई देते थे। उन्होंने मुझसे धारावाहिक अंग्रेज़ी में ईश्वर और गुरु तथा गुरुमंत्र की अद्भुत शक्ति के विषय में बातें की। वे रावलपिंडी के एक ठेकेदार थे, लखपति थे, परन्तु उन्होंने स्वयं को गुरु के चरणों में पूर्णतया: समर्पित कर दिया था । उनकी पत्नी और वे स्वयं दोनों

अनन्य गुरु-भक्त थे और उन लोगों ने अपने जीवन का लक्ष्य शेष समय में इष्ट मित्रों के घर जाकर भजन-कीर्तन करना बना लिया था ।

भोजन करने के लिए हमें गुरु जी स्वयं ले गए, और उन्होंने हमसे इस बात की क्षमा मांगी कि अस्वस्थ होने के कारण उनकी माता भोजन परोसने के लिए उपस्थित न हो सकीं। भोजन परोसने वालों में उनके दोनों पुत्र भी थे। गुरु जी एक स्थायी सदाव्रत, जिसे लंगर कहते हैं, चलाते हैं। कोई भी क्यों न हो, जो वहां आता है, उसे भोजन कराया जाता है। गुरु जी ने हमें बताया कि यह उनके गुरु जी की आज्ञा थी। यह स्थायी सदाव्रत गुरु राम सिंह जी ने सन् 1857 तथा सम्वत् 1914 में आरंभ किया था, जो उस समय से लगातार आज तक चलता आ रहा है। (सम्पादक)

मैंने छः सात लाख शक्तिशाली नामधारियों के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त की। उनका विश्वास है कि गुरुओं की परंपरा दसवें गुरु गोविन्द सिंह जी के साथ समाप्त नहीं हो गई, जैसा कि अधिकतर सिक्खों का विश्वास है, अपितु अब भी विद्यमान है। उनके मतानुसार सदगुरू प्रताप सिंह चौदहवें गुरु हैं। नामधारी मांस-शराब नहीं खाते पीते और न कृपाण धारण करते हैं। वे अपने वस्त्र स्वयं कातते और बुनते हैं तथा न्यायालय में कभी नहीं जाते । भूतकाल में वर्षों तक उनकी अपनी निजी असहयोग की योजना थी। आपस में पत्र-व्यवहार करने के लिए नामधारियों का अपना ही बनाया हुआ डाक-प्रबन्ध था । उनके रहने सहने का ढंग अपना निराला था ।

मैंने बारहवें गुरु की कहानी सुनी और उन लोगों ने मुझे वे स्थल दिखाये जहां उस हुतात्मा (शहीद) की स्मृति अब भी नित्य नवीन है। लगभग 1872 ई. में अंग्रेजों ने बारहवें गुरु राम सिंह जी महाराज पर यह संदेह किया था कि वे अंग्रेज़ी राज्य को ध्वंस कर देने का उपाय कर रहे हैं। वे एक शक्तिशाली जाति के धार्मिक नेता थे, उन्होंने विदेशी शासकों के सम्मुख घुटने टेकने से इन्कार कर दिया था, अतः उन पर संदेह करना स्वाभाविक था। पुलिस ने भैणी साहब पर छापा मारकर गुरु राम सिंह जी को पकड़ लिया। बंदी बनाकर उन्हें पहले रंगून ले गए, उसके पश्चात् बर्मा के मरगोई नामक

स्थान पर ले जाकर रखा ।

मैंने पूर्ववर्ती गुरु की गद्दी के नीचे का वह भाग भी देखा जिसे अधिकारियों ने कई बार देखने के लिए खुदवाया था कि वहां अस्त्र-शस्त्र छिपाकर तो नहीं रखे गए हैं। मैंने वह अंधेरा रसोई घर भी देखा जिसके गुंबद के नीचे गुरु ग्रंथ साहिब पढ़ने के लिए नामधारी सिक्खों ने अपने आप को छिपाया था, जब कि गुरु जी पकड़े गए थे और घर की तलाशी हुई थी ।

नामधारीयों का विश्वास है कि बारहवें गुरु अब भी जीवित हैं। कुछ भी हो, नाम धारियों के हृदय में वे अब भी वास करते हैं । यह कहा जाता है कि जब गुरु राम सिंह जी को पकड़ा गया था तब उनके शिष्य तलवारों से पुलिस का सामना करने के लिए तैयार थे, परन्तु गुरु जी ने बीच-बचाव किया और कहा- "जो तलवार का प्रयोग करेंगे, वे स्वयं नष्ट हो जाएंगे।"

मुझे नामधारियों की एक वीरता-पूर्ण भावना की कहानी सुनाई गई। वह थी गोरक्षा की, जो सिक्खों के सिद्धान्तों का केन्द्र-बिन्दु है । एक बार कुछ नामधारियों ने एक ऐसे मनुष्य का पीछा किया जिसने सरकारी अधिकारी के रूप में एक बैल को जानबूझ कर एक नामधारी के सामने कटवा डाला था। आपस की लड़ाई में 7 नामधारी और 8 सरकारी सिपाही मरे ।

"अंग्रेज अधिकारियों की आँखों में नामधारी पहले से ही विदेशी साम्राज्य के शत्रु माने जाते थे। उन्होंने इस घटना की ओट लेकर देश स्वतंत्रता प्राप्ति हित चलाये गए नामधारी आन्दोलन का गला घोंटना चाहा । 17 और 18 जनवरी सन् 1872 को मलेरकोटला के स्थान पर डिप्टी कमिश्नर मिस्टर कावन और कमिश्नर टी. डी. फोरसाईथ के आदेश अनुसार 66 नामधारियों को बिना किसी प्रकार के मुकदमे चलाये जनता के सामने खुले मैदान में पटियाला, नाभा और जींद के सिक्ख राजाओं की सहमति और उनकी फौजों की सहायता से तोपों से उड़ा दिया गया। (संपादक)

नामधारी शहीदों में एक छोटे कद का मनुष्य भी था, जिसे अधिकारी वर्ग छोड़ देना चाहते थे, परन्तु उसने इस बात पर बहुत जोर दिया कि उसे भी अपने साथियों वाली सजा देनी ही चाहिए। अधिकारी ने कहा अभी तुम

बहुत छोटे हो और तोप के मुंह तक भी नहीं पहुंच पाते, परंतु उसका निश्चय अटल रहा । वह थोड़े से ईट पत्थर चुन लाया और एक के ऊपर दूसरा इस प्रकार रखा कि वह उस पर खड़े होकर तोप के मुंह तक पहुंच सके। अंत में उसी की बात रखनी पड़ी और उसे तोप से उड़ा दिया गया ।

मैंने पूज्या वृद्धा माता जीवन कौर को भी श्रद्धांजलि अर्पित की। 1872 ई. में उन पर विपत्ति आई, उसके पश्चात् उनको तीन मास तक लगातार सशस्त्र पुलिस के घेरे में नंगे पैरों पैदल चलाया गया था। उन्होंने अपने घर के वैभव को लुटते हुए स्वयं अपनी आंखों से देखा था। उन्होंने अपने शिशु (पुत्र) का पालन-पोषण किया था और उसे उसी उच्च पदवी के योग्य शिक्षा दी थी, जिसके वह अधिकारी थे । उन्हें भूखा भी रहना पड़ा, दीनता का मुख भी देखना पड़ा । लगातार पचास वर्षों तक उनके द्वार पर पुलिस उन्हें तंग करती रहती थी। उस निस्सहाय अवस्था में उनकी वीरतापूर्ण आत्मा में, उस व्यवहार के लिए जो उनके घर और व्यक्तियों के साथ किया गया था, विद्रोह की भावना जागृत हो गई थी।

तदुपरान्त, वर्ष पर वर्ष बीतते गए। सरकार ढीली पड़ गई और दण्ड देने वाली पुलिस भी वहां नहीं रही। अब वे प्रतिदिन गुरु ग्रन्थ साहिब जी का पाठ भय रहित होता हुआ देखती हैं। जो लोग नामधारी दरबार में पूजा के लिए प्रतिदिन आते हैं, उनकी वे सेवा करती हैं । परम्परा के अनुसार वे अपने पुत्र को भी अपने पद पर उन्नत होते हुए देखती हैं जो अपनी साधुता एवं शिष्टता से लोगों को अपनी ओर आर्किषत करते हुए अपने पद की प्रतिष्ठा को बनाए हुए हैं। वे एक सुखी माता है।

जब उन्होंने अपनी आंखों से जो बड़ी अवस्था के कारण धुंधली हो गई थी, मुझे देखा तो उन्होंने इस बात पर दुख प्रकट किया कि पिछली रात को वे स्वयं भोजन परोसने ना जा सकीं, क्योंकि वे अस्वस्थ थीं। मैंने अपने सम्मुख खड़ी हुई उस छोटी सी मूर्ति में एक महान नारी के दर्शन किए जिसने जीवन में बड़ा संघर्ष किया था और उसमें विजय प्राप्त कर ली थी। गुरु प्रताप सिंह जी ने स्वाभाविक भाषा में मुझसे कहा- "मैं आज जो कुछ भी हूँ, उसका

श्रेय इन्हीं को है।"

उस रात में उसी ईंटों की बनी हुई, शीशों के दरवाज़ों वाली झोंपड़ी में ही रहा। शरद्-पूर्णिमा की ज्योत्सना खेतों पर बिखरी हुई थी। वृक्षों की फुनगियों को छूती हुई मन्द मन्द समीर बह रही थी । रात्रि की उस निजनता में मैं निकल पड़ा-दूर तक विस्तृत सौन्दर्य का प्रभाव मुझ पर पड़ा और मैंने अनुभव किया कि यह स्थान मशीन के सदृश चलते हुए सांसारिक संघर्षों से दूर है , अछूता है और यहां यह शांति है, जिसके लिए ऋषिगण लालायित रहते थे और उसे प्राप्त भी कर लेते थे । जब तक भारत-भूमि पर ऐसे स्थल रहेंगे, यह सौंदर्य की वस्तु रहेगी। क्या ही अच्छा होता कि मैं कुछ दिन यहां ठहर सकता, परन्तु यह संभव नहीं था।

दूसरे दिन गुरु जी ने प्रातः चार बजे से ही अपनी प्रार्थना प्रारम्भ कर दी जो पुरातन काल में ऋषि मुनियों के लिए पवित्र समय था। मैं तनिक विलम्ब से उठा और प्रार्थना में सम्मिलित हो गया । साधारण ईंटों के बने हुए उस विशाल प्रार्थना-भवन में भक्ति के भजन गाये जा रहे थे। गुरु ग्रंथ साहिब जी के पद्यों का पाठ किया जा रहा था। इस झुटपुटे में खादी धारण किए हुए नर तथा नारियां उस प्रार्थना-भवन में बैठे हुए थे। उनकी आत्माएं भक्ति संगीत से प्रभावित हो पवित्र हो रही थी और उससे भी अधिक भगवान की उस भक्ति भावना से पवित्र हो रहे थे जिससे वे ओत-प्रोत थे ।

प्रार्थना समाप्त हुई । गुरु जी के दोनों पुत्रों ने हमें और भी अधिक भक्ति संगीत का रसास्वादन कराया। समय शीघ्रता से व्यतीत होता जा रहा था। मैंने गुरुजी को अन्तिम नमस्कार किया और भारी हृदय लिए हुए लौट आया। मानव ऐसे सुन्दर स्थलों को-जहां प्रकृति और परमेश्वर का सामीप्य होता है-छोड़कर क्यों इस चरित्र से दिवालिया संसार में आकर संघर्ष को आमंत्रित करता है ?

(4 दिसम्बर 1941 की समाज-सुधार पत्रिका से उद्धृत)

नोट-इस समय वह ज्वर ग्रस्त भी रहीं ।

दो शब्द

जगत प्रसिद्ध पुस्तक "एनसाइक्लोपीडिया ब्रीटेनीका" में लेखक ने कूकों अथवा नामधारियों के विषय में यह दो-चार बातें विशेष रूप से लिखी हैं- "कूके श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के कट्टर अनुयायी हैं। कूके अंग्रेज़ी शासन के शत्रु हैं । 19वीं शताब्दी में जब सिक्ख जनता तथा सिक्ख सम्प्रदाय अपने धार्मिक नियमों से दूर जा रहे थे तो कूके अपने उच्च सिद्धान्तों पर पूर्ण रूप से दृढ़ रहे, यद्यपि उनकी संख्या कम हो गई ।"

आगे चलकर लेखक मलेरकोटला की खूनी दुर्घटना का वर्णन करता हुआ लिखता है कि "यदि कूकों के साथ इतनी कड़ाई का बर्ताव न किया गया होता तो संभव था कि अंत में रक्तपात होता ।"

(शिकागो विश्वविद्यालय संस्करण सन् 1946 पुस्तक 20 पृष्ठ 648) यह भाव एक निष्पक्ष , दूर बैठे, साम्प्रदायिक ईर्ष्या रहित लेखक ने कूकों के विषय में संसार को शिक्षित व समझदार जनता के सामने प्रस्तुत किये हैं। सम्पूर्ण निबंध में यद्यपि कई प्रकार की भूलें तथा त्रुटियां हैं, परन्तु लेखक ने प्राप्त इतिहास-सामग्री का सम्यक् प्रयोग किया है।

भारतीय जनता की ओर से विदेशी साम्राज्य के विरुद्ध सन् 1857 के स्वतंत्रताहित संग्राम के पश्चात्, नामधारी सिक्ख विदेशी आंगल शासन के कट्टरतम शत्रुओं की पंक्ति में सबसे आगे थे। खुले रूप में खोटे ग्राम के मेले सन् 1863 से लेकर 14 अगस्त 1947 तक भारतीय स्वतंत्रता के दीवाने नामधारी सिक्खों ने 83 साल अपने इस स्थान की कठिनाइयां झेलकर व बलिदान देकर कायम रक्खा । अंग्रेज़ी शासन के भारतीय और विदेशी कर्मचारियों ने, अंग्रेज़ शासकों के जूठे टुकड़ों पर पलने वाले हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान, ईसाई, टोडियों तथा पदलोलुप सिक्ख रियासतों के राजाओं ने, अंग्रेज़ी शासकों की आर्थिक सहायता पर निर्भर सिंह सभाओं तथा सिक्ख ऐतिहासिक गुरुद्वारों में सरकारी तौर पर बने हुए महन्तों और पुजारियों ने कूकों का सर्वनाश करने के लिए हर प्रकार के हथकन्डे, ओछे आरोप, झूठी

बदनामी आदि निकृष्ट प्रचारों का प्रयोग किया। परन्तु कूकों ने 84 साल के लम्बे समय में पराधीनता में सोयीं हुई बेहोश भारतीय जनता को 'होशियार व सावधान' रखकर आध्यात्मिक पहरेदारों के कड़े कर्तव्य को निभाया।

आज भारत को स्वतंत्र हुए नौ वर्ष हो चुके हैं। मातृभूमि की स्वतंत्रता के दीवाने कूके, विदेशी-शासन की ओर से लगाये गए मारक, घावों, तथा घावों से बिगड़कर बने नासूरों को स्वयं ठीक करने में लगे हुए हैं। उनके लिये विदेशी शासन की अधीनता महापाप था। इस महापाप से मुक्त होने के लिये कड़े से कड़े राजदंड सहना , वह ईश्वर भक्ति का आवश्यक अंग समझते थे। कूकों का उद्देश्य अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र कराना था। शासन में अपना भाग प्राप्त करना उनका लक्ष्य नहीं था। साम्प्रदायिकता की संकुचित भावनाओं से वे सदैव ऊपर रहे और आज भी हैं।

यह एक ऐतिहासिक सच्चाई है कि 60 वर्ष के समय में किसी नामधारी ने धन और पद के लोभ में आकर अंग्रेज़ों को किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया। भारत के किसी अन्य राजनैतिक या धार्मिक तथा समाज-सुधारक दल को ऐसा ऊँचा पद प्राप्त नहीं। इतिहास इस बात का साक्षी है, कि जब कभी भी अंग्रेज़ शासकों ने भिक्षा देने के लिए हाथ आगे बढ़ाया, तभी ऐसे दलों के नेता जनता को दलित छोड़कर अंग्रेज़ों की दी हुई कुर्सी पर जा बिराजे । शासन की मृदु सुरा में मस्त होकर अंग्रेज़ों से भी बढ़कर शासन के शुभचिंतक हो गये तथा स्वतंत्रता आन्दोलनों के गले काटते रहे । नामधारी प्रसन्न हैं कि भारत विदेशी शासन की पराधीनता से मुक्त हो गया है। उनकी प्रसन्नता उस सेनानी की सच्ची प्रसन्नता है, जो अपने प्रिय देश और प्रिय राष्ट्र के बाहरी तथा आंतरिक शत्रुओं से सैंकड़ों घाव खाकर, उनके सम्मुख लड़ता हुआ कुरुक्षेत्र में यह सुन ले, कि उसके देश को विजय प्राप्त हुई है।

नामधारियों ने आज से 100 वर्ष पूर्व अंग्रेजों को देश से निकालने के लिये, उनके शासन से हर प्रकार का असहयोग करने, खादी पहनने, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करने का प्रण किया तथा अन्त तक इन प्रतिज्ञाओं

को धर्म जानकर निभाया। आज भी ठीक अर्थों में केवल नामधारी समाज में ही शुद्ध खादी तथा स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग धर्म का अंग समझ कर किया जाता है ।

भारतीय जनता के स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये अंग्रेज़ी साम्राज्य के विरुद्ध किये गये संघर्ष का इतिहास लिखा जा रहा है। प्रत्येक प्रदेश में ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित करने के लिये कमेटियां बनाई गई हैं जो इस सम्बन्ध में अच्छा काम कर रही हैं। इस इतिहास में नामधारी संप्रदाय तथा उसके आंदोलन का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है। इस आंदोलन को ऐतिहासिक सामग्री मुद्रित तथा अनमुद्रित पुस्तकें, वृद्धों की गोष्ठियां, कूकों के विरुद्ध मुकदमों की फाइलें, अंग्रेज़ शासकों के आदेश, सिक्ख राजाओं के फरमान, इस आन्दोलन से सम्बन्धित स्थान, कोटले का बध-गृह, शेरपुर की गढ़ी, मलौद का किला, रब्बों का कुआँ, रामबाग अमृतसर का बटवृक्ष , रायकोट में फांसी वाला स्थान, इलाहाबाद का किला, रंगून में नजरबन्दी वाली कोठरी तथा मरगोई का बन्दीखाना आदि हैं। प्रत्येक इतिहास प्रेमी तथा देशभक्त सेवक का कर्तव्य है कि वह इस सामग्री को एकत्र करने में सहायता दे ।

17 तथा 18 जनवरी 1872 अथवा आज से 84 वर्ष पूर्व मलेरकोटला के स्थान पर 66 नामधारी भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह करने के अपराध में खुले मैदान में जनता के सामने तोपों से उड़ाये गये । अंग्रेज़ों का राज्य था, सिक्ख राजे-महाराजे उनके आज्ञाकारी सेवक तथा अनन्य दास बने हुए थे। किसी की क्या मजाल थी कि इन राष्ट्रीय पतंगों की बिखरी हड्डियों वाले स्थान पर जाकर दो मूक अश्रू भी गिरा सकता।

नील नभ की छत के नीचे पड़ी इन शहीदों की हड्डियां देश-सेवा के पथिकों को आवाजें दिया करती थीं ।

इस घटनास्थल के आस-पास के गाँवों में यह किंवदन्ती चली आती है कि शान्त रातों में शहीद कूकों के जय-नांद और खड़तालों के साथ शब्द पढ़ने की आवाजें अब तक सुनाई पड़ती हैं। यद्यपि लेखक तथा इतिहासकारों के लिये यह केवल मनोकल्पित भ्रम ही है, परन्तु इससे आम जनता के हृदयों

पर पड़े हुए प्रभावों का अनुमान हो सकता है।

भारत को स्वतंत्रता मिलने के पश्चात्, आठवें वर्ष में 17 तथा 18 जनवरी 1955 को नामधारियों ने गुरु प्रताप सिंह जी महाराज के नेतृत्व में एकत्रित होकर देशभक्त शहीदों के रक्त से सिंचित पवित्र हुई भूमि पर पहली बार शब्दवाणी का अखंड कीर्तन करते हुए बलिदान दिवस मनाया ।

नाहर सिंह, एम. ए
20 जुलाई 1955

❋

कुछ और

अंग्रेज़ शासकों ने नामधारी आंदोलन को दबाने के लिये इस प्रकार के कष्ट दिये, जिनके उदाहरण भारत के किसी अन्य राजनैतिक दल के इतिहास में नहीं मिलते । गुरु राम सिंह जी और उनके प्रसिद्ध सूबों तथा धर्म अधिकारियों को देश निकाला दिया गया। सन् 1872 ई. से 1923 तक 51 साल पुलिस की चौकी नामधारी केन्द्र भैणी साहिब में गुरु हरी सिंह जी तथा उनके पश्चात् गुरु प्रताप सिंह जी के निवास स्थान की ड्योढ़ी के सामने पहरा देती रही। भीतर से बाहर तथा बाहर से भीतर जाने आने वाले प्रत्येक स्त्री-पुरुष की तलाशी ली जाती थी। गुरु के परिवार के प्रत्येक प्राणी तथा गुरुद्वारे में रहने वाले सिक्ख सेवक स्त्री पुरुष को भैणी साहिब से बाहर जाते समय सरकार से आज्ञा-पत्र की मांग करनी पड़ती थी और दोनों जगह के थानों में आने-जाने की सूचना देनी पड़ती थी। नामधारियों के दीवानों, उत्सवों, श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पाठ की समाप्ति के समागमों, विवाह-कार्यों के समय, सम्मेलनों आदि पर 50 साल कड़े प्रतिबंध लगे रहे। संयोग-वश यदि कहीं पांच नामधारी एकत्रित हो जाते तो पकड़ लिए जाते । उन्हें सरकार की ओर से दंड दिये जाते और उन पर जुर्माने होते ।

इस पचास साल के समय में सहस्रों नामधारियों को तुच्छ अपराधों के बदले जेल के दंड दिये गए तथा उनकी सम्पूर्ण धन-सम्पत्ति और ज़मीनें कुर्क और नीलाम कर दी गईं ।

पंजाब में और सिक्ख रियासतों में रहने वाले नामधारी, जरायम पेशा जातियों की भांति अपने अपने गांवों में सीमाबद्ध थे। नम्बरदारों और चौकीदारों को कड़ी हिदायतें थीं कि वे सरकार को नामधारियों के विषय में हर प्रकार की सूचनायें तत्काल दें। हठी नामधारियों ने धैर्य, और ईश्वरीय कृपा के आधार पर रहकर भजन बंदगी के प्रताप से विदेशी शासन के विरुद्ध सन् 1857 में प्रज्वलित की गई स्वतंत्रता की ज्योति को प्रकाशमान् बनाये रखा है।

भारतीय नेशनल कांग्रेस ने सन् 1921 में गांधी जी के नेतृत्व में अंग्रेज़ों के विरुद्ध असहयोग आन्दोलन चलाया। इसका कार्यक्रम हाथ से काते- बुने खादी के कपड़े पहनना, खान, पान, पहनावे में सादा रहना और स्कूलों, कॉलेजों, अदालतों आदि का बहिष्कार करना था। उसको नामधारियों ने हृदय से अपना लिया। जलियाँवाले बाग के हत्याकाण्ड के पश्चात् और पंजाब में अंग्रेज़ शासकों की ओर से मार्शल ला लगाये जाने पर नामधारियों ने पंजाब कांग्रेस का प्रसिद्ध सम्मेलन ऐतिहासिक गांव मुठड्डा ज़िला जालन्धर में करवाया। इस सम्मेलन में डॉक्टर किचलू, डॉक्टर सत्यपाल, मौलाना अब्दुल कादिर कसूरवाले, मौलवी हबीब उल रहमान लुधियाने वाले आदि निडर कांग्रेसी नेताओं ने भाग लिया । सम्मेलन सफल रहा और वर्तमान नामधारी गुरु प्रताप सिंह जी के दोनों छोटे भाइयों श्री गुरदयाल सिंह जी और निहाल सिंह जी के कांग्रेस में प्रविष्ट हो जाने से पंजाब में कांग्रेस पुनः जीवित हो उठी । दूसरे, कांग्रेस सम्मेलन का प्रबन्ध भी नामधारियों द्वारा ही ज़िला होशियारपुर में होना निश्चित हुआ। इससे सरकारी कर्मचारी भयभीत हो उठे और कुछ दिनों बाद ही पंजाब की सरकार ने नामधारियों के केन्द्र भैणी साहिब से पुलिस की चौकी उठा ली।

सन् 1929ई. के लाहौर कांग्रेस सम्मेलन के समय जिस आवश्यक और कठिन कार्य को नामधारियों ने उत्तरदायित्व लेकर निभाया उसे नामधारियों के बिना पंजाब में शायद ही कोई और दल निभा सकता। इस समय अंग्रेज़ शासक और उनके देशी कर्मचारी इस बात पर पूरा जोर लगा रहे थे कि कोई भी सिक्ख प्राणी इस सम्मेलन में भाग न ले सके। बाबा खड़क सिंह, मास्टर तारा सिंह तथा उस समय के अकाली नेता इस सम्मेलन में भाग लेनेवाले सिक्खों को पतित, काफिर तथा अधर्मी होने के हुक्मनामे अथवा फतवे दे चुके थे, परन्तु स्वतंत्रता के परवाने नामधारियों ने इस सम्मेलन में निर्भय होकर पूरा-पूरा भाग लिया। उन्होंने ऐसा प्रबन्ध किया कि जिसको देखकर राज्य कर्मचारी और जनता अचम्भे में पड़ गए। जब सम्मेलन के प्रधान श्री जवाहरलाल जी का जलूस निकलने लगा तो क्षण भर में 100

शुद्ध खादी के वस्त्रों वाले घुड़सवार नामधारी जलूस का नेतृत्व करने के लिए उपस्थित हो गए । नामधारियों का यह कारनामा उनकी देशभक्ति का अद्वितीय उदाहरण था । सहस्त्रों नामधारियों ने सम्मेलन में भाग लिया। उन्होंने अपनी ओर से पंडाल में भोजन दर्शकों में मुफ्त बांटा। पूर्ण स्वराज्य के प्रस्ताव का खुले दिल से समर्थन किया। भारत माता को विदेशी शासकों के पंजे से निकालने के लिए कांग्रेसी नेताओं को तन, मन, धन से बलिदान होने के वचन दिये । अंग्रेज़ी साम्राज्य के समय यथार्थ नामधारी इतिहास लिखना विदेशी हाकिमों द्वारा किये गए अन्याय और अत्याचारों का नग्न चित्र जनता के सामने उपस्थित करना था। इसको अंग्रेज़ी शासक कभी सहन न कर सकते थे। सरकारी दफ्तरों में ऐतिहासिक सामग्री पड़ी हुई थी, परन्तु किसी इतिहासकार ने इसको देखने, खोजने तथा सच्ची बात लिखने का साहस न किया । नामधारी लेखकों ने परिचित सज्जनों से सुनकर वृतान्त संकलित किये। इस अप्रकाशित पुस्तक का नाम 'सतगुरु विलास' है। इसके संकलनकर्ता संत संतोख सिंह जी ने वही शब्द प्रयोग किए हैं जो सुनाने वालों ने उन्हें सुनाये । ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह पुस्तक बहुत अमूल्य है।

नामधारी इतिहास तब तक पूर्ण नहीं हो सकता जब तक सरकारी दफ्तरों में पड़ी सामग्री तथा नामधारी लेखकों के लेखों को शुद्ध ऐतिहासिक दृष्टिकोण से पढ़ा तथा खोजा न जाय । सरकारी दस्तावेज में पर्याप्त जानकारी मिलती है, परन्तु इन्हीं दस्तावेज के आधार पर ठीक इतिहास नहीं लिखा जा सकता। इन मिसलों को तैयार करने वाले अंग्रेज़ शासक नामधारियों की सम्पूर्ण संस्था को हकूमत के विरूद्ध विद्रोही सम्प्रदाय समझते थे। लेखक को नामधारियों के विषय में सरकारी दफ्तरों में सुरक्षित रखे हुए कागजों, मिसलों आदि को पढ़ने और देखने का अवसर मिला है। इसके अतिरिक्त लेखक को नामधारी लेखकों की पुस्तकें भी मिल गई थीं। लेखक ने अभी तक नामधारियों के विषय में सिक्ख रियासतों में पड़े हुए पुराने कागज तथा मिसलों को नहीं देखा है ।

ऐतिहासिक खोज की किसी पुस्तक को भी पूर्ण रूप से सम्पन्न नहीं कहा जा सकता । ज्यों-ज्यों नई सामग्री मिलती जाती है, इतिहास में वृद्धि होती रहती है। लेखक को निःसंदेह ही पहले एक-दो लेखकों से अधिक मात्रा में सामग्री मिली है। इन लेखकों ने नामधारी इतिहास को सन् 1872 ई. तक लिख कर समाप्त कर दिया है। इनमें से एक विद्वान लेखक ने अधूरी सरकारी रिपोर्टों को लापरवाही से पढ़ कर विचार-विमर्श किए बिना घटनाओं की तिथियों में एक एक साल का अंतर डाल दिया है । इसी प्रकार घटनाओं का उल्लेख करने में भी पर्याप्त त्रुटियाँ की हैं और कई स्थानों पर निजी ईर्षा भी प्रकट की है। द्वितीय संस्करणों में भी भूलों तथा अशुद्धियों को सुधारने का प्रयत्न नहीं किया।

इस पुस्तक के लिखने तथा प्रकाशित करने में लेखक को बहुत से सज्जनों ने सहायता दी है। सर्वप्रथम लेखक सरदार सुरजीत सिंह जी साहिब मजीठिया उप रक्षा मंत्री भारत सरकार का हार्दिक धन्यवाद करता है, जिन्होंने लेखक को अपना व्यक्तिगत सेवक होते हुए भी इतिहास लिखने के लिए बड़ी सुविधाएं दी हैं। श्रीमान् लाला फिरोज चंद्र जी ने लेखक को इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा दी। यह पुस्तक कभी भी इस रूप में न लिखी जाती यदि वर्तमान समय के नामधारी नेता सतगुरु प्रताप सिंह जी महाराज अपने पुस्तकालय की सम्पूर्ण प्रकाशित तथा अप्रकाशित पुस्तकें बिना किसी शर्त के लेखक को प्रदान न कर देते । अप्रकाशित पुस्तकों में विशेष रूप से 'सतगुरु विलास' के लिए लेखक उनका अत्यंत आभारी है। इसके अतिरिक्त आपके दोनों सुपुत्र बाबा जगजीत सिंह जी और बाबा बीर सिंह जी भी सामग्री एकत्रित करने में सहायता देते रहे हैं।

मेरे परम मित्र सरदार तेजा सिंह जी नामधारी, सदस्य लेजिस्लेटिव कौंसिल, पंजाब ने कई वर्षों के परिश्रम से एकत्रित की हुई सम्पूर्ण ऐतिहासिक सामग्री लेखक के सुपुर्द कर दी। लेखक आपका अति कृतज्ञ है । भाई गुरुदेव सिंह जी नामों तथा ऐतिहासिक स्थानों को खोज करने में बड़ी सहायता करते रहे हैं। सरदार सुच्चा सिंह जी सोखी , लेखक को इस पुस्तक

के आरम्भ से लेकर पाठकों के हाथों तक पहुंचाने में सहायता देते रहे हैं। लेखक उनका हार्दिक धन्यवाद करता है।

नामधारी इतिहास के द्वितीय भाग में सन् 1872 से 1923 तक की घटनाओं का वर्णन किया जायेगा। तीसरे भाग में पिछले 32 साल का नामधारी इतिहास होगा । जिन उच्च तथा सुन्दर सिद्धान्तों का प्रमाण नामधारियों ने 1947 में संसार के सामने उपस्थित किया उसका उदाहरण पंजाब के समकालीन इतिहास में कहीं नहीं मिलता। पश्चिमी पाकिस्तान में अगर मुस्लिम लीगियों ने धर्म के नाम पर हिन्दुओं और सिक्खों को जान से मारने, उनका धन-धान्य लूटने तथा बहू-बेटियों को हरने, नग्न स्त्रियों के जलूस निकालने, बच्चों तथा वृद्धों को मारने काटने में तैमूर तथा चंगेज खां को मात कर दिया था तो दूसरी ओर पंजाब की सिक्ख रियासतों, भरतपुर तथा अलवर की रियासतों में राष्ट्रीय स्वयं संधियों, हिन्दू महासभाइयों, अकाली जत्थों के सदस्यों, इन्डियन नेशनल आरमी के कुछ अवकाश प्राप्त अफसरों, कांग्रेस कमेटियों के बहुत से पदाधिकारियों तथा कार्यकर्ताओं ने मुसलमानों को मार डालने तथा उनका धन-धान्य छीनने, निहत्थे बच्चों, वृद्धों को मारने, निर्बल निःस्सहाय स्त्रियों को नग्न कर जुलूस निकालने और जबरदस्ती अपने घरों में रखकर अत्याचार करने में अपनी शूरता दिखाई। पंजाब के विनाश की इस दुर्घटना को याद करके धर्म और मनुष्यता दोनों भविष्य में सहस्त्रों वर्ष तक खून के अश्रु बहाकर प्रलाप करते रहेंगे। दोनों देशों (भारत तथा पाकिस्तान) में कहीं कहीं ऐसे उदाहरण भी पर्याप्त है जहां धर्म तथा मनुष्यता को बचाते हुए परमात्मा के अनेक अच्छे मनुष्य अपनों के ही हाथों मारे गए अथवा उनको भीषण कष्ट सहन करने पड़े।

इस अत्याचार के काले समय के वर्ग-संघर्ष में एक भी निर्धन से निर्धन नामधारी ने किसी मुसलमान की फूटी कौड़ी को हाथ न लगाया । किसी नामधारी ने अपने हाथ मुसलमानों के रक्त से नहीं रंगे । किसी नामधारी ने मुसलमानों की बहू-बेटियों की ओर आंख उठा कर नहीं देखा । वर्तमान नामधारी नेता गुरु प्रताप सिंह जी महाराज ने जगह-जगह स्वयं

जाकर तथा आज्ञापत्र भेज कर नामधारियों को धर्म तथा मनुष्यता को कलंकित करने वाले कुकर्मों से बचने के दृढ़ आदेश दे दिये थे । इन आज्ञाओं का पालन हुआ ।

इस पुस्तक में लिखित खोजों, विचारों तथा उन पर आधारित निर्णयों का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर है। इस पुस्तक के पढ़ने वाले सज्जनों से निवेदन है कि वे इसका अध्ययन करके लेखक को अपना मत लिखकर भेजने की कृपा करें। घटनाओं के विषय में अधिकतर बताने वाले सज्जनों का लेखक अति कृतज्ञ होगा । द्वितीय संस्करण में उनकी सहायता का वर्णन अवश्य किया जायेगा।

लेखक
नाहर सिंह, एम. ए
ग्राम - नंगल
डाकघर - पखोवाल
ज़िला लुधियाना (पंजाब)

सदस्य
भारतीय स्वतंत्रता
इतिहास खोज बोर्ड पंजाब प्रदेश
26 अक्टूबर, सन् 1956

नानक पन्थ और सिक्ख धर्म का प्रचार

इस संसार के मनुष्यों के सहस्रों वर्षों के क्रमिक इतिहास में अनेक उच्च व्यक्तियों ने धार्मिक तथा सामाजिक क्षेत्र में अपने विचारों के प्रचार द्वारा इतिहास के प्रवाह बदले हैं। मनुष्य समाज में बार-बार उन्नति अथवा अवनति का क्रमशः परिवर्तन होना निश्चित है। नियमों के प्रवाह में मनुष्यता का सदैव बहता हुआ वेग कई बार इन अटल जनता को नेकी और सच्चाई आदि सद्‌गुणों की ओर ले जाता है और कई बार अत्याचार अन्याय और दुर्गुणों की ओर । उच्च गुणवान् मनुष्यों ने बहुत बार विनाशक बुराइयों की ओर बहती जा रही जनता को अपने उपदेशों और सुकृत्यों तथा अपने बलिदानों की आग लगा कर भलाई की ओर चलाया है। प्राकृतिक स्वभावानुसार मनुष्य जातियां पुनः पुनः उन्हीं बुराइयों तथा निकृष्ट कर्मों की ओर रुख धारण कर लेती हैं, जिन कार्यों से उनको पूर्व महापुरुषों ने रोका था। हर युग में, हर शताब्दी में, हर जाति, देश और समाज में ऐसे मनुष्यों की आवश्यकता रहती है, जो सैनिक शक्ति वाले दमन कर्ताओं व धनी अत्याचारियों तथा शासन-रत राजनीतिज्ञों को शक्तिहीन, गरीबों, अनाथों तथा दुखी मनुष्यों की न्याय देने तथा दया और प्रेम करने के लिए निर्भीकता से कह सकें । संसार का इतिहास उक्त महान् गुणज्ञ पुरुषों के नामों से भरा पड़ा है। साथ ही पृथ्वी माता भी ऐसे भद्र पुरुषों के रक्त बिन्दुओं से रंगी पड़ी है। तत्कालीन अत्याचारियों के दमन कार्यों का मुकाबला करते हुए ऐसे शुभ गुणों वाले पुरुष शूली पर चढ़ाये गए, विष देकर मारे गए, अग्नि में जलाए गए, पर्वतों से गिराये गए, नदियों में बहाये गए, तोपों से उड़ाये गए और जेल में कष्ट दे-दे कर मारे गए । ऐसे महापुरुषों की श्रेणी में ही श्री गुरु नानकदेव जी महाराज हुए हैं। इनका जन्म एक क्षत्रिय वंश में लाहौर से पश्चिम-दक्षिण दिशा में रावी नदी से पार के प्रदेश में एक गांव "राये भोये की तलवण्डी" में बैसाख शुदी 3 संवत 1526 अथवा 15 अप्रैल सन् 1469

ई में हुआ ।

15 वीं शताब्दी संसार के इतिहास की प्रसिद्ध शताब्दी है । इस शताब्दी में धार्मिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक मण्डलों में परिवर्तन आरम्भ हुए। इन परिवर्तनों का प्रभाव संसार के हर भाग के निवासियों पर पड़ा। गुरु नानक देव जी महाराज के समय में भारतवर्ष की सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक दशा इस प्रकार की नहीं थी जैसी कि एक प्रगतिशील तथा नये परिवर्तनों के ग्रहणकर्ता अग्रगामी संगठित समाज की होनी चाहिये। पांच सौ वर्ष के समय से उत्तरी भारत पर मुसलमान बादशाहों के आक्रमण शुरू हो चुके थे। काबुल, पेशावर सवात, बनेर के हिन्दू राजाओं को पराजित करके और लाहौर को अपने अधिकार में लेकर मुसलमान बादशाह आगे बढ़े । देशद्रोही जयचंद ने देहली के अन्तिम हिन्दू महाराज पृथ्वीराज को विदेशियों के हाथों पराजित करा कर दिल्ली गद्दी भी मुसलमान बादशाहों के अधिकार में दे दी।

मुसलमानों के हाथों हिन्दू राजाओं और रजवाड़ों की हार का कारण उनके आपसी बैर और द्वेष-भाव थे। हिन्दू समाज भी उस समय जाति-पाति, छुआ-छूत और वर्ण भेद के दृढ़ बन्धनों में जकड़ा हुआ था। मुसलमान शासकों ने तलवार के बल से इस्लाम की वृद्धि आरम्भ की । साथ ही साथ मुसलमान पीरों, फकीरों, दरवेशों और विद्वानों ने मुस्लिम देशों से आकर भारत के हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का आन्दोलन आरम्भ किया। प्रदेशों के जागीरदार, फौजदार, नाज़म, कारदार, विदेशी मुसलमान थे। शासक अपने कोष भरने तथा विलासी जीवन व्यतीत करने के लिए निर्धन प्रजा को कष्ट देकर नाना प्रकार की भेंटें आदि लेते थे। एक मनुष्य की भावनाओं को पूरा करने के लिए सहस्रों को अधभूखे ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था। धर्म के नाम पर अन्याय की तलवार निरपराध मनुष्यों के सिर पर पड़ती थी । गुरु नानक देव जी ने जनता, समाज तथा देश की हीन दशा को देखा । उन्होंने पंडितों, मौलवियों, योगियों, फकीरों तथा सूफी दरवेशों की संगति करके उनके विचारों, सिद्धान्तों तथा जीवनियों का अध्ययन किया। उनमें से

कोई भी खुदा की खुदाई, परमेश्वर की सामूहिक मनुष्यता की सम्पूर्ण भलाई के साधनों का गुर अथवा सिद्धान्त उन्हें न बता सका ।

27 वर्ष की आयु में सुल्तानपुर में वेई नदी के किनारे बैठ कर गुरु नानक जी को यह अनुभव हुआ, कि न कोई हिन्दू है और न कोई मुसलमान । केवल शुभ कर्म ही वास्तव में मानवता है। इस आदि कालीन मत का प्रचार करने के लिए गुरु नानक देव जी ने हिन्दू तथा मुसलमान आबादी के देशों में चार बड़ी-बड़ी यात्राएं की । हिन्दू तीर्थ स्थानों पर जाकर हिन्दू मत-मतान्तरों के नेताओं को अपना सिद्धांत बताया और इसका क्रियात्मक रूप से प्रचार किया । इस्लाम के पूज्य स्थानों मक्का तथा बगदाद शरीफ पहुंच कर उस समय के मुस्लिम दरवेशों तथा विद्वानों से मिल कर अपने नवीन सिद्धांत की व्याख्या की तथा उनसे, "हजरत रब्बुलमजीद" की उपाधि प्राप्त की। गुरु नानक देव जी के सिक्ख धर्म के बड़े-बड़े बुनियादी (मौलिक) सिद्धांत निम्नलिखित हैं:

आदि पुरुष गुरु एक है। सारे मनुष्य भाई-भाई हैं। न कोई मुसलमान है और न कोई हिन्दू है। मनुष्य के कर्म तथा कर्तव्य ही उसे देव वृत्ति वाला अथवा राक्षस स्वभाव वाला बनाते हैं। परमात्मा की रची हुई सृष्टि की सेवा ही आदि पुरुष की भक्ति का प्रधान रूप है। संसार में रहकर गृहस्थ आश्रम धारण करना और हाथों से श्रम करके जीवन व्यतीत करना वास्तविक धर्म है। धर्म के नाम पर पाखण्ड, धर्म की आड़ में जनता से धोखा और ठगी करना महापाप है। मनुष्य जाति में विभाजन पैदा करके बैर-विरोध बढ़ाना और लड़ाई-झगड़ा पैदा करना परमात्मा की सत्ता से इन्कार करना है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का त्याग, मनुष्यता के शुभ गुणों सेवा, बलिदान, आत्मगौरव, स्वच्छ आचार एवं सत्य व्यवहार आदि का धारण करना सच्चे सिक्ख का परम कर्तव्य है। जपुजी साहिब, आसा की वार, सिद्ध गोष्ठ, दक्खनी ओंकार आदि वाणियां तथा अनेक शब्दों में गुरु नानक जी ने अपने धर्म का उपदेश दिया। सांसारिक जीवन का उदाहरण आपने कृषि कर्म को धारण करके दिया। रावी नदी के आर-पार करतारपुर तथा डेरा बाबा

नानक में आप के खेत थे। यहां पर ही आपने मनुष्य देह सन् 1539 में 70 वर्ष, पाँच मास, सात दिन की आयु व्यतीत करके छोड़ दी।

श्री गुरु नानक देव जी के पश्चात् गुरु अंगद देव जी ने खडूर में रहकर तेरह वर्ष तक सिक्ख धर्म का प्रचार किया। गुरु नानक देव जी की वाणियां तथा शब्दों को एकत्रित करके गुरुमुखी लिपि में लिखा । इन्होंने 48 साल की आयु में सन् 1552 को परलोक गमन किया।

तीसरे गुरु अमरदास जी ने 22 वर्ष सिक्ख धर्म का प्रचार गोइंदवाल में अपना केंद्र बनाकर किया । गुरु नानक देव जी के समय से स्थापित की हुई संस्था सदाव्रत को बहुत उन्नत किया । आपने वाणी की भी रचना की । 1 सितम्बर 1574 को आप स्वर्ग सिधारे।

चौथे गुरु रामदास जी ने सन् 1577 में गांव तुंग के जमींदारों से 700 अकबरी रुपये देकर 500 बीघा भूमि खरीदी ।इस भूमि पर आपने अमृत सरोवर की नीव रक्खी और इसके आस-पास नगर अमृतसर को बसाना शुरू किया। बावन पेशों के लोगों को प्रेरणा देकर तथा हर प्रकार की सहायता करके इसे बसाया। आस-पास के रहने वाले क्षत्रिय कुटुम्ब यहां आकर बस गये तथा व्यापार, शिल्पकला एवं अन्य औद्योगिक वस्तुओं की मंडी, पशुओं की बिक्री आदि के काम आरम्भ किये। व्यापार के कारण इन व्यापारियों के सम्बन्ध लाहौर, मुल्तान, पेशावर, काबुल, वलख, बुखारा, ताशकंद, दिल्ली, आगरा, इलाहाबाद, पटना, सहसराम की मंडियों के व्यापारियों के साथ हो गये । इससे गुरु नानक देव जी महाराज के सिक्ख मत की वृद्धि में बहुत सहायता मिली। गुरु रामदास जी ने पूरे सात साल सिक्ख मत के प्रचार के उपरांत 1 सितम्बर सन् 1581 को गोइंदवाल में शरीर छोड़ दिया।

18 वर्ष की अवस्था में पांचवें गुरु अर्जुन देव जी महाराज ने सन् 1581 में गुरु-गद्दी संभाल कर सिक्ख मत का प्रचार किया और सरोवर हरिमन्दिर साहिब के निर्माण तथा अमृतसर नगर के भवनों को पूरा कराया।

श्री हरिमन्दिर साहिब की आधारशिला परमात्मा के प्यारे सूफी मुसलमान फकीर मीयांमीर से सन् 1586 में रखवाई। इसकी चारों दिशाओं

में खुले चार द्वार इस सिद्धांत के द्योतक हैं कि परमात्मा का द्वार सम्पूर्ण संसार के लोगों के लिए खुला है। हरमंदिर साहिब एक ऐसा मंदिर है, जिसमें हर देश का, हर जाति का तथा हर धर्मावलम्बी व हर सिद्धान्त का अनुयायी, आस्तिक हो या नास्तिक, मूर्ति-पूजक हो या मूति-भंजक, गौ-भक्षक हो चाहे गौ-रक्षक, सूकर- भोजी हो या उससे घृणा करने वाला इसमें आकर दर्शन कर सकता है और गुरु की वाणी सुन सकता है। इन्होंने लाहौर "डब्बी बाजार" में एक बावली भी बनवाई तथा सन् 1595 में व्यास नदी के किनारे हरगोबिन्दपुर की आधारशिला रखी।

इसी वर्ष ही गुरु अर्जुन देव जी ने प्रथम चार गुरुजनों की वाणियों को एकत्रित करना आरम्भ किया। हिन्दु-भक्तों तथा मुसलमान दरवेश फकीरों की रचनाएं एकत्रित की गई। गुरु जी स्वयं भी सुखमनी साहिब तथा और वाणियों के रचनात्मक कार्य में लग गए। भाई गुरदास जी को लेखक बना कर लगभग दस साल के समय में गुरु ग्रंथ साहिब जी की प्रति (जिल्द) तैयार की । सन् 1604 में इसको प्रामाणिक इष्ट बाणी की पदवी देकर हरिमन्दिर साहिब में स्थापित किया तथा बाबा बुड्ढा जी को इसका पहला ग्रन्थी बनाया ! इस ग्रंथ साहिब जी में 5776 श्लोक हैं । इनमें गुरु नानक-देव जी के 979, गुरु अंगद देव जी के 61, गुरु अमरदास जी के 907, गुरु रामदास जी के 679 , गुरु अर्जुनदेव जी के 2216, हिन्दू भक्तों तथा मुसलमान दरवेशों के 937 पद हैं। गुरु ग्रन्थ साहिब जी की सम्पूर्ण वाणी काव्यात्मक तथा गेय है। प्रसिद्ध भारतीय संगीत कला के 48 में से 31 राग-रागनियों में यह वाणी विभक्त है। जैसा कि सम्राट अकबर को हर धर्म के सिद्धांत जानने का तथा फकीरों, दरवेशों, साधुओं से मिलने का और उनके साथ धर्म चर्चा करने का बहुत चाव था; सम्भव है कि बादशाह ने गुरु अर्जुन देव जी से गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी सुनी हो।

सम्राट अकबर सन् 1605 में मर गया और उसका पुत्र जहांगीर दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। जहांगीर अपने पिता जैसा विशाल हृदयी और उदार विचारों वाला शासक नहीं था। उसने साम्प्रदायिक भेद-भाव से राजमद

में चूर हो गुरु अर्जुन देव जी को 30 मई सन् 1606 ई में निर्ममतापूर्वक मरवा डाला।

यद्यपि सिक्ख धर्म के प्रचार को आरम्भ हुए सौ वर्ष हो चुके थे तथापि अभी तक सिक्ख कहलाने वालों की संख्या 1 लाख भी नहीं हुई थी। गुरु नानक देव जी ने सिक्ख धर्म के प्रचार केन्द्र (मंजियाँ) स्थापित किये । इन केंद्रों के प्रचारक मंजियों पर बैठ कर धर्म का प्रचार करते थे। पहली मंजी के प्रचारक सैदपुर के भाई लालो बढ़ई थे। तलम्बा के सज्जन को अपना सिक्ख बना कर धर्मशाला बनवाई तथा प्रचार के काम में लगाया। पटना नगर में सालसराय जौहरी को मंजी दी तथा उसको प्रचार कार्य दिया । इसी प्रकार गुरु नानक देव जी की चारों यात्राओं के समय में जहां-जहां भी लोग सिक्ख बने वहां-वहां संगतें तथा मंजियां स्थापित की गई और धर्मशालायें बनाई गई ।

मानव देह छोड़ने से पहले गुरु नानक देव जी ने गुरु गद्दी पर गुरु अंगद देव जी को बिठाया था। गुरु नानक देव जी के सुपुत्र श्री लक्ष्मीचंद तथा श्री श्रीचन्द जी के द्वेष तथा ईर्ष्या के कारण गुरु अंगद जी को करतारपुर को छोड़ कर खंडूर में अपना प्रचार केन्द्र स्थापित करना पड़ा। पुरानी संगतों, मंजियों और धर्मशालाओं के बहुत से श्रद्धालु सज्जन करतारपुर में ही लक्ष्मी चन्द जी तथा श्रीचन्द जी के पास जाकर श्रद्धा भेंट करते रहे। आज तक भी लक्ष्मीचन्दजी की सन्तान के और डेरा बाबा नानक के बेदी बहुत से प्रदेशों की संगतों के गुरु होते चले आ रहे हैं। इसके अतिरिक्त बाबा श्री चंद जी ने एक नया सम्प्रदाय "उदासी" नाम से संचालित किया था। तीसरे गुरु अमरदास जी को गुरु अंगद देव जी के सुपुत्रों दासू तथा दात्तू ने बहुत दुःख दिये। गुरु अमरदास जी को खंडूर छोड़कर गोइन्दवाल को सिक्ख प्रचार का केंद्र बनाना पड़ा। गोइन्दवाल के मुसलमानों ने भी गुरु महाराज तथा सिक्खों को बहुत से कष्ट दिये। गुरु अमरदास जी ने लंगर की पुरातन मर्यादा को समृद्ध किया । सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए 22 मंजियां स्थापित्त कीं । प्रत्येक मंजी अपने किसी एक श्रद्धालु सिक्ख को , जिसे साधारण भाषा में मसंद कहते थे, सुपुर्द

की । मसंद उस प्रदेश में सिक्ख धर्म का प्रचार करता था और संगत का सम्बन्ध केन्द्रीय गुरु गद्दी से स्थापित रखता था। गुरु रामदास जी ने गुरु अमरदास जी के संबंधियों व सन्तान के साथ किसी प्रकार के झगड़े तथा द्वेष उत्पन्न न करने के विचार से गुरु गद्दी का केंद्र अमृतसर को बनाया। गुरु रामदास जी के पश्चात् उनके तीसरे सुपुत्र गुरु अर्जुन देव जी गुरु गद्दी पर बैठे । गुरु रामदास जी का ज्येष्ठ पुत्र पृथीया बहुत ही लोभी तथा ईर्षालु था। उसने गुरु अर्जुन- देव जी को कलंकित करने के षड्यंत्र किये। गुरु रामदास जी पृथिया से बहुत घृणा करते थे तथा उसको चोरी और डाके मारने वाली जरायम पेशा जाति 'मीने' के नाम से पुकारते थे। गुरु अर्जुन देव जी ने अपने पिता जी की सारी संपत्ति अपने भाइयों को दे दी। लंगर तथा प्रचार का काम संगतों के चढ़ावे तथा भेंटों से आरम्भ किया। पृथिया अपने चेले सिक्खों द्वारा संगतों की भेंटें गुरु जी के पास पहुंचने से पहले ही अपने पास रखवा लेता और गुरु गद्दी की शोभा, सम्मान तथा कीर्ति घटाता । सुधासरोवर को सम्पूर्ण करने के लिए तथा नगर की वृद्धि के लिए सिक्ख संगतें दूर-दूर से धन भेजतीं । पूथीया यह धन रास्ते में ही रोक कर अपने घर ले आता और गुरु के लंगर या गोलक के लिए कुछ न जाने देता।

इन्हीं दिनों भाई गुरुदास जी जो आगरे में सिक्ख धर्म के प्रचार में लगे हुए थे , गुरु अर्जुन देव जी के दर्शनों के लिए रामदासपुर आये। उन्हें पृथिया के इन बुरे कामों को देख कर बहुत कष्ट हुआ। उन्होंने गुरु गद्दी से सम्बन्धित सारा काम अपने हाथ में ले लिया। मसंदों का सुधार किया गया। सिक्ख संगतों से सम्बन्ध स्थापित करने के लिए यह आज्ञापत्र भेजा गया कि सिक्ख संगतें अपनी कमाई का दसवां भाग देने के लिए हर बैसाखी को अमृतसर में पहुंच कर गुरुजी के दर्शन प्राप्त करें तथा अपनो भेंट अर्पण करें। इधर पृथिया गुरु अर्जुन देव जी का प्राणघाती बन रहा था। उसने गुरु अर्जुन देव जी तथा उनके सुपुत्र गुरु हरगोविन्द जी के प्राण लेने के लिए कई षड्यंत्र रचे परन्तु वह अपने बुरे विचारों में सफल न हो सका। वह सुलही खान पठान को गुरु महाराज जी को अपमानित करने तथा डराने धमकाने के लिए भी

लाया, परन्तु सुलही खान रास्ते में ही ईंटों के आवे में गिर कर जल मरा ।

पूथीया इस दुर्घटना को देख कर बहुत भयभीत हुआ ।

गुरु अर्जुन देव जी को सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए बहुत कष्ट सहन करने पड़े तथा जीवन का बलिदान देना पड़ा। गुरु गद्दी संभाल लेने के समय गुरु हरिगोविन्द जी की आयु केवल 11 वर्ष की थी। इनका पालन-पोषण करने और शिक्षा, शस्त्रविद्या सिखाने आदि का काम बाबा बुढा जी के हाथ में था । बाबा जी ने उन्हें सर्वगुण सम्पन्न बनाने के प्रयत्न किये। गुरु गद्दी का तिलक लेते समय गुरु हरिगोविन्द जी ने पुरानी रीति के अनुसार सेहली टोपी पहनने से इन्कार कर दिया तथा इनकी जगह दायें बायें दो तलवारें पहन कर यह मर्यादा पूरी की । एक, तलवार धर्म का चिन्ह तथा द्वितीय संसारिक कर्मों का निशान था। सब मसंदों के नाम आज्ञापत्र भेजे गए कि चढ़ावे और भेंट के तौर पर शस्त्र तथा घोड़े दिये जायें। अमृतसर शहर की रक्षा के लिए लोहगढ़ नाम की गढ़ी बनवाई । हरिमन्दिर साहिब से पृथक अकाल तख्त का निर्माण किया। जहां धर्म के विषय पे चर्चा और कथा के अतिरिक्त सांसारिक विषयों पर विचार किया जाता था । 50 शक्तिशाली चुस्त तथा आरोग्य सिक्खों को अपने अंग-रक्षकों के रूप में भर्ती किया। माझे, मालवे, तथा द्वाबे के पांच सौ युवकों ने आकर अपने आप को बिना किसी वेतन के गुरु के सम्मुख धर्म पर जीवन बलिदान करने के लिए अर्पित किया। गुरुजी ने हर एक को एक घोड़ा और शस्त्र दिये । गुरु ग्रन्थ साहिब जी के गीतों (काव्य रचना) को शूरवीरों की वारों की ध्वनि पर सारंदे और ढड्ड (डमरू जैसा साज) के साथ गाने की प्रथा जारी की, ताकि लोगों के हृदयों में नया उत्साह और नये उद्गार पैदा हों। गुरु-द्रोहियों तथा हाकिमों ने उनके विरुद्ध बादशाह जहांगीर के कान भरे । बादशाह जहांगीर ने आपको ग्वालियर के किले में शाही कैदी के रूप में रखने की आज्ञा दी। यह घटना अकाल तख्त की रचना से एक वर्ष के अन्दर उस समय हुई जब कि आपकी आयु 16 वर्ष की थी।

ऐतिहासिक घटनाओं की जांच-पड़ताल करने से यह परिणाम

निकला है, कि गुरु हरगोविन्द जी साहिब दो साल से कम समय में ग्वालियर के किले से छोड़ दिये गए। इसके पश्चात् जहांगीर बादशाह में और गुरु हरगोविन्द जी में मित्रता हो गई और उसने रावी नदी के तट पर कई बार गुरु हरगोविन्द जी के साथ शिकार खेला। किंवदन्ती है कि जहांगीर बादशाह, अमृतसर भी आया और उसने सरकारी कोष से अकाल तख्त के शेष निर्माण को सम्पूर्ण करने के लिए कहा; परन्तु गुरुजी ने सरकारी धन स्वीकार करने से इन्कार कर दिया । जहांगीर की मृत्यु सन् 1627 तक गुरु हरगोविन्द जी को सिक्ख धर्म का प्रचार करने के लिए चौदह या पन्द्रह वर्ष का समय मिल गया।

इस समय का उन्होंने भली-भांति उपयोग किया। गुरु नानक देव जी के पश्चात् चार गुरुओं में से किसी ने भी केन्द्रीय स्थानों से बाहर जाकर सिक्ख धर्म का प्रचार नहीं किया था। साथ ही साथ घरेलू द्वेष और ईर्ष्या के कारण प्रत्येक गुरु को पूर्व-प्रचार केन्द्र छोड़ कर नया प्रचार केन्द्र बनाना पड़ा था और कई परिस्थितियों में सुपुर्ददार तथा मसन्द नियुक्त करने पड़ते थे । संगतों के नेता मंजियों के सुपुर्ददार तथा मसन्द संगतों को उपदेश देते रहते थे । संगतें स्वयं भी गुरु के दर्शन, सरोवर की सेवा आदि के काम में सहायता देने के लिए उपस्थित हो जाती और गुरुओं के मुखों से उपदेश तथा वाणियां सुनतीं ।

गुरु हरगोविन्द जी ने गुरु नानक देव जी की भाँति स्थान स्थान पर भ्रमण करके प्रचार किया। संगतों से मिले। कश्मीर से लेकर उत्तरी भारत में पहाड़ के साथ-साथ के प्रदेशों में प्रचार करते हुए पीलीभीत पहुंचे । इन प्रदेशों में हिन्दू तथा मुसलमानों को सिक्ख बनाया। कश्मीर में गुरु नानक देव के समय से ब्रह्मदास तथा उसके वंशज सिक्ख मत का प्रचार कर रहे थे। गुरु अर्जुन देव जी ने माधो-सोढ़ी को प्रचार के लिए नियुक्त किया था। काश्मीर में गुरुजी ने श्रीनगर, बारामुला, मटन, बेरीनाग, अनन्त नाग, इस्लामाबाद तथा नालूछी आदि स्थानों पर पहुंच कर प्रचार किया तथा सहस्त्रों हिन्दुओं से बने मुसलमानों को सिक्ख बनाया । वापस आते हुए गुजरात में

फकीर शाहदौला से मिले और उसके साथ विचार करते हुए उच्चारण किया "मैं एक गृहस्थी फकीर हूं, न हिन्दू हूँ न मुसलमान ।" प्रथम गुरु साहिब जी के समय से बनी संगतों तथा धर्मशालाओं के दर्शन किये एवं संगतों के पारस्परिक मेलजोल और भजन-कीर्तन का प्रबन्ध किया ।

1627 ई. में बादशाह जहांगीर की मृत्यु के पश्चात् शाहजहां दिल्ली के सिंहासन पर बैठा । उसने मुसलमानों को सिक्ख बनाये जाने के आन्दोलन को शाही हुक्म से बन्द कर दिया। लाहौर की बावली साहब को मिट्टी से भरवा दिया। 1628 में खालसा कालेज अमृतसर वाले स्थान पर बादशाह के अफसर मुखलिस खां और गुरुजी में छोटी सी झड़प हो गई, जिसमें मुखलिस खां मारा गया। 1628 से 1633 ई. तक गुरु हरगोबिन्द साहिब को अमृतसर छोड़ कर करतारपुर और हरगोविंदपुर में रहना पड़ा । गुरु हरगोविन्द जी ने अपने मुसलमान सेवकों के लिए अपने खर्चे से मस्जिदें बनवाई । इन पांच या छः वर्षों में विरोधियों से झड़पें तथा छोटी मोटी लड़ाईयां भी होती रहीं जिनमें गुरु जी के बैरी, भगवान दास घोरड़ तथा उसका पुत्र रत्नचन्द, अब्दुल्लाखान, लल्ला बेग, कमर बेग, पैंदे खान तथा कुमर खान आदि मारे गए । नित्यप्रति के राजनीतिक झगड़ों के कारण सिक्खों की हानि होती देख कर गुरुजी ने कीर्तपुर बसाया और वहां रहने लगे । 1636 ई. में सिक्खीं प्रचार के काम को तीव्र करने के लिए गुरु हरगोविन्द जी ने अपने सुपुत्र गुरुदित्ता जी को नियुक्त किया। पूर्व गुरुओं के बनाए हुए कई मसन्द तथा संगतों के नेता नेतृत्व का काम अच्छा नहीं कर रहे थे । गुरु जी के लिए संगतों की ओर से भेंट की हुई सामग्री को अपने व्यक्तिगत कामों के लिए व्यय कर लेते थे और कई प्रकार की बुरी आदतों में पड़ गए थे । बाबा गुरुदित्ता जी ने अपने पिता गुरु हरिगोविन्द जी की सम्मति से सिक्ख प्रचार के लिए चार केन्द्र स्थापित किये, जिनकी सुपुर्ददारी उदासी सम्प्रदाय के चार साधुओं बाबा अलमस्त, बाबा फूल, बाबा गोंदा तथा बाबा बालू हसना को दी । इन उदासी साधुओं तथा उनके चेलों ने दूर-दूर के स्थानों पर पहुंच कर सिक्खी और वाणी का प्रचार किया। सुथरे शाह को भी अपने

हास्य रंग के ढंग से सिक्खी प्रचार की आज्ञा दी। गुरु हरगोविन्द जी ने 3 मार्च 1644 ई. को कीर्तपुर में शरीर छोड़ा।

इसके अनंतर गुरु हरराय जी 14 वर्ष की आयु में गुरु गद्दी पर बैठे । यह बाबा गुरदित्ता जी के द्वितीय पुत्र थे। इनका बड़ा भाई धीरमल था, जो गुरु गद्दी पर अपना अधिकार समझता था।

गुरु ग्रन्थ साहिब जी की पहली वास्तविक प्रति गुरु पुत्र अर्जुनदेव जी वाली बीड़ धीरमल ने अपने अधिकार में ही रख ली और गुरु हरराय जी को न दी । वह पुरातन गुरुओं के समय के लोभी मसन्दों को अपने साथ मिलाकर भेंटें स्वयं ले लेता था और गुरु बन बैठा था। उसने सारी आयु इनका विरोध किया और कष्ट देने से न हटा ।

गुरु हरराय जी ने आचरण शील और भजन करने वाले सिक्खों को "बख्शीशें " करके उनके जिम्मे सिक्खी प्रचार का काम लगाया। भगत भगवान सन्यासी को सिक्ख बनाकर पंजाब से बाहर प्रचार के लिए भेजा। भाई बहलो को सिद्धू बराड़ों इलाके में तथा ग्राम बागड़ियां के भाई रूपा बढ़ई को पुआद और जंगल के प्रदेशों में सिक्खी प्रचार करने का आदेश दिया। भाई फेरू को खारे माझे तथा रावी, व्यास नदियों के मध्य वाले प्रदेश में सिद्धू जाटों तथा कम्बोज-जाति के नए बसाए हुए प्रदेश में प्रचार के हेतु नियुक्त किया। वे सिक्खी प्रचार के लिए स्वयं भी दौरे करते रहे ।

गुरु घर के बैरी धीरमल, पृथीये के वंशज और निकाले हुए, मसन्द, बादशाह औरंगज़ेब के पास गुरुजी की शिकायतें करते रहते थे। सन् 1658 में' औरंगज़ेब गद्दी पर बैठा। गद्दी पर बैठने के दो वर्ष के अन्दर ही उसने गुरु हरराय जी को दिल्ली आने का आदेश भेजा। इस पर गुरुजी ने अपने पुत्र रामराय को दिल्ली भेज दिया। बादशाह औरंगज़ेब के प्रश्न के उत्तर में रामराय ने गुरु वाणी की तुक "मिट्टी मुसलमान की " को बदलकर "मिट्टी बेईमान की" पढ़ कर सुनाई । गुरुजी यह प्रसंग सुन कर बहुत रुष्ट हुए तथा आदेश दिया कि रामराय पुनः हमारे पास न आवे। रामराय जी को बादशाह औरंगज़ेब ने देहरादून में जागीर दे दी , जहां उसने अपना डेरा बना कर अपने

ही सिक्ख सेवकों में वृद्धि की जो रामराइयों के नाम से प्रसिद्ध है।

6 अक्टूबर 1661 को गुरु हरराय जी के ज्योति में समाने के पश्चात् गुरु हरिकृष्ण जी, जिनकी आयु इस समय केवल 5 वर्ष की थी, गुरु गद्दी पर बैठे। रामराय ने ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण गद्दी पर अपना अधिकार जताकर कई मसन्दों को अपने साथ मिला लिया। यह मसन्द संगतों से रामराय के गुरु होने की बातें करते रहते। सिक्खों की श्रेणियों में यद्यपि पहले भी कई दरारें आई थीं, परन्तु अब तो गहरे घाव खुलने आरम्भ हो गए। श्रद्धालु सिक्खों ने जिन्हें गुरु हरराय जी के निर्णय तथा आदेश का पता था, रामराय को गुरु मानने से इनकार कर दिया। रामराय भी चुपचाप बैठने वाले सज्जन नहीं थे । उसने गुरु-गद्दी का मुकदमा बादशाह औरंगज़ेब के सम्मुख रक्खा । गुरु हरिकृष्ण जी देहली जाकर मिर्जा राजा जयसिंह के बंगले रायसीना में ठहरे। बादशाह औरंगज़ेब को सब बातों की जांच-पड़ताल करने पर निश्चित हो गया कि गुरु हरिकृष्ण जी ही गुरु गद्दी के स्वामी है। उसने इसी आधार पर रामराय का दावा खारिज कर दिया। दिल्ली में ही चेचक के रोग से गुरु हरिकृष्ण जी की 30 मार्च सन् 1664 को मृत्यु हो गई ।

गुरु हरिकृष्ण जी के पश्चात् 44 वर्ष की आयु में गुरु तेग बहादुर जी गुरु गद्दी पर बैठे और बकाला गांव को अपना केन्द्र बनाया। दूसरी ओर डेरा बाबा नानक, गोविन्दवाल, खंडूर तथा अमृतसर में गुरु वंश के बेदी तथा सोढी, अपनी गुरु गद्दियां लगाये बैठे थे। सीधी-साधी गुरु नानक पर श्रद्धा रखने वाली जनता को धर्म के नाम पर लूट-लूट कर अपना कार्य व्यवहार चला रहे थे। रामराय ने भी अपनी सिक्खी सेवकी का अच्छा जाल तान लिया था। देहरादून के प्रदेश में जमुना से इस पार पुआह्द (लुधियाना) के इलाके तक अपने मसन्द भेज कर सिक्खी सेवकी बना ली थी। धीर मल्ल को गुरु तेग बहादुर जी से बैर होना स्वाभाविक था। उसने अपने एक मसन्द को गुरु तेग बहादुर जी के प्राण लेने को नियुक्त किया ।

मसन्द ने गुरु जी पर गोली चला कर उनको घायल कर दिया और उनका घर-बार लूट कर ले गया। सिक्खों ने मक्खन शाह लुबाने के नेतृत्व

में धीरमल की हवेली पर आक्रमण कर दिया और उसका सब-कुछ लूट लिया । दोषी मसन्द के हाथ पैर बांध कर गुरु जी के सामने उपस्थित किया जिन्होंने उसको क्षमा कर दिया। सिक्ख इस समय गुरु ग्रन्य साहब की पुरानी बीड़ भी धीरमल्ल के घर से ले आए । गुरु तेग बहादुर जी ने सिक्खों को लूट का सारा माल तथा गुरु ग्रंथ साहेब भी वापस करने का आदेश दिया । सिक्खों ने धन-धान्य तो लौटा दिया, परन्तु वे गुरुग्रंथसाहेब देना नहीं चाहते थे । अन्त में गुरु साहब के आग्रह करने पर यह बीड़ भी लौटा दी, जो अभी तक धीरमल्ल के वंश के अधिकार में है।

गुरु तेग बहादुर के विरोधी अधिकांश वह व्यक्ति थे, जो धर्मशालाओं तथा सिक्ख मंदिरों की भेटों को अपनी व्यक्तिगत आय समझ कर डकार रहे थे । जब गुरु तेग बहादुर जी हरिमन्दिर के दर्शनों के लिए अमृतसर आये तो वहां के पुजारियों ने उन्हें दर्शन करने के लिये अन्दर भी न जाने दिया। अतः वे निराश ही वापिस लौट आये। वैरियों के ईर्ष्या तथा विरोध के कारण बाबा बकाला गांव को छोड़ कर गुरुजी कीरतपुर चले गये। यहां भी धीरमल्ल के गुट के लोगों ने इन्हें आराम न लेने दिया ।

नित्य प्रति नये कष्टों तथा कठिनाइयों से तंग आकर गुरुजी ने राजा साहब कहलूर से 500 र. की भूमि का एक टुकड़ा जो कीरतपुर से 5 मील दूर था खरीद कर आनंदपुर नाम का गांव बसाया। आनंदपुर में भी गुरुवंश में से स्वयं बने गुरु गद्दी के दावेदारों ने, गुरुजी को सुख की सांस न लेने दी । अतः गुरु तेग बहादुर जी ने अपने पिता गुरु हरिगोविन्द जी की भांति सिक्खी प्रचार के लिये भ्रमण आरम्भ किया। आनंदपुर से चल कर पुआद के प्रदेश में भ्रमण करते हुए मालवा और बांगर के इलाके में सिक्खी का प्रचार किया। इन प्रदेशों में बहुत से कुएं तथा सरोवर बनवाये । रामराय आदि बैरियों ने बादशाह के पास जाकर कान भरे तथा झूठी बातें बनाई। मिर्जा राजा जयसिंह के पुत्र राजा मान सिंह ने बादशाह को सारी बात समझाई और स्वयं ही गुरुजी के हेतु साक्षी बना ।

इसके पश्चात् गुरु जी आगरा, इलाहाबाद, बनारस, सहसराम, गया

होते हुए और संगतों तथा सिक्खों को उपदेश देते हुए पटना पहुंचे । कुटुम्ब के लोगों को पटना छोड़ कर आप मुंघेर तथा ढाके की ओर चले गये। इस प्रदेश में पहले से ही बहुत सी सिख संगतें तथा धर्मशालायें बनीं हुई थीं । ढाके में विशाल हजूरी संगत थी। यह धर्मशालायें तथा संगत उदासी साधुओं अलमस्त जी तथा नत्थे साहब जी के श्रम से बनी तथा संगठित हुई थीं । धर्मशालाओं में निर्धनों, अनाथों, दुखियों के लिए मुफ्त सदाबरत लंगर चलते थे । यात्रियों को ठहरने तथा विश्राम के लिये स्थान मिलता था। पंजाब और अमृतसर के खत्री व्यापारी हिन्दुस्तान के प्रत्येक बड़े नगर में व्यापार कर रहे थे। सिक्खों का प्रचार उनके द्वारा भी हो रहा था। अपने भ्रमण काल में गुरुजी, चाचा फग्गू आदि गुरु घर के प्रेमियों द्वारा मिल कर और सिक्खी का प्रचार होता देख कर बहुत प्रसन्न हुए ।

ढाके में ही गुरुजी ने अपने सुपुत्र श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के पटने में 26 दिसम्बर 1666 को उत्पन्न होने का समाचार सुना। ढाके से गुरु जी ने सिलहट, चटगांव, संदीप, लशकर, आदि का भ्रमण करने में कई वर्ष व्यतीत किये। गुरुजी ने 1670 में राजा राम सिंह की आसामी लोगों से संधि करवा दी। इसी प्रसनता में दोनों ओर के सैनिकों ने गुरु नानक देव महाराज की स्मृति में मिट्टी का एक ऊंचा टीला धोवड़ी के स्थान पर बनाया।

असम के देशाटन से वापस आकर शीघ्र ही गुरुजी आनंदपुर पंजाब लौट आये। इस समय औरंगज़ेब को दिल्ली के सिंहासन पर बैठे लगभग 12 साल हो चुके थे। उसने सिंहासन के उत्तराधिकारियों को मारकर अपना स्थान पक्का बना लिया था।

1669 ई. में बादशाह औरंगज़ेब ने अपने सारे सूबेदारों के नाम एक 'शाही फरमान' जारी किया कि हिंदूओं के सारे मन्दिर तथा विद्यालय तोड़ दिये जायें । साम्प्रदायिक सुन्नी मुसलमान, सूबेदारों, शासकों तथा कर्मचारियों ने इस आदेश का बड़े जोर से पालन करना आरम्भ कर दिया। प्रसिद्ध इतिहासकार खाफीखां अपनी पुस्तक मुन्तखिव-उल-लबाब में लिखता है कि सिक्खों के विषय में भी यही आदेश थे। अतः उन्हें भी दुखों का

शिकार होना पड़ा । उनके नेताओं को पकड़ कर बन्दीखानों में डाल दिया तथा उनके मंदिर तोड़ दिये गये। इस दमन ने हिन्दुओं के जीवट तोड़ दिये। वह त्राहि-त्राहि कर रहे थे। सहायता के लिये चिल्लाते थे, परन्तु निर्दयी दमनकारियों की तलवार तथा अत्याचार के विरुद्ध लड़ने का उन्हें साहस नहीं होता था ।

गुरु तेग बहादुर जो भविष्य को देख कर बहुत चिन्तातुर हुए और इस बात का दृढ़ संकल्प किया कि शासकों के दमन के कारण दबी हुई तथा अत्याचार सहन करने वाली जनता को बलिदान देने का पाठ सिखाने के लिये स्वयं बलिदान देंगे ।

यह विचार कर गुरु तेग बहादुर जी ने अपने परिवार तथा अपने सुपुत्र को पटना से आनंदपुर बुला लिया। कई वर्ष अपने पास रख कर गुरु तेग बहादुर जी ने उन्हें कई प्रकार की शिक्षाएं दीं, विधायें पढ़ाई और उनको हर प्रकार गुरु गद्दी के योग्य बना दिया। गुरु तेग बहादुर जी को चिन्तातुर देख कर गुरु गोविन्द सिंह जी ने इसका कारण पूछा। गुरु तेग- बहादुर जी ने उत्तर दिया कि मातृभूमि भारत विदेशियों के कड़े पंजे में फंसी हुई है, इसको मुक्त कराने के लिये किसी महापुरुष के बलिदान की आवश्यकता है, परन्तु ऐसा महापुरुष कहाँ से मिले ? गुरु गोबिन्द सिंह जी ने सुनते ही कहा "पिता जी इस बलिदान के हेतु आपसे अधिक योग्य कौन हो सकता है।"

गुरु तेग बहादुर जी इस उत्तर को सुनकर अति प्रसन्न हुए। अपने मन की पुरानी अभिलाषा को पूर्ण करने के लिये शाही फरमान का खुले तौर से विरोध करने तथा अत्याचार की प्रज्वलित अग्नि को अपने शरीर की आहुति देकर शांत करने के लिए, अग्रसर हो गये । सन् 1673 में आनंदपुर छोड़ कर पैदल चलकर और पड़ाव पड़ाव पर ठहर कर धर्म का प्रचार आरम्भ किया। दबी हुई जनता को—

"भय काहू को देत नहि, नह भय मानत आनु" के ऊंचे आदर्श को पालन करने की प्रेरणा दी ।। सैफाबाद, समाने, के परगनों में से होते हुए धमतान, बांगर, रोहतक के अहीरों, गूजरों तथा जाटों को धर्म-धारण,

उत्साह, साहस तथा बलिदान की शिक्षा देते हुए दो वर्ष में आगरे पहुंचे। बादशाही आज्ञानुसार गुरु साहब को पकड़ कर आगरे से दिल्ली लाया गया। उनको कारावास में बन्द करके पहरा लगा दिया गया ।

गुरु जी को इस्लाम मत्त को स्वीकार करने के लिये निमंत्रण दिया गया जिस को उन्होंने अस्वीकार कर दिया। उनके एक सिक्ख भाई मतिदास जी को आरे से चीर दिया गया। गुरु जी को हथकड़ियां, बेड़ियां डालदी गई तथा कष्ट दिये गये। शाही हुक्म के अनुसार 11 नवम्बर सन् 1675 को गुरु तेग बहादुर जी का चांदनी चौंक, देहली में जनता के सामने सिर उतार दिया गया। गुरु गोबिन्द सिंह जी ने "विचित्रनाटक" पुस्तक में इस घटना का वर्णन करते हुए लिखा है : "ठीकर फोड़ दिलीस सिर प्रभुपुर कियो पयान ।"

उच्च जातियों के हिंदू तथा दिल्ली के लोग इतने डर गये थे कि किसी ने भी उनके मृतक शरीर को इस स्थान से उठाने तथा दाह संस्कार करने का साहस न किया । एक लुबाना-सिक्ख सैनिकों की नजर बचा कर गुरु जी के शरीर को अपनी बैल गाड़ी में डालकर शहर से दो कोस बाहर पश्चिम की ओर ले आया। साथी लुबानों ने कुछ गाड़ियां तथा कुछ सामान को स्वयं ही आग लगा कर गुरुजी का दाह संस्कार कर दिया। गुरु जी का सिर एक जैता नामी निर्धन श्रमिक सिक्ख, जो झाड़ू फेर कर उदरपूर्ति करता था, चोरी से उठा कर गुरु गोबिन्द सिंह जी के पास आनन्दपुर ले गया। जहां शीश का संस्कार किया गया । गुरु गोबिंद सिंह जी ने भाई जैते को "रंघरेटा (अछूत) गुरु का बेटा" कहकर सत्कार दिया। वास्तव में सिक्ख धर्म निर्धनों तथा श्रमिकों का धर्म है।

अपने पिता गुरु तेगबहादुर जी के बलिदान के पश्चात् गुरु गोबिन्द सिंह जी ने 9 वर्ष की आयु में गुरु गद्दी की जिम्मेदारियां सन् 1675 में संभाल लीं। औरंगज़ेब के हिन्दू तथा सिक्खों के विषय में शाही फरमान का पालन कठोर ढंग से किया जा रहा था। निर्धन लोग जजिया के कर से डरते मुसलमान बनते जा रहे थे । जान के भय से कई सिक्ख अपने आपको आनन्दपुरवाली गुरुगद्दी के सिक्ख मानने से इन्कार कर देते थे । रामराय,

धीर मल्लिये, तथा छेके हुए मसंदों को, जो मुसलमान शासकों से सहमत थे, अपनी सिक्खी सेवकी बढ़ाने का अच्छा अवसर मिला। गुरु गोबिन्द सिंह जी शासन से विद्रोही नेता के सुपुत्र थे। उनको गुरु मानने वाले वही सिक्ख हो सकते थे, जो मृत्यु पर सदा हंसी उड़ा सकें। अपना स्थान आनन्दपुर छोड़ कर गुरु गोबिन्द- सिंह जी राजा नाहन के राज्य में पाउन्टे चले गये। यहां रहकर उन्होंने शास्त्र-विद्या तथा शस्त्र विद्या सीखीं । उस समय की राजभाषा फारसी एक मुसलमान उस्ताद पीर मुहम्मद से पढ़ी। सिक्खों को घुड़सवारी, तलवार चलाना, तीर चलाना, शिकार खेलना आदि सैनिकों जैसे सारे काम सिखाये । पहाड़ी राजा भीम चन्द्र कहलूर वाला अकारण ही गुरु गोबिन्द सिंह जी से बैर रखता था। उसने फरवरी 1686 में अपनी सेना तथा अपने हितैषियों को साथ लेकर गुरुजी पर चढ़ाई कर दी। 500 पठान जिन्हें गुरु साहब ने अपने मित्र सैयद बुद्धूशाह की सिफारिश पर नौकर रक्खा था युद्ध के समय साथ छोड़ गये। लगभग 500 उदासी मसन्द तथा उनके संगी बहानेबाजी करके युद्ध से पहले ही चलते बने। उदासियों में से केवल महन्त कृपाल हेहर नगर वाला ही गुरुजी के साथ रहा। युद्ध से पहले बुद्धूशाह अपने चार पुत्रों तथा 700 मुरीदों सहित गुरु जी की सहायता के लिये उपस्थित हो गया । पाउन्टे से 6 मील , भंगानी के स्थान पर युद्ध हुआ जिसमें गुरु जी की सेना को विजय प्राप्त हुई ।

इसके पश्चात् गुरुजी आनन्दपुर आ गये। इस समय उनकी आयु लगभग 22 वर्ष की थी। इसी वर्ष में गुरुजी ने पहाड़ी राजाओं के साथ मिलकर जम्मू के गवर्नर मियांखां के भेजे हुए फौजी नेता अलिफ खां के साथ हुए नादौन वाले युद्ध में भाग लिया, जिसमें अलिफ खां की पराजय हुई। गुरु साहिब ने इसको हुसैनी युद्ध कहा है। यह युद्ध 1695 ई. में हुआ ।

बादशाह औरंगज़ेब नहीं चाहता था कि गुरु तेग बहादुर का सुपुत्र पुनः शक्तिशाली होकर उत्तरी भारत की प्रजा का धार्मिक तथा राजनीतिक नेता बन जाये। उसको 20 नवम्बर 1695 को सूचना मिली कि गुरु गोबिन्द सिंह ने अपने आपको गुरु नानक का रूप होने की घोषणा की है। औरंगज़ेब

की ओर से फौजदारों के नाम आदेश भेजे गये कि सिक्खों के सम्मेलन तथा उत्सव बन्द किये जायें। पंजाब में शांति स्थापित रखने के लिए औरंगज़ेब ने अपने पुत्र शहजादा मुअजिम बहादुर शाह के नाम हुकुम भेजा। शाहजादें ने मिर्ज़ा बेग को सेना देकर गुरु तथा पहाड़ी राजाओं को दंड देने का आदेश दिया, परन्तु भाई नन्द लाल जी के कहने पर जो उस समय शहजादे के पेशकार थे, गुरुजी के साथ संधि हो गई ।

इसके पश्चात् चार साल गुरु जी ने देश में राष्ट्रीय एकता लाने और प्रजा को साम्प्रदायिक मूर्खता में रंगे हुए शासन से मुक्ति दिलवाने के ढंग सोचे तथा उन्हें कार्यरूप में परिणत करने में लगाये। अशिक्षित और अंधकार में फंसी हुई जनता को देवी-देवताओं के आगे सहायता के लिये माथे रगड़ने के बजाय अपने साहस, बाहुबल तथा अपने बलिदान पर निशचय करने का उपदेश दिया। लोगों के दिलों में से पाखंड तथा अंधकार निकालने के लिये केशो पंडित को देवी दुर्गा प्रकट करने के लिये सुविधायें दीं । पाखंड का पर्दा उठने पर खड्ग हाथ में लेकर घोषणा की, कि "तलवार, एकता, साहस और बलिदान से बढ़ कर कोई देवी-देवता नहीं है। अकाल का आसरा लेने तथा उसका स्मरण करने से मनुष्य में शक्ति उत्पन्न होती है ।"

पुरातन रीति अनुसार संगतें तथा सिक्ख बैसाखी के दिन गुरुजी के दर्शनों के लिये एकत्रित हुआ करते थे । इस बार गुरुजी ने संदेश भेजे कि संगतें जोर-शोर से अच्छी संख्या में आवें । 30 मार्च 1699 को आनंदपुर में एक बड़ा सम्मेलन किया ।

सम्मेलन में गुरु जी नग्न खड्ग लेकर खड़े हो गये तथा उपस्थित समुदाय में से बलिदान के लिए एक शीश की मांग की। दीवान में बैठे लोग भयभीत हो गये; परन्तु गुरु जी ने पुनः यही मांग की। तीसरी बार मांग करने पर लाहौर का दयाराम खत्री शीश अर्पण करने के लिए खड़ा हो गया। गुरु जी ने उसे आंखों से ओझल एक पर्दे में ले जाकर बिठला दिया और लहू से सनी हुई तलवार लेकर दीवान में आकर फिर एक शीश की मांग की। इस बार दिल्ली के एक जाट धर्मदास ने अपने आपको बलिदान के लिए उपस्थित

किया। गुरु जी उसको भी पर्दे में बिठाकर तथा रक्त से सनी तलवार लेकर पुनः दीवान में आये। तीन बार पुनः पुनः ऐसा करने तथा शीश मांगने के उत्तर में मोहकम चन्द्र छीम्बा, (दर्जी) द्वारिकावासी , जगन्नाथ का हिम्मत झीबर तथा बिदर के नाई साहब चन्द ने बारी-बारी अपने शीश भेंट किये। कुछ समय बीतने के उपरान्त गुरुजी ने पांचों को सुन्दर वस्त्रों में सुसज्जित करके दीवान में ला खड़ा किया । उनको खण्डे (खड्ग) का अमृत पिला कर 'पांच प्यारे' के नाम से सम्मानित किया। इसके उपरान्त उन्होंने स्वयं भी इन्हीं पांच प्यारों के हाथ से अमृत पान किया ।

इसी समय गुरुजी ने इस नये पंथ के नियम, उद्देश्य, मन्तव्य तथा धारणा बताई, जिसको सिक्खी रहत या (जीवनचर्या) कहा जाता है। उन्होंने भविष्य के लिये आदेश दिया कि प्रत्येक सिक्ख इस रहत को माने और धारण करे और इसका पूर्णतः पालन करें। सार इस प्रकार है:-

1. गुरु की सिक्खी धारण करने के लिये खड्ग का अमृत पांच प्यारों से पिये तथा इस समय बताये गये भजन-उपदेश को अपने जीवन में धारण करें। चरणामृत तथा शीत प्रसाद की सिक्खी बिलकुल न ली जावे।

2. कोई सिक्ख एक अकाल के अतिरिक्त किसी देवी-देवता, मढ़ी-मसान (चिता) तीर्थ, मठ, पीरों-फकीरों मजारों आदि को न पूजे । उनकी मन्नतें न मानें । चढ़ावे न चढ़ावें ।

3. पांच ककके (ककार) केश, कंघा , कृपाण, कड़ा, कच्छहरा हर समय शरीर के साथ रखें। शरीर के रोमों को न उतारें । शीश के केश तथा चेहरे पर दाढ़ी स्वाभाविक रूप से रक्खें । शक्ति, साहस रक्षा का चिन्ह कृपाण अथवा तलवार शरीर पर सजावें। लोहे का कड़ा हाथ में पहने । लंगोटी, जांघिया, तहमत आदि न पहनें कच्छहरा पहने ।

4. प्रत्येक सिक्ख अपनी ईमानदारी की आय का दशवांश दान दें। चोरी, डकैती, ठगी, मारधाड़ अथवा हराम की आय को बिल्कुल अंगीकार न करें ।

5. वर्ण-आश्रम, छुआछूत, ऊंच-नीच का त्याग करके मनुष्य जाति को

एक श्रेणी समझें और जीवन में इस का अनुसरण करें । गरीब, दुखिया, अशकत तथा दलित मनुष्य की हर समय सहायता करें। हर प्रकार की विद्या पढ़ें और पढ़ावें। सत्य, उपकार, सेवा को सबसे उच्च समझें तथा समय आने पर इन आदर्शों पर चलते हुए बलिदान देने से पीछे न हटें ।

सांसारिक कार्यों के लिये गुरु जी ने यह रीतियां सिक्खों में प्रचलित की-स्त्रियां सती न हों। विधवा स्त्रियों के पुनर्विवाह हों । कम से कम व्यय करके विवाह करें। घूंघट नहीं निकालना । बालक-बालिकाओं को शिक्षा देना। सादा जीवन व्यतीत करें। स्त्रियां भी भजन करें, वाणी सुनें, उपदेश लें, दीवान में बैठें। बालिकाओं का घात न हो, बल्कि उनका पुत्रों की भांति पालन-पोषण हो । हर एक से प्यार करें। आचार-व्यवहार तथा विचार शुद्ध रखें। पर-स्त्री गमन न करें। शराब, अफीम, तंबाकू तथा शेष मादक वस्तुओं का बिल्कुल त्याग करें। यदि जान-बूझ कर अथवा अनजाने ही इन नियमों का उल्लंघन हो जाए तो संगत में उपस्थित होकर इसका वर्णन तथा पश्चात्ताप कर, संगत से क्षमा मांगें ।

सूर्य प्रकाश और गुरु शोभा पुस्तकों में लिखा है, कि थोड़े ही समय में लगभग 80,000 सिंह बन गये ।

पृथीयों, घीरमल्लियों तथा रामराइयों ने उसी प्रकार निरन्तर विरोध जारी रखा । पांच प्यारों द्वारा (अमृत) लेना, ककार की रैहत तथा सिक्खी धारण करना उस समय की विदेशी तथा साम्प्रदायिक रूप-रेखा पर चल रहे शासन के विरुद्ध एक खुला विद्रोह था। खालसा पंथ की स्थापना के पश्चात् कहलूर नरेश ने गुरु जी को एक पत्र लिखा, कि या तो वह उनकी रियासत छोड़ जावें या उनकी अधीनता मान कर उसको 'कर' दें । गुरुजी ने अधीनता मानने तथा कर देने से इनकार कर दिया । इस पर सारे पहाड़ी नरेश एकत्रित हुए और गुरुजी को आनन्दपुर से निकालने के लिए युद्ध की तैयारियों में लग गये। देहली के सम्राट की सेवा में उन्होंने सहायता के लिए पत्र लिखा। बादशाह औरंगज़ेब उस समय दक्षिण की शिया- मुस्लिम रियासतों के विरुद्ध युद्ध कर रहा था। उसने लाहौर तथा सरहिन्द के सूबेदारों के नाम आदेश

भेजे कि वे गुरु गोबिन्द सिंह जी पर आक्रमण करें ।

सन् 1701 में लाहौर के सूबेदार, सरहिन्द के सूबेदार तथा पहाड़ी नरेशों की सेनाओं ने आनन्दपुर पर संगठित आक्रमण किया और इसको चारों ओर से घेरे में ले लिया। सैनिक दृष्टिकोण से आनन्दपुर का स्थान एक ऐसा ठिकाना है जहां आक्रमणकारी के लिये बचाव करने वाले से कहीं अधिक सैनिक चतुराई तथा सैनिक संगठन की आवश्यकता है। आनन्दपुर की तीन दिशाओं में छोटी-छोटी पहाड़ियां, मिट्टी के टीले आदि की कड़ियाँ, बारह-बारह, चौदह-चौदह मील तक अण्डाकार रूप में घेरा डालते चली जाती है। आनंदपुर के सामने तथा पिछली ओर के प्रदेश में पहाड़ियों में नदी-नाले, चो (पहाड़ी नाला) तथा सतलुज नदी की सात शाखाएं बहती हैं। इस प्रकार के घेरे में पड़े हुए गुरु जी, तथा उनकी सेना को रसद और शस्त्रों की कमी के कष्ट थे । दुश्मन के लिये भी ऐसे प्रदेश में मर मिटने वाले शूरवीरों पर मैदानी युद्ध के समान आक्रमण करना आसानी का काम नहीं था। तीन वर्ष के लम्बे युद्ध में गुरु जी को बहुत कष्ट हुए। अभी तक इस युद्ध के विषय में पूरा-पूरा वृत्तान्त इतिहासकारों की ओर से पाठकों के सम्मुख नहीं आया कि लड़ाई के समय गुरुजी के पास कितनी सेना थी और दुश्मन की सेना की संख्या क्या थी ? आदि ।

युद्ध-लड़ते भूख से विवश होकर माझा प्रदेश के चालीस सिक्खों ने गुरु जी को बेदावा (कोई संबंध न होने की लिखित) लिखकर दे दिया और अपने घरों को लौट गये। अब आनंदपुर में थोड़े से सिख रह गये । दुश्मनों ने गुरुजी को आनन्दपुर का गढ़ छोड़ने को कहा और यह प्रण दिया कि यदि गुरु जी आनन्दपुर का किला छोड़ जायें तो उन्हें रास्ते में कुछ न कहा जायेगा ।

शर्तों का निर्णय होने पर गुरुजी ने अपने कुटुम्ब और सिक्खों के साथ आनन्दपुर छोड़ दिया। दुश्मनों ने सिरसा नदी के किनारे भरतगढ़ के सामने वाले टीले के पास गुरुजी के काफिले पर आक्रमण कर दिया । आक्रमण में गुरु जी की माता गुजरी जी तथा उनके दोनों छोटे सुपुत्र जोरावर

सिंह तथा फतेह सिंह काफिले से पृथक् हो गये। वे गांव खेड़ी के एक नौकर गंगू ब्राह्मण के घर आश्रय लेने के लिये ठहरे। गंगू ने इनाम तथा प्रशंसा प्राप्त करने के लिए इन्हें मोरिंडा के शासक के हवाले कर दिया; जहां से इन्हें सरहिंद के सूबेदार वजीर खान के पास भेज दिया गया। वजीर खां ने इन्हें अति क्रूरतापूर्ण ढंग से मरवा दिया। माता गुजरी जी ने पोतों की मृत्यु का दुःख न सह सकने के कारण प्राण त्याग दिये ।

दूसरी ओर शत्रु सेना ने सिरसा नदी से ही गुरु जी का पीछा किया । गुरु जी के साथ इस समय 40 सिख थे। चमकौर की गढ़ी में गुरु जी तथा उनके साथियों को घेरे में ले लिया गया। सिक्ख सहस्त्रों शत्रुओं से बड़ी शुरवीरता से लड़े । गुरु जी के दोनों पुत्र तथा तीन प्यारे भी शहीद हो गये। अब केवल पांच सिंह शेष रह गये। इन पांचों ने गुरु जी को गढ़ी से निकल जाने की प्रार्थना की। अतः गुरु साहब भेष बदल कर बैरी सेना के बीच से साफ़ निकल गये। यह घटना सन् 1704 की सर्दियों की है ।

चमकौर की गढ़ी से निकल जाने के पश्चात् गुरुजी लगभग 5 वर्ष संसार में रहे। वे माछीवाड़े के बनों में से होते हुए तथा शत्रु की आंखों में धूल झोंकते गांव जटपुरा में पहुंचे। गांव जटपुरा में रहते गुरुजी की जानकारी रायकोट प्रदेश के स्वामी राय कल्ला से हो गई। यहां ही सरहिंद में पुत्रों की मृत्यु की सूचना पहुंची। सरहिंद के सूबेदार वजीर खां को जब पता चला कि गुरुजी अभी जीवित हैं तो उसने एक सेना उनके पीछे लगाई । गुरु जी ने भी आने वाले खतरे को देखकर अपने सिक्ख इकट्ठे कर लिए। मुक्तसर में गुरुजी की सेना का सरहिंद की सेना से युद्ध हुआ, जिसमें सरहिंद की सेना की पराजय हुई। एक लेखक के कथनानुसार इस समय गुरुजी के पास दस बारह हजार के लगभग सिखों की सेना थी। यहीं आनन्दपुर से वे दावा लिखकर दे आए सिक्खों ने पुनः वापिस आकर बलिदान दिए और उनका टूटा संबंध जोड़ा गया। मुक्तसर के युद्ध के पश्चात् गुरुजी साबो की तलवंडी के सरदार डल्ले के पास आकर ठहरे । गुरुजी ने यहां 9 मास रह कर गुरु ग्रन्थ साहिब की बीड़ को तैयार करवाया । इसका नाम दमदमेवाली बीड़

[प्रति] रखा ।

इन्हीं दिनों में गुरु जी ने गांव दीना के गढ़ से एक पत्र 'जफरनामा' के सिरलेख से औरंगज़ेब को लिखा। फलस्वरूप बादशाह ने गुरुजी को मिलने के लिये दक्षिण में बुलाया। गुरुजी अभी राजपुताने के प्रदेश में जालोर ही पहुंचे थे, कि औरंगज़ेब की मृत्यु हो गई । इस पर गुरु जी पुनः मार्च अथवा अप्रैल के महीने सन् 1707 में देहली लौट आये ।

औरंगज़ेब की मृत्यु पर उसके पुत्रों में सिंहासन के उत्तराधिकार के लिये युद्ध होने शुरू हो गये । 30 जून 1707 वाली जाजुए की लड़ाई के समय गुरु जी अपने पुराने मित्र बहादुर शाह के पक्ष में लड़े । बहादुर शाह शाही सिंहासन पर बैठा । उसने आगरे के स्थान पर गुरु जी को एक बहुमुल्य पोशाक तथा 60,000 रु. की एक धुखधुखी उपस्थित की। गुरु जी इसके व्यवहार से बहुत प्रसन्न हुए । अनुमान यह था कि शीघ्र ही शासन तथा गुरु जी के सभी झगड़े समाप्त हो जायेंगे तथा गुरु जी आनन्दपुर वापस आकर सिक्खी के प्रचार में लग जायेंगे। इसी आशा में गुरुजी बादशाह बहादुर शाह के साथ आगरे से आगे चले गये। इस समय गुरुजी के साथ दो या तीन सौ घुड़सवार थे। परन्तु विधाता को कुछ और ही स्वीकार था। बहादुरशाह को राजपुताने के कछवाहे राजा के विरुद्ध और अन्त में दक्षिण में अपने भाई कामबख्श के विरुद्ध युद्ध करने पड़े । गुरु जी ने जब देखा कि बादशाह का मन साफ नहीं और वह अपने वचनों का पालन करने को तैयार नहीं, तब उन्होंने उसका साथ छोड़ दिया और अपने साथियों समेत सितम्बर में गोदावरी नदी के किनारे नांदेड़ आकर ठहर गये। यहां ही माधवदास बैरागी उनका बन्दा अथवा सिक्ख बना ।

सरहिंद के सूबेदार वजीर खां को गुरु जी की बादशाह बहादुर शाह से मित्रता का पता चल गया था। उसको भय था कि गुरु जी बादशाह से अपने निर्दोष बच्चों के घात के लिये न्याय की मांग करेंगे। फलस्वरूप वजीर खां पर शाही दंड आना आवश्यक था। इसी कारण वजीर खां गुरु जी को मरवाने के लिये षड्यंत्र कर रहा था। इस काम के लिये उसने दो पठानों को

सरहिंद से नांदेड़ भेजा । उन्होंने गुरु जी के साथ मित्रता पैदा की। एक दिन रात के पहले पहर जब गुरु जी सोने लगे तो एक पठान ने उनके पेट में छुरा भोंक दिया। तत्काल ही गुरु जी ने चुस्ती से पठान का सिर कटार से उतार दिया। दूसरा पठान भाग निकला, जिसको सिक्खों ने शीघ्र ही तलवार से काट दिया। पेट का घाव सिला गया और गुरु जी निरोग होने आरम्भ हो गये । एक दिन एक कठोर धनुष का चिल्ला चढ़ाते समय घाव फट गया जिस कारण बहुत रक्त बह निकला । 7 अक्टूबर 1708 की आधी रात को गुरु जी ने अपने सिक्खों को जगाया; अन्तिम जयकार बुलाई ।

❋

अध्याय (काण्ड)-2

गुरु गोविन्द सिंह जी के आनन्दपुर छोड़ते ही सिक्खी प्रचार का नया बनाया हुआ केन्द्र भी शत्रुओं ने लूट कर उजाड़ दिया। पूर्व गुरुओं के बताये प्रचार केन्द्र करतारपुर, खडूर, गोविन्दवाल, अमृतसर, कीरतपुर , बाबा बकाला तथा मन्जियां, बख्शीशें , धुएं, संगतों के स्थान थे। इनके मुखियों ने खण्डे की पाहुल (अमृत) तथा ककारों की सिक्खी का प्रचार सम्वत् 1699 (1699) में अथवा खालसा सजाने के समय से आरम्भ कर दिया था अथवा नहीं; इसका उत्तर हमें सिक्ख इतिहास की पुस्तकों में नहीं मिलता । इन केन्द्रीय स्थानों में से अक्सर स्थान पृथिये, धीर- मल्लियों, रामराइयों, मसन्दों अथवा उदासी साधुओं के अधिकार में थे । वे अपने ढंग से गुरु नानक देव जी के नाम पर अपनी सिक्खी-सेवकी फैला कर सीधी सादी जनता से भेंट अथवा चढ़ावा लेते थे। ऐसे सज्जनों में बहु-संख्या गुरु-वंशी सोढियों तथा बेदियों की थी । पांचवें गुरु जी ने बाबा बूढ़ा जी को हरिमन्दिर साहिब जी का पहला ग्रन्थी बना कर जाटों को भी धर्मोपदेश देने का अधिकार दिया था। इसके पश्चात् बांगर के रनधावों, स्वरसिंघ के सन्धुओं, पट्टी प्रदेश के ढिलवों, हठाठ सतलुज के सिधुओं, गुजरात के लुबानों तथा लम्बे के कम्बोजों में से जाट, लुबाने तथा कम्बोज अपने 2 प्रदेशों की संगतों के मुखिया बनकर सिक्खी प्रचार करने लगे ।

जब गुरु गोबिंद सिंह जी ने खण्डे पाहुल की सिक्खी फैलाई, तो प्रतीत होता है कि पहले-पहल सिक्खी की आधुनिक रीति और पहनावा, आदि गांवों में रहकर कृषि का कार्य करने वाले जाटों, बढ़इयों, कम्बोजों, लुबानों, रहतियों, रविदासिया तथा मजहबी सिखों ने ही धारण किया । खालसा पंथ के निर्माण से लगभग 70 वर्ष तक केशधारी सिक्खी को धारण करना हर समय मृत्यु के मुंह में रहने के समान था ।

सन् 1708 से 1716 तक बाबा बन्दा (बन्दा वैरागी) तथा उसके

साथियों ने, जिनमें से अधिकांश ने गुरु जी के साथ दुखों और कष्टों को सहन किया था, पंजाब में पहुंच कर सरहिन्द के अत्याचारी सूबेदार और सिक्खों पर अत्याचार करने वालों को कड़े दंड दिये। इन 8 सालों में सूबा सरहिन्द के प्रदेश तथा जालंधर के द्वाबे में खण्डे की पाहुल तथा केशधारी सिक्खी का प्रचार हुआ। दो-चार वर्ष यह आन्दोलन बड़ी तीव्रता से चला, परन्तु जब शाही सेना ने सिक्खों तथा बाबा बन्दा को बिल्कुल नष्ट करने के आदेशों को मानकर बदले की भावनाओं से आक्रमण किया तो उनमें से अधिकांश दाढ़ियो को मुंढवा कर फिर पुरातन भाईचारे में मिल गये।

सिक्खों में भी कई प्रकार की दरारें आ गई तथा बाबा विनोद सिंह जी आदि कई पुरातन सिक्ख बाबा बन्दे को छोड़ गये। शाही सेना ने बाबा बन्दा तथा उसकी सेना को गुरदास नंगल की कच्ची गढ़ी में घेर लिया। उन्हें साथियों समेत पकड़ कर देहली लाया गया तथा 29 फरवरी 1716 को इनका जलूस निकाला गया। जलूस में सबसे आगे दो हजार सिक्खों के कटे हुए सिर बाँसों पर लटकाये हुए थे । इनके पीछे बाबा बन्दा हाथी पर लोहे के पिंजरे में बन्द किये हुए थे । इसके पीछे 740 सिक्ख दो-दो तीन-तीन की संख्या में बांध कर ऊंटों पर डाले हुए थे ।

नगर निवासी इस समारोह को देखने आये हुए थे। लाहौरी दरवाजे से कई मील तक दोनों ओर सैनिक खड़े थे । मुसलमान तो अत्यंत प्रसन्न थे । बंधे हुए सिक्खों के मुखों पर कोई निराशा न थी । वह प्रसन्न प्रतीत होते थे। उनको मरने का कोई भय न था। ऊंटों की नग्न कोहानों पर बंधे वह गीतों का गायन कर रहे थे। यदि बाहर खड़ा कोई भली-बुरी बात कहता तो सिक्ख उत्तर देते कि यह सब "हुक्म का कार्य हो रहा है," यदि कोई कहता कि अब तुम्हारा घात किया जावेगा तो उत्तर देते, "शीघ्र पार बुलाओ ।"

5 मार्च सन् 1716 या गुरु तेग बहादुर जी के बलिदान से लगभग 40 वर्ष पश्चात् उसी पुरातन स्थान, कोतवाली के चबूतरे पर सिक्खों को कत्ल करना शुरू किया गया। एक दिन में एक सौ सिक्खों के सिर उतारे जाते । जीवनदान की शर्त इस्लाम मत को स्वीकार करना बतलाई गई थी,

परन्तु एक भी सिक्ख ने अपने धर्म को पीठ न दी।

बन्दियों में एक युवावस्था का युवक भी था। उसकी मां के रोने-पीटने और बादशाह को यह बताने पर कि उसका पुत्र सिक्ख है नहीं, बादशाह ने उसकी मुक्ति का आदेश दे दिया। कोतवाल ने शाही आदेशानुसार युवक को छोड़ दिया। युवक को जब असली बात का पता चला, तो उसने चिल्लाकर कहा, "मेरी माता झूठ बोलती है। मैं तन-मन से गुरु का शिष्य हूं। मुझे शीघ्र मेरे साथियों से मिलाओ, मैं पीछे रह रहा हूं।" इस पर उसको भी कत्ल कर दिया गया। शाही आज्ञानुसार दिन में कत्ल किये गये शरीरों को रात समय गाड़ियों पर लादकर शहर से बाहर सड़कों के किनारे के वृक्षों पर लटका दिया जाता, ताकि लोगों के दिल डर जायें तथा वे शासन के विरुद्ध किसी कार्य में भाग लेने का साहस न कर सकें ।

9 जून 1716 को बाबा बन्दा जी तथा उसके 26 साथियों का जलूस निकाल कर देहली से ख्वाजा कुतुबुद्दीन बुख्तियार काकी के मजार पर लाया गया। उनको मृत्यु अथवा इस्लाम दोनों में से एक बात स्वीकार करने की शर्त पेश की गई । बाबा बन्दा जी ने मृत्यु से धर्म को कहीं उच्च बताकर मृत्यु स्वीकार कर ली। इस पर उसको अपने बालक अजय सिंह को गोदी में बिठाकर मार देने का आदेश दिया गया। इन्कार कर देने पर बच्चे के टुकड़े कर दिये गये तथा उसका तड़फता हुआ दिल निकाल उनके मुंह में दे दिया गया। बाबा बन्दा जी मूर्तिवत् मूक खड़े रहे। सबसे पहले उनकी दाई आंख और फिर बाईं आंख निकाल दी गई। इसके पश्चात् उनके पैर काटे गये । गर्म सुलाखों से और जम्बूरों से उनके शरीर में से टुकड़े टुकड़े करके मांस तोड़ा गया और अन्त में उनका सिर उतार दिया गया ।

बाबा बन्दा जी तथा उनके साथियों के बलिदान के पश्चात् बादशाह फर्रुखसियर के आदेशानुसार केशधारी सिक्खों पर अत्याचार के बारे चलन आरम्भ हो गये। इस आज्ञानुसार सिक्खों में जो केशधारी इस्लाम ग्रहण करने से इनकार करता था, कत्ल कर दिया जाता था। सिक्खों के सिर काट कर लाने वालों को इनाम दिये जाने आरम्भ हुए । सैकड़ों की संख्या में सिक्ख,

गांवों से पकड़-पकड़ कर लाये गये तथा कत्ल किये गये। इस भय के कारण कई केश रखने वालों ने केश मुंढवा दिये । केशधारी सिक्ख पहाड़ों तथा वनों में जा छिपे । धीर मल्लिये, रामराइये तथा मसन्दों के सिक्ख, लगोटियां पहनने वाले, तम्बाकू पीनेवाले एवं बालिकाओं को मारने वाले जैसे के तैसे टिके रहे। सन् 1721 तक केशधारियों को मृत्यु का आलिंगन इसी प्रकार करना पड़ा।

सन् 1720 की दिवाली के मेले पर तत्त खालसा तथा बंदई खालसा के दोनों दल दरबार साहिब (अमृतसर) पर अपना अपना अधिकार करने के लिये पूरी तैयारी करके एकत्रित हुए। माता सुन्दरी ने दिल्ली से भाई मनीसिंह तथा मामा कृपाल सिंह को यह झगड़ा निबटाने के लिये भेजा। उनके प्रयत्न से आपस में मिलाप हो गया और भाई मनी सिंह जी को सबकी सम्मति से हरमंदिर साहिब अमृतसर जी का मुख्य ग्रन्थी नियुक्त किया गया । गुरु हरगोबिंन्द जी के अमृतसर छोड़ने के 90 साल पश्चात् अमृतसर केशधारी और खण्डे के अमृत की सिक्खी और प्रचार का केन्द्र बना ।

लाहौर का सूबेदार अब्दुल समद खां और उसका पुत्र जकरिया खां जो कुछ समय के बाद लाहौर का सूबेदार बना, सिक्खों के कट्टर बैरी थे । वह सिक्खों का सर्वनाश करना चाहते थे । 1726 में जकरिया खां ने गश्ती सेनाएं सिक्खों को पकड़ने के लिये भेजीं। सिक्ख गांवों से पकड़ कर लाये जाते तथा लाहौर नखास और घोड़ामण्डी में कत्ल किये जाते । सूबेदारों के इस अत्याचार के कारण माझा प्रदेश के सिक्ख पुनः जंगलों और पहाड़ों की ओर चले गये। यद्यपि शासन उनके विरुद्ध होता था, परन्तु जन साधारण उनकी सहायता करते, आश्रय देते तथा धन भी पहुंचाते । शासन के साथ उनकी कभी संधि हो जाती, कभी लड़ाई और बैर । 1734 ई. में सिक्खों के भी दो दल हो गये। बुढ़ा दल तथा तरुणा दल । 1738 में भाई मनी सिंह शासन के हाथों शहीद हुए और केशधारी सिक्खों पर पुनः शासन की ओर से अत्याचार आरम्भ हुए। 1738 तक यही स्थिति रही और सिक्ख धर्म का प्रचार प्रसार रुका रहा। उन दिनों जत्थेदार अमृत छकाते तथा धर्म प्रचार

किया करते थे ।

सन् 1748 से 1849 के मध्य का समय सिक्खों के राजनीतिक जीवन के बड़े-बड़े उतार-चढ़ावों से भरा हुआ है। सिक्खों के जत्थों ने पहले पचास साल में ईरान और अफगानिस्तान के बादशाहों तथा देहली शासन के सूबेदारों से, टक्करें लेकर पंजाब को विदेशी शासन की पराधीनता से मुक्त कराया। सन् 1800 में करनाल से रावलपिंडी प्रदेश तक सिक्ख सरदारों, नरेशों, रईसों के राज्य बन गये। इन्हीं दिनों, खंडे के अमृत की सिक्खी , और सिक्ख धर्म का अच्छा प्रचार हुआ । सन् 1800 से 1850 तक लाहौर दरबार के प्रदेशों को अंग्रेज़ी शासन द्वारा हिन्दुस्तान के साथ मिलाये जाने के समय में बहुत से लोगों ने केश रख लिये तथा खण्डे की पाहुल लेनी आरम्भ की। लाहौर दरबार में महाराजा रणजीत सिंह के जीवनकाल में ही पुनः सनातन ब्राह्मण मतानुसार रीतियां, मर्यादा, व्यवहार तथा संस्कार करवाने का जोर हो गया था। साहब सिंह बेदी और आनन्दपुर आदि के सोढियों ने पुनः लोगों को अपने सिक्ख बनाना आरम्भ किया। सन् 1850 तक यद्यपि सिक्खों की संख्या बढ़ गई थी, परन्तु साधारण सिक्ख, राजाओं महाराजाओं, रईसों के देखादेखी पुनः ब्राह्मण रीतियों और मर्यादाओं को अपना रहे थे । दूसरी ओर सोढी, बेदी, अपनी सिक्खी सेवकी की वृद्धि में लगे हुए थे। चरणामृत की रीति फिर स्थापित होती जा रही थी। धन और शासन हाथ में आने से ,सिक्ख, भोग विलास में पड़ गये थे । धनवान् सिक्ख ,कई विवाह करने, मुसलमान कंचनियों को रखने और मदिरा पीने में सबको पीछे छोड़ गये थे। गुरुद्वारों के पुजारी, महंत, धर्म, आचरण तथा मानवता से पतित हो चुके थे। उदासी साधु जो त्याग के प्रतीक थे, विवाह करवाकर गुरुद्वारों के धन-धान्य और भेंटों को अपनी व्यक्तिगत आय की भांति व्यय कर रहे थे। इस समय सिक्ख जनता का कोई आध्यात्मिक नेता नहीं था ।

अंग्रेजों ने सन् 1849 में महाराजा रणजीत सिंह के उत्तराधिकारी महाराजा दलीप सिंह को सिंहासन से उतार कर पंजाब को अपने राज्य में मिला लिया । इससे भारत में अंग्रेज़ी राज्य की सीमाएं हिन्द महासागर से

लेकर सिंधु नदी के पार खैबर तक पहुंच गई। इसके 7 साल पश्चात् संवत 1914 में नामधारी आन्दोलन की नींव रक्खी गई। इस आन्दोलन का सीधा प्रभाव सिख धर्म प्रचार, सिक्ख जीवन तथा पंजाब की राजनीति पर पड़ा। इसके पश्चात् 90 साल अर्थात् सन् 1947 तक अंग्रेज़ी शासन के विदेशी और देशी कर्मचारियों को इस आन्दोलन के भस्म ढेरों में भी ऐसी चिनगारियों का संदेह होता रहा, जो किसी समय ज्वाला का रूप धारण करके ब्रिटिश राज्य के लिये भयानक विनाश का कारण बन सकती थीं। अन्याय, अत्याचार, दमन, दुःख, कारागार, झूठे मुकदमे तथा जायदादों की जबतियां एवं नामधारियों को नाश करने में असफल रहे ।

अंग्रेज़ भारत को छोड़ गये । जाते जाते भारत का पाकिस्तान तथा हिंदुस्तान के नाम पर विभाजन करके पृथक् देश बना कर पृथक् शासन स्थापित कर गये । हिन्दुस्तान का शासन गांधी जी तथा नेहरू जी के नेतृत्व में कांग्रेसी नेताओं के सुपुर्द किया और पाकिस्तान की हुकूमत जनाब जिन्ना तथा लियाकत अली खां मुस्लिम लीग के नेताओं को सौंप दी गई। यह परिवर्तन केवल उच्च शासकों तथा विभिन्न विभागों के उच्च अधिकारियों का ही हुआ। शासन का काम चलाने वाले शेष कर्मचारी वही पुराने सज्जन हैं।

शासन में परिवर्तन से पंजाब की जनता के नेताओं में भी आश्चर्यजनक परिवर्तन आये। कांग्रेस पार्टी का मंत्रिमंडल बना । 15 अगस्त 1947 तक साम्प्रदायिकता की प्रज्वलित भट्टियों में ईंधन डालने वाले रात भर में पुराने देखे-भाले हुए देशभक्त कांग्रेसी बन गये । कांग्रेसी सदस्य होने की शर्त तन-मन-धन की सेवा की बजाय चौअन्नी मात्र चंदा रह गई । 90 साल अंग्रेज़ी राज्य के साथ पूर्ण असहयोग रखने, स्वदेशी वस्त्रों को प्रयोग करने, खादी पहनने, अंग्रेज शासकों को 'बिल्ला' कहकर पुकारने वाले नामधारी सिक्ख स्वाधीनता मिलने की प्रसन्नता में मग्न है, और अपने पुराने कार्यक्रम के अनुसार देश सेवा में जुटे हुए हैं।

नामधारी नेता गुरु राम सिंह जी, जीवन के पहले 40 वर्ष

नामधारी आन्दोलन के संचालक गुरु राम सिंह जी का प्रकाश माघ शुदि 5 संवत 1872 वि. तदनुसार 3 फ़रवरी सन् 1816 ई. के दिन हिठाड़-सतलुज के ज़िला लुधियाना , पंजाब के गांव भैणी में हुआ । इनके पिता का नाम जस्सा (गांव के लोग लक्खा कहकर भी बुलाते) तथा माता का नाम सदा कौर था। सदा कौर , गांव नंगल के बढ़इयों की पुत्री थी। भाई जस्सा गांव में बढ़ई का काम करता था । सांझी, बटाई, चुकौते तथा जोड़ी की कृषि करके वह अच्छी आय पैदा कर लेता था। खेती-बारानी ही होती थी। कुओं के पानी साठ-साठ सत्तर-सत्तर हाथ नीचे थे । मोटा अन्न जौं, चने, बाजरा, ज्वार, मूंग, मोठ ही पैदा होते थे। लोग गाय रखते थे । भैंसे इस प्रदेश में बहुत कम थी। कच्चे झोपड़े, छोटे घर कुटुम्बों के रहने के लिये तथा बाहर की ओर छप्पर की झोपड़ी ढोरों के लिये होती थी ।

जिस वातावरण में आपकी बाल्यावस्था व्यतीत हुई, वह एक सीधा-सादा आज से 200 वर्ष पहले का ग्रामीण जीवन था। पिता मेहनत करके रोटी उत्पन्न करता और माता भगवान का धन्यवाद करके घर का कामकाज चलाती थी। खाना बनाती, आटा पीसती और गाय-बैलों को संभालती ।

आपके छोटे भाई बुद्ध सिंह जी आप से चार वर्ष छोटे थे । आपकी एक बहन साहब कौर, जो रायपुर के काबुल सिंह से ब्याही हुई थी । छोटे से कुटुम्ब में जेष्ठ होने के कारण माता-पिता अच्छा ख्याल रखते थे। छोटे भाई-बहिन हर बात को मानते थे। निर्धन श्रमिकों के घर की भांति कुटुम्ब के जीवों का परस्पर बहुत प्रेम और स्नेह था । कलह- क्लेश का नाम नहीं था । न रूठना, ना मारपीट, न पारिवारिक लड़ाई और न पड़ौस से डाह । पिता जी की बैठक गांव के बुद्धिमान पुरुषों के बैठने का स्थान था और इसके सामने का स्थान बालकों के खेलने की जगह थी । घर के सामने खेलने

वाले बालकों तथा बातें करते हुए बुद्धिमानों का आना जाना बना रहता । गांव के कई कुटुम्बों के मुखिया बाबा जस्सा से हर्ष शोक के समय, लड़के-लड़कियों को शादियों की मौकों पर तथा विवाहित लड़कों को पृथक् करने या साथ रखने के विषय में सम्मति लेते ।

भैणी, छोटा-सा माजरा गांव है। भूमि के स्वामी राय जाट इसमें बसते हैं। साथ के दस बारह गांवों में मांगट गोत्र के जाट बसते हैं। साहनेवाल सन्धु जाटों का गढ़ है। मांगटों के साथ जरग धमोट में धालीवाल गोत्र के जाट है। इससे आगे झल्ली गिल्ल जाट । भैणी के पास ही पश्चिम की ओर गरेवाल जाटों का 22 गांवों का पर्गना है। उत्तर की ओर बूढ़े दरिया के पास मुसलमान गुजर रहते थे ।

भैणी में भूमि का स्वामित्व हल चलाने वाले जाटों का था । संगठित टोलियां, अपनी खेती करती थीं । भूमि रेतीली है। एक दो बार हल चलाया, बीज फेंका तथा पकने पर कटाई कर ली । गांवों के एक-दो कुओं पर चर्स की सिंचाई से पूरी पत्ती, (गांव का एक हिस्सा) थोड़ी-थोड़ी भूमि बीज लेती। काम अधिक नहीं होता था। लोग अवकाश में कुश्ती लड़ते, सोंची पक्की खेलते, गतका के हाथ सीखते सिखाते और मुगदर उठाते ।

गांव का कारीगर बाढ़ी अथवा तरखान भारत के गांवों की जनता के जीवन का एक आवश्यक अंग है । गांवों में इनकी जन-संख्या पच्चीस या तीस हल के पीछे एक घर की होती है। वह अपने कारखाने में हल बनाता है । पटेला काटता है। खुर्पा, दरांती, कुल्हाड़ी तथा फावड़ा से लेकर गड्डों तक के किसानी औजार बनाता और ठीक-ठाक रखता है । घरों की वस्तुएं खाट-खटोला, चरखा, बेलन, छलनी सब वही बनाता है। गांव के नये, कच्चे पक्के रिहायशी घर बनाने में भी उसकी सम्मति अनुसार काम होता है। विवाह की बेदी भी वही बनाता है, तथा मृत्यु का विमान भी इसी का बनाया हुआ होता है । इसका अड्डा और इसकी लोहगार गांव के हर प्रकार के पुरुषों-धनवान, निर्धन, शरीफ तथा बदमाश के उठने बैठने का स्थान होता है। किसानों की बहू-बेटियों का आना जाना उसके घर तथा कारखाने

में बना रहता है । गांव की पंचायत में उसका मुख्य स्थान होता है, इसलिये उसका उच्च आचरण वाला, शुभ सम्मति देने वाला, भले-बुरे की पहचान करने वाला, तथा बुद्धिमान होना अति आवश्यक है। इसी श्रेणी में होने के कारण बाबा जस्सा में यह गुण स्वाभाविक रूप से थे। सारा गांव उनका सम्मान करता था ।

जब से गुरु हरराय जी ने बागड़ियां के भाई रूपा बढ़ई को "बख्शीश " देकर सिख धर्म के प्रचार के लिये मालवे की सिक्ख संगतों का नेता बनाया था, तब से इन प्रदेशों के बहुत से बढ़ई शिल्पियों ने गुरु नानक देव जी की सिक्खी धारण कर ली थी। मिसलों के समय रामगढ़ किले वाले जस्सा सिंह ने बटाले के आस-पास अपना राज्य स्थापित कर लिया था । भाई रूपा जी के वंशज सिद्धू राजाओं, सिक्ख सरदारों तथा सिद्धू जनता के राजगुरु तथा धार्मिक नेता लगभग 1800 ई. के समय से माने जा रहे थे । पंजाब के जाटों तथा बढ़इयों के गोत्र एक ही हैं। अनुमान है कि किसी समय आवश्यकता होने पर जाटों में से बुद्धिमान तथा होशियार नवयुवकों ने यह व्यवसाय अपना लिया था। बढ़इयों का इस प्रकार धार्मिक नेता बनना तथा रामगढ़िया मिसल (सिक्खों का जत्था) की रियासत स्थापित होने से माझा (अमृतसर, लाहौर, गुरदासपुर के प्रदेश) गांव के सारे बढ़ई शिल्पियों ने केश रखना तथा खंडे का अमृत लेना आरम्भ कर दिया था। सतलुज दरिया के इस पार में देखादेखी केश रखने का रिवाज तो था, परन्तु खंडे के अमृत का रिवाज कम था। बाबा जस्सा ने भी केश तो रखे हुए थे, परन्तु खंडे का अमृत नहीं लिया था। दिन भर काम-काज करके रात्रि को वह राम राम कर लेता ।

पांच वर्ष की आयु में आपकी सगाई गांव धरोड़ के साहबू नामी बढ़ई की पुत्री जस्सां के साथ हुई और सात वर्ष की आयु में आपका विवाह भी हो गया। आपने बाल्यावस्था में ही गुरुमुखी अक्षरों की वर्णमाला अपनी माता जी से पढ़ी । आठ वर्ष की आयु तक कई बाणियां भी आपने कंठस्थ कर ली तथा प्रातः और संध्या अकेले बैठ कर इनके पाठ नित्यप्रति करने

लगे। नौ वर्ष की आयु में घर के कामों में हाथ बटाने लगे। गांव के ग्वालों के साथ गायें लेकर चले जाते । खेतों की खुली हवा में लड़कों के साथ ढोर चराते । कबड्डी, कुश्ती, दौड़ आदि खेलों में पूरा भाग लेते। लड़के इकहरी तथा लड़ीबार बोलियां (लोक-काव्य का एक रूप) कहते । ढोर चराने वाले बूढ़े हीर-रांझा, मिर्जा साहिबां की कलियां, तथा लोक-काव्य का दूसरा रूप गाते और टप्पे, दोहरे, कवित्त कहते। आप अपनी छड़ी पर खुर्पा मार कर ताल निकालते और शब्द (गुरुवाणी) पढ़ते। इससे आपके साथी मखौल करते और हैरान होते । धीरे-धीरे इनके कई साथी भी शब्दों का अलाप करने लगे । ढोर चराने वाले लड़कों का जीवन अनुशासन में रहने का अच्छा उदाहरण होता है । उनमें बड़ी आयु का किशोर नेता बन कर ढोर फेरने की बारी बांधता है अथवा बारी-बारी प्रत्येक को आदेश देता है। सब उसके आदेश का पालन करके ढोरों को फेरते हैं। यदि आपस में झगड़ा हो जाये तो ढोर चराने वाले वृद्ध बात निबटा देते हैं। बाल्यावस्था से ही बालकों में पारस्परिक मेल-मिलाप, भ्रातृ-भाव तथा मिल कर काम करने की सूझ-बूझ आती है । ढोर चराने की अवस्था बारह तेरह वर्ष तक रहती है और लड़के इन्हीं दिनों में हृष्ट-पुष्ट हो जाते हैं एवं बहुत कुछ जान लेते हैं। गुरु राम सिंह जी ने इस जीवन से बहुत कुछ सीखा इस समय बने हुए कई मित्रों ने अन्त तक आपका साथ निभाया ।

बाबा जस्सा ने एक बार आपको गांव बिलगा के एक साधु के पास शिक्षा के लिये भेजा, परन्तु आप थोड़े समय पढ़ कर वापिस भैणी आ गये और घर का कामकाज करने लगे। माता सदा कौर धार्मिक वृत्ति वाली थी । उनको बाणियां भी याद थीं और कहानियां भी । अतः उसने वाणियां कंठस्थ करवा कर तथा रात को सोने से पहले कहानियां सुना-सुना कर अपने प्रिय पुत्र के कोमल हृदय पर श्रद्धा, भक्ति, निर्भयता तथा दृढ़ता के अमिट भाव अंकित कर दिये ।

सुदृढ़, बलशाली भुजाओं वाले नवयुवकों तथा जीवन में कुछ कर दिखाने वाले मनुष्यों के लिए उस समय दरबारों की फौजी नौकरी उदरपूर्ति

का सबसे उत्तम व्यवसाय माना जाता था। खेती तथा बढ़ई के काम में लगे रहकर गांव में जीवन व्यतीत करना आपको भी नहीं भाता था। नाहीं इसमें आपका मन लगता था। घर में बातचीत हुई कि आपको सेना में भर्ती करवा दिया जावे, क्योंकि घर का काम छोटा भाई भी चला सकेगा । नौकरी से दोनों बातें होंगी, आय भी तथा सम्मान भी ।

सन् 1836 में आपका बहनोई काबुल सिंह लाहौर से अपने गांव रायपुर छुट्टी पर आया । काबुल सिंह लाहौर दरबार के तोपखाने में गोलंदाज था। नौकरी पर वापिस जाता हुआ काबुल सिंह आपको अपने साथ लाहौर ले गया और आपको सेना में भर्ती करवा दिया। गांव बड़ा चक रियासत मलेरकोटले का निवासी भाई काहन सिंह आपके भर्ती होने के समय रेजिमेंट में हवलदार था।

सैनिक जीवन में आपने भजन-बन्दगी की ओर बहुत ध्यान दिया। सेना में रहकर ही आपने शिक्षा प्राप्त की तथा जीवन को नवीन सांचे में ढाला। सैनिक जीवन का प्रभाव प्रत्येक सैनिक पर होता है। निर्भयता, लक्ष्य पूर्ति, समय की पाबंदी, सीधे ढंग से बात को सोचना और कहना, साथियों से मिलकर चलना आदि गुण सैनिक शिक्षा से मनुष्य में अपने आप ही आ जाते हैं। इकट्ठे रहने से शिष्टाचार के ढंग एवं शुभ गुण सीखने का अवसर मिल जाता है। फौजों में भजन बन्दगी वाले पवित्र पुरुष भी होते हैं तथा गुंडे लफंगे भी ।

राम सिंह जी ने सेना में नौकर होकर अपनी वृत्ति भजन-बन्दगी, सेवा तवा शुभ कार्यों की ओर लगा दी। सैनिक काम से अवकाश पाकर गुरुद्वारों के दर्शन करते, और वाणी का कीर्तन सुनते। सरदार काहन सिंह श्रेष्ठ स्वभाव तथा अच्छे गुणों वाला मनुष्य था, अतः आपके साथ उसका प्रेम हो गया । पवित्र जीवन तथा नाम स्मरण करने वाले, माझा द्वाबा और गुजरांवाला के प्रदेशों के सैनिक जिनमें से अधिकांश ने नामधारी सिद्धांत स्वीकार कर लिये थे इसी समय आपके मित्र बने। आपको धार्मिक वृत्ति वाला जान कर आपके संगी भाई राम सिंह के नाम से बुलाने लगे थे । भाई

शब्द ऐसे सज्जन का ज्ञापक है, जो स्वयं पवित्र जीवन वाला होने के अतिरिक्त अच्छे लोगों का नेता भी हो। जिस रेजिमेंट में आप थे, उसका उपनाम भक्तों की रेजिमेंट प्रसिद्ध हो गया ।

सन् 1839 में महाराजा रणजीत सिंह मृत्यु को प्राप्त हो गये। 40 वर्ष के शासन के समय उन्होंने सिक्ख सरदारों, मुसलमान नवाबों तथा हिन्दू राजाओं के प्रदेशों को तलवार के बल से जीत कर अपना राज्य सतलुज से लेकर खैबर पार जमरोद तक स्थापित कर लिया था। यह शासन वास्तव में पंजाबियों का शासन था। सेना में अधिक संख्या सिक्खों की थी, जो सदा ही रण-क्षेत्रों में आगे होकर लड़ते थे। जनरल हरि सिंह नलवा, बाबा फूला सिंह अकाली, सरदार अमर सिंह मजीठिया, धन्ना सिंह मलवयी सदा ही शत्रुओं से लड़ते रहते । नागरिक शासन के बड़े-बड़े पदों तथा प्रान्तों के सूबेदार और शासक हिन्दू तथा मुसलमान थे। इन 40 वर्षों में बहुत से सिक्ख जागीरें प्राप्त करके अमीर आदमी बन गये । केशधारी सिक्खी का भी प्रचार हुआ । सेनाओं में खंडे का पाहुल सिक्खों को दिया जाता था । बहुत से ऐतिहासिक गुरुद्वारों के नये भवन महाराजा ने सरकारी लागत पर बनवाये और उनके साथ जागीरें भी लगाई।

गुरु गोविन्द सिंह जी के खण्डे का अमृत छका कर केशधारी सिंह बनाने के समय से लेकर महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के समय तक सिख मर्यादा तथा रहन-सहन में कई प्रकार के उतार-चढ़ाव एवं परिवर्तन आये । गुरु गोबिन्द सिंह जी ने आनन्दपुर को छोड़ते समय गुरुद्वारे के सुपुर्देदार की पदवी एक गुलाब राय नामक उदासी साधु को दी थी। साधु जी ने सुपुर्देदार के पद में अपना मान होते देख कर तथा चढ़ावे की माया से सहज ही अमीराना ठाठ में आ जाने के कारण अपनी ही सिक्खी सेवकी शुरू कर दी। गंगूसाहियों ने भो गंगूसाही सिक्ख बनाने की प्रथा चला दी । दमदमा साहब के ठिकाने के समय गुरु गोबिंद सिंह जी ने स्वयं, खण्डे का अमृत पान करने और केशधारी सिक्खी धारण करने का प्रचार किया। श्री गुरु ग्रन्थ साहब की बीड़ (प्रति) तैयार करवाई तथा पठन-पाठन की रीति चलाई। प्रचार के लिये

वाणी के अर्थ संगतों को स्वयं सुनाये तथा ज्ञानी 'सिंह' तैयार किये। दमदमा साहब को छोड़ने से लेकर ज्योति में ज्योति समाने के समय तक आप तथा आपके साथ रहने वाले शिष्य जिनकी संख्या कई बार दो सौ से तीन सौ तक होती थी, खन्डे का अमृत तथा केशाधारी सिक्खी का प्रचार करते रहे। बाबा बन्दा के साथ भेजे गये हजूरी सिंहों ने पुनः पंजाब में आकर इसका तीव्रता से प्रचार किया। बाबा बन्दा के बलिदान से पहले ही सिक्खों में दो दल बन गये थे। बुन्दई सिक्ख तथा तत्त्व खालसा । बुन्दई सिक्खों ने अपनी रीति मर्यादा पृथक् कर ली थी । पृथक् महन्त बना लिये थे । सन् 1734 में तत्त्व खालसा के भी दो दल हो गये । बूढ़ा दल तथा तरुण दल । दलों के जत्थेदार नवाब कपूर सिंह, बाबा जस्सा सिंह, बाबा सुद्धा सिंह आदि खण्डे का अमृत छकाते और सिंह बनाते थे । 1765 में सिक्खों ने सरहिन्द की सूबेदारी का प्रदेश जीत कर बांट लिया। इस समय सब मिसलों, जत्थों एवं पत्तीदारों के नेता सम्मिलित थे। प्रत्येक जत्थेदार नेता को उसके सिपाहियों की गिनती के भाग के अनुसार भूमि मिली । सवारों ने अन्धाधुन्ध घोड़े भगा-भगाकर हर गांव में अपना चिन्ह रखकर अपने इलाके थाप लिये। रात ही रात निर्धन से निर्धन सिक्ख सैनिक जागीरदार बन गये । कई मनचले कई-कई गांवों के स्वामी सरदार हो गये । तप्पों पर अधिकार करने वाले राजा बने। स्वामित्व स्थापित करने का यह फल निकला कि स्थान-स्थान पर जाकर सिक्खी को फैलाने वाले नेता, अपनी नई प्राप्त की हुई जायदादों के प्रबन्ध में लग गये और उन्होंने धर्म प्रचार का काम बिल्कुल ही छोड़ दिया।

सम्पत्तियों तथा धन-धान्य से प्राप्त ऐश्वर्य भोगने के लिये लगभग सारे ही नये बने जागीरदारों, सरदारों तथा राजाओं ने मदिरा पीना, कई विवाह करना और मुसलमान नवाबों की नकल, मुसलमान रंडियां रखनी आरम्भ कर दी ।

सिक्ख धर्म के प्रचार का काम उदासियों, निर्मलों, गुरुवंशी सोढियों, बेदियों तथा सरकारी जागीरें प्राप्त करने वाले महन्तों और पुजारियों के हाथ आ गया । इसी कारण सिक्खों की मर्यादा में महाराजा रणजीत सिंह के

समय में कई ऐसे परिवर्तन आ चुके थे जो सिक्खों के ऊंचे उद्देश्यों के बिल्कुल विपरीत थे।

निर्मले तथा उदासी अपने ही ढंग से सिक्खी का प्रचार करते थे। सोढियों तथा बेदीयों ने पृथक् पृथक् प्रदेश तथा तप्पों को बांट कर अपनी व्यक्तिगत सिक्खी बढ़ा ली थी । साधारण ग्रामीण जनता, नगाह, सखीसरवर, शेख हैदर, पीर बनोई आदि मुसलमान पीरों की समाधों पर जाकर मन्नतें मानती, चूरमा बांटती तथा बकरे चढ़ाती थी।

सिक्ख जनता के सामाजिक जीवन में वही कुरीतियां-- जिनमें से गुरुओं ने उन्हें निकाला था- फिर आ गई थीं। इसके पश्चात् सिक्ख राजनीतिक, धार्मिक तथा सामाजिक दृष्टि से गिरते ही चले गये।

लाहौर दरबार की सैनिक नौकरी करते समय गुरु राम सिंह जी ने समय की परिस्थितियों को देखकर यह परिणाम निकाला था कि सिक्ख जनता का धार्मिक पतन तथा सामाजिक कुरीतियां किसी दिन सिक्खों के राज्य को नष्ट करने का कारण बनेंगी। सरल स्वभाव के अनुसार उन्होंने मन में आई बात कहनी आरम्भ की। परिणाम की चिन्ता न करते हुए वह अपने मन के भाव प्रकट कर देते । महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के पश्चात् शाह मुहम्मद के कथनानुसार, "जो बैठे गद्दी उसको मार देते चलती नित्य तलवार दरबार मियां" वाली गुण्डा गर्दी फैल गई। कंवर नौनिहाल सिंह को बेईमान डोगरों ने तथा महाराजा शेर सिंह और कुंवर प्रताप सिंह को, राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए कुल का नाश करने वाले, षड्यंत्रकारी सन्धाबालियों सरदारों अजीत सिंह तथा लैहना सिंह ने मार दिया।

इस पर आपने निर्भीक होकर यह कहना आरम्भ कर दिया कि "सिक्ख सरदार तथा खालसा अब म्लेच्छों जैसे नीच कर्म करने लग गये हैं । यह मरेंगे, डूबेंगे तथा गलें गे और अपने साथ सीधी-सादी सिक्ख जनता को भी खारे समुद्रों में डुबो देंगे।" सैनिक अफसरों ने इसपर रुष्ट होकर कई बार आपको दंड भी दिये, परन्तु आप बराबर यही कहते थे कि "सिक्ख अपने उच्च आचरण से गिर चुके हैं, अब इनका अंत अवश्य होगा।" यह

ईश्वरी आदेश का आवाहन था, तथा सच्चे दिल की गहराइयों से निकली हुई एक दुःख भरी कूक थी। परमात्मा का भय रखने वाले मनुष्यों ने इसको सत्य समझा। सूझबूझ रखने वालों ने यह कूक सुनकर इस पर विचार किया। संकीर्ण विचारों वाले लफंगे तिलंगों ने आपको पागल, बावला आदि कहना आरम्भ कर दिया । आपके बहनोई काबुल सिंह ने आपको तोप के साथ ज़ंजीरो से जकड़ दिया। आपने दुखी होकर काबुल सिंह को कहा कि तू भी तोप के साथ ही मरेगा ।

अंग्रेज़ तथा सिक्खों की पहली लड़ाई दिसम्बर 1845 से कुछ समय पहले , आप गांव में छुट्टी पर आये हुए थे। बुलावा आने पर आप भी लाहौर में उपस्थित हुए। वहां आपने सिक्ख राज्य के आते हुए विनाश को देख कर हर समय यह शब्द उच्चारण करने आरम्भ किये- "हा हा रे क्यों गाफल सोया" । रेजिमेंट में भजन बन्दगी करने वाले पच्चीस-तीस सज्जनों की आपस में अच्छी मित्रता थी। जब लाहौर से फौजों ने कूच की तैयारियां की तो भजन बन्दगी करने वाली टोली ने कड़ाह प्रसाद (हलवा का प्रसाद) तैयार किया तथा प्रार्थना के लिए उपस्थित हुए। आपको जीत के लिए प्रार्थना करने के लिये कहा गया । प्रार्थना करने से पहले आप सूर्य की ओर मुख करके खड़े हो गये और एक पांव के बल नाम का जप करने लगे। पर्याप्त समय तक इसी प्रकार खड़े खड़े एक- दम ही भूमि पर उलटे गिर पड़े। चेत आने पर उठ कर साथियों से कहने लगे कि मुझे तो यह प्रतीत होता है कि खालसा की जीत नहीं है ।

आपकी रेजिमेंट ने युद्ध में सम्मिलित होने के लिये हरीके पत्तन (घाट) पर आकर डेरे लगाये। यहां भी आपने यह कहा कि "सिक्खों के भाग्य में पराजय है । "क्यों व्यर्थ मरने लगे हो । तुम्हें तुम्हारे नेता मौत के मुख में ढकेल रहे हैं। तुम्हारे साथ बुरी होगी।" यह कहकर उन्होंने अपनी बन्दूक सतलुज में फेंक दी। इसके पश्चात् आप अपने गांव को चल पड़े । युद्ध के कारण घाट बन्द था। मल्लाहों ने किश्ती न छोड़ी। आपने दरिया में छलांग लगा दी और तैर कर पार करके अपने मामा के पास लुधियाना में

आ गये। आपका मामा हरि सिंह ठेकेदारी का कार्य करता था और धनवान पुरुष था। उसका पुत्र खजान सिंह साधु तथा दैवी स्वभाव वाला था। कुछ दिन लुधियाना में रहकर आप भैणी आ गये ।

मुदकी नामक स्थान पर 18 दिसम्बर 1845 ई. को अंग्रेज़ों के साथ सिक्ख सेना का युद्ध हुआ। आपका बहनोई काबुल सिंह गोलंदाज इसी युद्ध में तोप के गोले से मारा गया। लाहौर दरबार के बड़े-बड़े स्तम्भों के पारस्परिक षड्यंत्र, अंग्रेज़ों से गुप्त गठजोड़, हिठाड़ सतलुज के सिक्ख रईसों, राजाओं, महाराजाओं, सरदारों की अंग्रेज़ सरकार की ताबेदारी तथा जाननिसारी ने लाहौर दरबार की बादशाही को जड़ों से उखाड़ दिया । इस जंग के समय महारानी जिन्दा तथा लाहौर दरबार की सेना के बड़े जरनैल लाल सिंह तथा तेजा सिंह, सिक्ख फौजों को अंग्रेज़ों से लड़ा कर मरवा देना चाहते थे । बारूद की जगह पर सरसों भेजी गई। लाल सिंह ने अपनी सेना दरिया के इस पार रोक ली। जब घमासान युद्ध में अंग्रेज़ों की पराजय होने लगी और वे पीठ दिखा कर भागने लगे तो सरदार पहाड़ा सिंह फरीदकोट वाला, उन्हें वापिस ले आया। भागते समय जब सिक्ख दरिया को पार करने लगे तो लाल सिंह ने नावों का पुल तुड़वा डाला। वास्तव में राजाओं को राज्य प्यारे होते हैं और राजनीतिक नेताओं को शक्ति तथा शासन । इन्हें प्राप्त करने तथा स्थिर रखने के लिये वह किसी भी प्रकार के अनिष्ट कर्म से नहीं डरते।

पराजित होकर आए हुए साथी तथा घायल सरदार काहन सिंह गुरु राम सिंह जी को लुधियाना शहर में मामा हरी सिंह के स्थान पर मिले ।

घर लौट कर आप एक वर्ष तक भजन बन्दगी में लगे रहे । अगले वर्ष बैलों की नई जोड़ी लेकर सुक्खू जाट के साथ दो वर्ष तक साझे में खेती की। संसार का सबसे पवित्र व्यवसाय कृषि है। कृषक संसार को अन्न उत्पन्न करके देता है। उसकी उत्पन्न की हुई कपास के कपड़े से संसार अपना तन ढकता है। उससे लगान और अन्य कई प्रकार के कर लेकर सरकार अपना शासन चलाती है। इस व्यवसाय में धोखे का कोई स्थान नहीं । इस काम में दिन-रात एक करके श्रम करने से ही उदरपूर्ति हो सकती है । इस काम

को आरम्भ करने के लिये कम से कम दो बैल, एक भैस अथवा गाय, एक रहने का घर, एक ढोरों के लिय घर, गृहणी, तथा कृषि के बहुत से औज़ारों की आवश्यकता होती है । बलवान् शरीर, उच्च साहस, एक दूसरे से मिलजुल कर काम करने की आदत , अच्छे किसान के गुण होते हैं। यह गुण आप में उपस्थित थे ।

कड़े काम से आप कभी नाक भौं नहीं चढ़ाते थे। उस समय की कृषि का कठिनतम काम चरसा पकड़ना था। अतः आप बड़ी प्रसन्नता से कई कई पहर चर्सा पकड़ते । गड्डा भी रक्खा हुआ था। आपके छोटे भाई अन्य कृषकों की भांति किराये पर गड्डा भी चलाते एवं व्यापार भी कर लेते । पुआहद से गुड़-शक्कर जंगल के प्रदेश की ओर ले जाते तथा वहां से चने, बाजरा, गवार, मूंग, मौठ आदि लाकर इधर बेच देते। घर के दोनों धन्धे खेती तथा कारखाना आपके आने से खूब चलने लगे ।

अगले साल आपने राइयां के नम्बरदार जीवन सिंह के साथ सांझे में खेती की। दो काम करने वाले रक्खे, एक ब्राह्मण था, दूसरे का नाम राम सिंह था। आपके पास एक सुन्दर तथा पला हुआ बछड़ा था, जिसका नाम आपने तक्खी नाग रक्खा था। ब्राह्मण कामचोर था । जब भी आप उसको काम के लिये कहते थे, वह आपसे अवश्य झगड़ता था । दूसरा भला पुरुष था, दिल से काम करता तथा आपका अत्यंत सम्मान रखता । आप दिल लगाकर खेती करते थे । प्रातःकाल ही खेतों में चले जाते और सायंकाल लौटते । माई जस्सां घर का सारा काम करती थीं । घर आये बैल संभालती और ऋतु अनुसार गुड़-चने के लड्डू, उबले हुए ग्वारे का खाना तथा पकाये हुए मोठ, बाजरे का दलिया देती थी । आधी रात समाप्त होते ही बैलों और गाय भैंसों को चारा डालती, ताकि हल जुटने तक बैल जुगाली कर लें । माई जस्सां ढोर-डंगर संभाल कर चक्की पीसनी आरम्भ कर देतीं । पक्षियों के कोलाहल तथा ऊषा से पूर्व दस पन्द्रह सेर आटा पीस लेती व दाना दल लेती। पश्चात् दही बिलोती, गाय भैंस दुहती तथा रोटियां पका कर हल चलाने वालों के पास ले जाती ।

वास्तव में किसान की खेती गृहिणी के सिर पर चलती है। यदि वह कामचोर, कुलहिनी, चुगलखोर, अन्न न संभालने वाली हो, तो कृषक बरबाद हो जाता है। ऐसा किसान दुखी होकर या तो साधु बन जाता है या उसको घर का खर्च चलाने के लिये भूमि रहन रखनी अथवा बेचनी पड़ती है । स्त्री सुई से घर उखाड़ देती है तथा आदमी फावड़े से भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता । माई जस्सां एक आदर्श किसान की सहायिका-संगिनी थी। उसके लिये अपना पति परमेश्वर था तथा पति का घर बना बनाया स्वर्ग । पति के आदेश में रहना परमेश्वर की भक्ति थी और पतिदेवता को सुख देना जीवन का मन्तब्य । चार पांच वर्ष अच्छी खेती करने से गुरु राम सिंह जी के पास काफी पूंजी हो गई। इससे आपने गांव में ही ग्रामीण भाइयों की आवश्यकता की वस्तुओं, मोटा सादा कपड़ा, खल, बिनौले, नमक, तेल, गुड़, शक्कर आदि की दुकान खोल दी। वस्तुएं बढ़िया होती थीं। लाभ कम लेने के कारण आस-पास के गांवों के लोग भी आकर अपनी आवश्यकता की वस्तुएं यहां से लेते।

खेती करते समय आपने भजन-बन्दगी की ओर भी बहुत ध्यान दिया। 'हाथ कार की ओर, दिल यार की ओर' वाली कहावत सच कर दिखाई। खेती के काम से निवृत्त होकर आप शेष समय भजन करते। नींद बहुत कम कर दी और इस पर काबू पा लिया। किसी की खेती की एक बाली अथवा एक पत्ता भी अपने घर नहीं आने देते थे। एक दिन आपकी बेटी चढ़त सिंह नामक किसान के खेत से साग तोड़ कर ले आई, वह आपने वापिस करवा दिया । एक दिन आपके ताऊ का पुत्र किसी के खेत से बालें तोड़ लाया, उसी समय लौटा दीं। नम्बरदार जीवन सिंह भला मनुष्य था, वह आपको भजनीक महापुरुष समझ कर आसान काम पर लगा देता। खेती का काम बड़ा ही कड़ा काम है। हर समय कुछ न कुछ करते ही रहना पड़ता है। नित्यप्रति मिट्टी से कुश्ती लड़ना है, परन्तु फिर भी किसान समय निकाल कर हास- विलास कर ही लेते है। सारा दिन हल चला कर जब संध्या को पढेला चलाते समय टिटकारी देते हैं, तो बुद्धिमान् मनुष्यों का कहना कि

"पटेले पर चढ़ा किसान अपने को बादशाह समझता है।" एक बार आप चौबैल के पटेले पर साथ खड़े पटेला चला रहे थे कि स्वाभाविक ही पैर नीचे जा पड़ा । टांग के पास चोट लगी, रुपये के बराबर दाग पड़ गया, रक्त निकल आया। कार्तिक के दिन थे और बोने का समय । आप लुधियाना में अपने मामा हरी सिंह के पास चले गये और अगले चैत की कटाई के समय लौट आये ।

भैणी तथा राइयां दो गांव हैं। इनमें ज्यादा दूरी नहीं, परन्तु नाम पृथक् हैं । भैणी का हमीरा जाट जिसके मन्द-कर्मों के कारण आपने राइयां के जाट नंबरदार जीवन सिंह के साथ खेती की थी, मर गया। गांव के लोग शंकावादी होते हैं । उन्होंने विचार किया कि हमीरे की मृत्यु का कारण आप का शाप है। भैणी के लोग लैहना सिंह तथा नम्बरदारों ने एकत्रित हो कर प्रार्थना की कि आप भैणी में आ जाएं। आपके बन्दगी करने से गांव का भला होता है। लैहना सिंह आपका बाल्यावस्या से ही साथ खेलने वाला मित्र था। आपने हंस कर उसको कहा, "लैहना सिंह निभाओगे भी ?" लैहना सिंह ने कहा कि मेरे तीन स्थान हैं । जहां दिल चाहे मकान बनवा लो। आप वापिस भैणी आ गये और नया मकान बनवा लिया। मकान बनाने के पश्चात् आपने अपनी दोनों सुपुत्रियों के विवाह किये । बड़ी लड़की का खटडे गांव में विवाह हुआ और छोटी का नारंगवाल में । इस प्रकार 5 अथवा 6 साल व्यतीत हुए। आपके घर एक सुपुत्र ने भी जन्म लिया था, जो फौज से लौट कर घर आने से पहिले ही छोटी अवस्था में काल कवलित हो गया था ।

इसके अनन्तर का वर्णन 'सतगुरु विलास' (अप्रकाशित पुस्तक) में इस प्रकार दिया है:-

"फिरंगियों ने फिरोज़पुर में छावनी डालनी आरम्भ की। साथ ही सड़कें बनने लगीं। मामा हरी सिंह का पुत्र खजान सिंह वहीं मिस्त्री था, उसने अपने रिश्तेदार बुलवा लिये। श्री सतगुरु जी भी जा पहुंचे। फिरोज़पुर से बुलावा आया । खजान सिंह के घर सारा परिवार एकत्रित हुआ । सब का एक स्थान पर ही खाना होता है। श्री गुरु ग्रंथ- साहिब का भी प्रकाश

रहता है। सिंह पाठ भी करते रहते हैं। दीवान दोनों समय होता है..... आसा की बार लगती, सब सुनते। रात को शब्द भी पढ़े जाते ढोलक के साथ...। स्नान अमृत समय (प्रातःकाल) करते.. स्वयं ही आसा की बार भी पढ़ लेते। रहरास के समय रहरास पढ़ते, आरती सोहिला पढ़ कर प्रार्थना करके विराज जाते ।"

यह वायुमंडल आपके महान् व्यक्तित्व के प्रभाव से उत्पन्न हुआ था। आपके फिरोज़पुर जाने का समय 1850-1851 ही प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त आप का नित्यकर्म इस प्रकार लिखा है। "सवा पहर रात रहती तब आप उठ कर स्नान करके, समाधी लगा कर पद्मासन में बैठते । रसना से भजन करते।"

फिरोज़पुर रहते समय आपने स्वयं भजन बन्दगी की, तथा अन्य संगी साथियों को भी इस ओर लगाया। भाई तख्त सिंह जी (सिक्ख कन्या महाविद्यालय फिरोज़पुर वाले) ने लेखक को बताया था कि फिरोज़पुर रहते समय भजन बन्दगी करने के विषय में गुरु राम सिंह जी के सम्बंध में यहां बहुत सी बातें प्रसिद्ध हैं। जैसे- "आप आधी रात होते ही अपने डेरे से निकल कर दरिया पर जाते, स्नान करते और भजन बन्दगी में लग जाते । भजन करते समय आपके मुखमंडल के चारों ओर अग्नि अथवा प्रकाश के चक्कर घूमते दिखाई दिया करते थे।" आपकी देखादेखी तथा प्रेरणा से बहुत से सिक्खों ने भजन बन्दगी आरम्भ कर दी थी।"

आपके मामा हरी सिंह का आपके साथ बहुत प्रेम था। मामा का पुत्र खजान सिंह और आप तो बिल्कुल एक रूप थे। हरी सिंह ने आपको बन रही इमारतों की निगरानी के काम पर लगाया हुआ था। डगरू का बंगला तथा मुक्तसर की सराय आपकी निगरानी में ही तैयार हुए। आपने मुक्तसर में रहते समय ऐतिहासिक गुरुद्वारों की मरम्मत अपने खर्च से करवाई । फिरोज़पुर के किले का काम सन् 1855 में समाप्त हो गया। तदनन्तर आप फिरोज़पुर से घर लौट आये। सतगुरु विलास के कर्ता ने लिखा है कि "असाढ़ के महीने में आये, पहिले दक्षिण की ओर द्वार था, फिर सहन की ओर दीवार

बना कर पहाड़ की ओर द्वार लगाया। दायें ओर दुकान डाली, बांई ओर लंगर के लिए थोड़ी सी जगह बनाई। जहां चबूतरा है, वहां थोड़ी सी ऊंचाई बना कर बैठ कर भजन करने लगे। खेती का भी कुछ काम किया करते । ”

दैववश इन्हीं दिनों खजान सिंह मर गया। आप को खजान सिंह की मृत्यु से बहुत ही दुख हुआ। मामा हरी सिंह गंगा में खजान सिंह के फूल चढ़ाने गए और मार्ग में ही काल-कवलित हो गये । अब आपने मामा के कुटुम्ब की हर प्रकार की देखरेख का भार भी अपने ऊपर ले लिया। आपकी मामी रामी बहुत सुघड़ थी। हरी सिंह काफी धन छोड़ कर मरा था । मामी ने आप को अन्न का व्यापार करने के लिये कहा। सतगुरु विलास के पृष्ठ 76 पर लिखा है, "धन मुझ से ले जाओ, जो लाभ हो, आधा-आधा । अनाज खरीदने के लिये श्री सतगुरु जी ने रण सिंह को भेजा। पांच छः मन गेहूं मिला चना था, साढ़े चार मन गेहूं थी, आठ सेर घी था।"

यह वह समय था जब खालसा राज्य के नष्ट हो जाने के पश्चात् लाहौर दरबार की सेनायें तोड़ दी गई थीं। गोरे, गोरखे, पूर्विये तथा मुसलमानों की फौजों ने पंजाब की छावनियों में आकर डेरे लगा दिये थे । अंग्रेज़ी सरकार ने प्रत्येक देश की नई सरकार की भांति पुराने परिवारों तथा व्यक्तियों के मुकाबले पर अपने बनाये हुए आज्ञाकारी नये परिवार तथा नये व्यक्ति उभारने का काम आरम्भ कर दिया था। सरकारों के पास अपने स्वामी-भक्त परिवार अथवा जीहुजूर कहने वाले व्यक्ति पैदा करने के लिये चार बड़े साधन होते हैं ।

1. सरकारी नौकरियां,
2. ज़मीनें तथा जागीरें,
3. सरकारी इमारतों के ठेके
4. शासन की आवश्यकता के लिये वस्तुएं ला कर देने का काम।

अंग्रेज़ों ने अपने पिठुओं के लिये यह काम देने आरम्भ कर दिये । आम तौर पर इन को प्राप्त करने वाले 90 प्रतिशत पेशावर और पुश्तैनी चाटुकार चले आ रहे होते हैं। ये हर नई सरकार के साथ कुत्ते की चीचड़ी

की भांति चिपट कर अपना पेट भरते हैं । यह विशेष वर्ग धीरे-धीरे प्रजा तथा शासन में गलतफहमियां उत्पन्न कर देता है । परिणाम यह होता है कि लोगों की सहायता से बनी सरकार और जनता में पारस्परिक घृणा हो जाती है। महाराजा रणजीत सिंह की सेनाओं के अफसर तथा सैनिक, पूर्व सिक्ख नरेश का नाम ले-लेकर बिल- बिलाते फिरते थे। कई साधु बन कर दिन काटने लगे । कई घर बार छोड़ कर पहाड़ों पर चले गये और अधिकांश ने हलों की हथलियां पकड़ कर खेती करनी आरम्भ की। हारे हुए, परन्तु आत्म-सम्मान वाले किसी ऐसे प्रतापी मनुष्य तथा सुसमय की प्रतीक्षा करने लगे, जिसके नेतृत्व में वह पुनः गोभक्षक विदेशी अंग्रेज़ो के शासन से टक्कर लेकर अपनी मातृभूमि की पराधीनता के बन्धन काट सकें, चाहे इसके लिये उन्हें अपने प्राणों का बलिदान ही क्यों न देना पड़े ।

अंग्रेज़ों ने पंजाब पर अधिकार जमाते ही अपना बनाया कानून "भारतीय- इंड संहिता" (ताज़ीरात-हिन्द) पंजाब में लागू कर दिया। नये ढंग के न्यायालय स्थापित कर दिये। भूमि का प्रबंधन आरम्भ हो गया। छोटी सरकारी नौकरियों तथा पटवारी, मुन्शी और क्लर्क पैदा करने के लिये सरकारी स्कूल तथा ईसाई प्रचारकों के मिशिन स्कूल खोल दिये। अंग्रेज़ी पहरावे की रीति चला दी । मण्डियों में विदेशी कपड़ा ले आए । शासन की ओर से डाकखाने खोल दिये। विदेशी ढंग की चिकित्सा के अस्पताल खुलने लगे । पंजाबियों को तथा विशेष कर सिक्खों को राजनीतिक, मानसिक, तथा सामाजिक रूप से दास बनाने के लिये जाल फैलाने आरम्भ कर दिये गये ।

भारतीय भूमि की मिट्टी को यह वरदान है कि यहां के रहने वाले आदि काल से ही उच्च आचरण अथवा परमात्मा का भजन करने वाले महापुरुषों का सम्मान करते चले आये हैं।

जनसाधारण के दिलों में सांसारिक राजाओं की अपेक्षा अध्यात्मिक पुरुषों का सम्मान, प्रेम अथवा भय अधिक होता है। दिल्ली के उच्च सिंहासन पर विराजमान बादशाहों के द्वार की अपेक्षा प्रेमोन्मत्त संतों के आसपास दर्शन करने वालों की भीड़ कई गुणा अधिक रहती है। भक्ति सेवा और भजन करते

हुए माथे पर प्रकाश, आँखों में मस्ती, हृदय में जीव मात्र के लिये दया, अत्याचारियों के प्रति घृणा तथा उनके सुधार की भावना, सहज ही उत्पन्न हो जाते हैं। इस पद पर पहुंचे हुए मनुष्य के पास आत्मिक शान्ति की खोज करने वाले जिज्ञासुओं, परमात्मा और उसके प्रकाश के दर्शन करने वाले अभ्यासियों, मन की आकांक्षाओं, धन-दौलत, सांसारिक सम्मान प्राप्त करने वाले अभिलाषियों का आना जाना आरम्भ हो जाता है। भारत में परंपरा से चली आई यह रीति भारतीय जनता के जीवन का आधार है।

नाम का जप करने एवं भजन-बन्दगी करने की दीक्षा गुरु राम सिंह जी ने चौदह-पन्द्रह वर्ष पहिले गुरु बालक सिंह जी हजरों वालों से ली हुई थी। यह वह समय था जब आपकी रेजिमेंट महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के पश्चात् एक बार लाहौर से इस दिशा को गई थी। आपके साथ और पच्चीस-तीस सिंहों ने भी इस समय गुरु बालक सिंह जी से भजन बन्दगी की दीक्षा प्राप्त की थी।

गुरु राम सिंह जी के पवित्र जीवन के समाचार फैलने आरम्भ हुए । लोग दर्शन करने, वचन वाणी सुनने और शिक्षा लेने आते। लाहौर दरबार की सैनिक नौकरी के समय के पुराने साथी आपको आकर मिलने लगे। इस पर आपके हृदय में गुरु की सिक्खी फैलाने, और श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी तथा श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी की वाणियों को गांवों की रहने वाली जनता में प्रचार करने की तीव्र इच्छा हुई। इन महान कार्यों की पूर्ति के लिये आपने बड़े साहस तथा दृढ़ता से पग उठाया।कुटुम्ब के सब जीवों को रहत मर्यादा में पक्के रहने का आदेश दिया तथा इसे एक आदर्श सिक्ख परिवार का रूप दिया ।

गम्भीर चिन्तन के पश्चात् आपने यही तत्त्व निकाला, कि देश की उन्नति के लिए, विदेशी शासन की दासता से मुक्ति प्राप्त करना अति आवश्यक है। स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये ग्रामीण जनता को जागृत करके, उनमें तन-मन तथा धन के बलिदान करने का साहस तथा उत्साह उत्पन्न किया जावे। जनता के सामाजिक जीवन को ऊंचा किया जावे एवं उनमें बन्धु-भाव भरा

जावे। ताकि राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने पर वह पुनः राष्ट्र तथा देश का विनाश करने वाले कुकर्मों, रिशवतें लेनी, कौटुम्बिक पक्षपात तथा अन्याय आरम्भ न कर दें। शुभ गुणों वाले पुरुष उत्पन्न करने के लिये, सबसे पहिले धर्म प्रचार और शिक्षा को फैलाने तथा जनता को सूझ-बूझ देने का काम बुनियादी आवश्यकताएं समझी गई। इस महान कार्य के लिये बैसाखी का पवित्र दिवस निश्चित किया गया ।

नामधारी आन्दोलन का विकास
धर्म प्रचार के छः वर्ष

(सन् 1857 सें 1863 तक)

नामधारी सिक्खों के विश्वास अनुसार गुरु गोबिंद सिंह जी महाराज नांदेड़ में परम ज्योति में नहीं समाये । तथा उन्होंने जीवित ही घोड़े पर सवार होकर कनातों के अन्दर तैयार की गई चिता की अग्नि में प्रवेश नहीं किया। वे इस विषय में आज से सवा सौ वर्ष पहले, महाकवि संतोष सिंह जी लिखित पुस्तक "गुरु प्रताप सूरज" को प्रमाण मानते हैं। [1]

वह मानते हैं कि गुरु गोबिंन्द सिंह जी ने गुरु बालक सिंह हजरोंवाले को दर्शन देकर गुरु गद्दी दी। इसलिए वह प्रसिद्ध सिक्ख इतिहासकार ज्ञानी ज्ञान सिंह जी की पुस्तक 'पंथ प्रकाश' में से निम्नलिखित उदाहरण देते हैं-

"बालक मृगेश ते विशेष उपदेश नाम,
यदि नर नारी ले अपारी भव ते तरे ।
और इलहाम करतार कई बार दयो,
नाम पे अधार कर जीवन का तू खरे ।

---

[1] इतिहासकार न तो जज होता है और न ही वकील । उसने जो कुछ लिखना है, अपनी ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर नेक नियत के साथ बिना किसी पक्षपात के लिखना है । इति... ह.... आस; "ऐसा निश्चय से था" इस नियम को सम्मुख रख कर वह लिखता है, चाहे उसका धार्मिक विश्वास तथा सामाजिक दृष्टिकोण कुछ भी हो। कैमरे की चित्र लेने वाली प्लेट की भांति ठीक-ठीक चित्र लेने के लिये उसको हर प्रकार की दुर्भावनाओं से ऊंचा होना आवश्यक है। इतिहासकार का मन्तव्य "ऐसे होना चाहिए अथवा ऐसे होना चाहिये था" को लिख कर मनोभाव दिखाने का नहीं होता, बल्कि वह "ऐसे हुआ" अथवा "ऐसा है" बता कर अपनी भाषा में घटनाओं को अंकित करके जनता के सामने रखता है ।

एपे गुरु दशम दर्श दें जु कहयो ताहि,
मेरे अवतार अंश राम सिंह हवै भरे ।
याहि हेतु ताहि और काहि मानु नाहि,
शकत रखाई निज गुरु वाक दृढ़ ये धरै ।"

गुरु बालक सिंह जी का जन्म गांव छोही ज़िला अटक में हुआ। युवा अवस्था होने पर आप हज़रों आ गये। आप भजन-बन्दगी करने वाले त्यागी महापुरुष थे ।

आपने युवा अवस्था में ही सिक्ख धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया । गुरु रामसिंह जी ने आपके दर्शन हज़रों में किये तथा आपसे नाम दीक्षा एवं भजन बन्दगी का आशीर्वाद प्राप्त किया। साथ ही गुरु बालक सिंह जी ने गुरु राम सिंह जी को गुरु गद्दी देकर धर्म प्रचार की आज्ञा दी। 14-15 वर्ष के भजन करने तथा तपस्यायुक्त जीवन व्यतीत करने पर गुरु राम सिंह जी ने गुरु बालक सिंह जी के आदेशानुसार निष्काम सेवा को अपने जीवन का लक्ष्य बना कर, जनता में जागृति लाने के महान् कार्य को आरम्भ किया ।

1 बैसाख सम्वत् 1914 (अथवा 12 अप्रैल 1857) वाले पवित्र दिवस पर गुरु राम सिंह जी ने अपने गांव भैणी में ही खण्डे का अमृत तैयार किया । भाई कान्ह सिंह निहंग, लाभ सिंह रागी, भाई आत्मा सिंह, भाई नैणा सिंह , तथा भाई सुद्ध सिंह इन पाँचों को अमृत छका कर सिक्ख धर्म के मुख्य सिद्धान्तों , सिक्ख धर्म की रहत-मर्यादा तथा आचरण पर दृढ़ रहकर जीवन व्यतीत करने की शिक्षायें दी। इस समय जनसाधारण को खण्डे का अमृत छकाने की रीति लगभग लुप्त हो गई थी। खण्डे के अमृत के अभिलाषी सज्जन बड़े बड़े गुरुद्वारों, अकाल तख्त अमृतसर, आनन्दपुर साहिब, मुक्तसर साहिब, दमदमा साहिब, पटना साहिब तथा नान्देड़ साहिब ही जाकर अमृत छकते थे । स्त्रियों को खण्डे का अमृत बिल्कुल नहीं छकाया जाता था। गांवों में अमृत का 'बाटा' तैयार करने के लिये पाँच प्यारे ही मिलने कठिन थे। साथ ही साथ तख्तों के पुजारी तथा इन गुरुद्वारों के महन्त यह नहीं चाहते थे कि अमृत प्रचार करने की इस प्रकार स्वतन्त्रता हो; क्योंकि इससे

उनकी अमृत छकाने की दक्षिणा अथवा आय में घाटा होता था । आपने उस समय के पुजारियों, महन्तों, सोढीयों, बेदियों, निर्मलों तथा उदासियों आदि के विरोध की परवाह किये बिना गांव में रहते, खेती आदि के कामों में लगे हुए, भले पुरुषों को अमृत छकाने के लिए तैयार किया।

हिन्दुओं तथा केशाधारी सिक्खों को केवल परमात्मा पर भरोसा रखकर जीवन व्यतीत करने का उपदेश दिया। मुसलमान पीरों-फकीरों के मकबरों तथा मज़ारों पर जाकर मन्नतें मानने और बकरे काटने की अशुभ रीति के त्याग का प्रचार किया। माता, गुग्गा, भैरों आदि के स्थानों तथा मूर्ति पूजा का त्याग करने की शिक्षा दी । आपस में मिल बैठने, वाणी पढ़ने-सुनने तथा धारण करने के लिए जनता को प्रेरणा दी । गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी के पाठ करके भोग डालने का आदेश दिया। हर एक सिक्ख को कम से कम 5 वाणियां कंठस्थ करने तथा पाठ करने की प्रेरणा दी। नाम जपने, भजन-बन्दगीं करने पर जोर दिया। एक प्रेमी सिक्ख विद्वान को श्री हुजूर साहब अविचल नगर दक्षिण में गुरु गोबिंद सिंह जी के समय से चली आ रही रहत-मर्यादा को लेखबद्ध करके लाने के लिये भेजा ।

खण्डे के अमृत पीने और 5 ककारों, 'केश, कंघा, कड़ा, कच्छहरा, कृपाण,' रखने के लिये कड़ी व्यवस्था दी और इनको धारण करने के लिये प्रत्येक सिक्ख मात्र को प्रेरणा दी। अंग्रेज़ों ने पंजाब पर अधिकार जमाते ही पंजाब में हथियार न रखने का कानून जारी कर दिया था; इसके अनुसार केवल विशिष्ट परिवारों के व्यक्तियों के अतिरिक्त कोई पुरुष लायसेंस के बिना शस्त्र नहीं रख सकता था। सिक्खों का धार्मिक चिन्ह कृपाण अथवा तलवार भी इस कानून के अधीन बिना लायसेंस के किसी पुरुष को रखने अथवा पहनने की आज्ञा नहीं थी। आपने समय का विचार करते हुए यही उचित समझा कि इस विषय पर नई विदेशी अंग्रेज सरकार से सीधी टक्कर न ली जावे । अतः आपने सिक्खों को लोहे के बन्दों वाली अच्छी भारी लाठी अथवा सफा जंग (कुल्हाड़ी) रखने के आदेश दिये । अच्छी जाति के घोड़े सिक्खों को पालने, रखने तथा सवारी सीखने के लिये भी कहा। देश में

अंग्रेज़ी सरकार की ओर से प्रचलित की गई गौहत्या को हटाने के लिये भी प्रचार किया ।

शरीर को हृष्ट-पुष्ट, नीरोग तथा उत्साहित रखने के लिये शारीरिक स्वस्थता पर आपने बहुत जोर दिया। एक पहर रात रहते उठ कर नित्य प्रति सकेश स्नान तथा दातुन करने और स्वच्छ वस्त्र पहनने की रीति चलाई । भाई अतर सिंह जी के अधिकार में दांतों की सफाई देखने का काम था। दूध-घी खाने के लिये अच्छी दूध देने वाली गायें रखने और देश के पशु धन को पालने तथा सम्भालने का उदाहरण आप ने स्वयं उपस्थित किया । मांस, मदिरा, चोरी, बदकारी, झूठ, निन्दा, ठगी, धोखा, आदि कुकर्मों को छोड़ने का आदेश दिया ।

स्त्रियों को अमृत छकने, नाम जपने, भजन-बन्दगी करने, पुरुषों के साथ ही दीवान में बैठ कर शब्द-वाणी पढ़ने और सुनने की रीति को चलाया। घर का सारा काम हाथों से करने, पति की आज्ञा में रहने, उसकी सेवा करने, घर आये अतिथि को यथाशक्ति भोजन वस्त्र देने आदि शुभ गुणों के पालन करने का आदेश दिया । जन्म लेते ही बालिकाओं को मारने, उनका मूल्य लेकर वृद्ध, रोगी, बदमाश कुकर्मी से विवाह करने एवं बदले के रिश्ते लेने से बिल्कुल वर्जित किया। विवाह की रस्म से सम्बन्धित बुराइयों, चढ़ावे, दहेज, बाजे, आतिशबाजी, भांड़, कंचनियों आदि को बिल्कुल ही छोड़ देने की आज्ञा दी। गुरु ग्रन्थ साहिब जी की उपस्थिति में बेदी बना कर हवन करके सीधे सादे ढंग से विवाह करने की रीति चलाई। इस रीति को "आनन्द कारज" का नाम दिया। मृत्यु के पश्चात् वृद्ध-वृद्धाओं की नाक ऊंची रखने के लिए गांव को पक्की रसोई खिलाने अथवा कच्ची रसद देने की अशुभ रीतियों को बिल्कुल ही रोकने का प्रचार किया। मृतकों की आत्मा की शान्ति के लिए गुरु ग्रन्थ साहिब जी के पाठ का भोग एवं प्रार्थना करने की प्रथा चलाई। लड़की के विवाह करने की आयु कम से कम 16 वर्ष निश्चित की। लड़कियों को शिक्षा देने पर भी जोर दिया। विधवा स्त्रियों के पुनर्विवाह की प्रथा प्रचलित की। आप के धर्म प्रचार के विषय में डॉक्टर गंडा सिंह जी ने अपनी

पुस्तक "कूकियां दी विथिया" के द्वितीय संस्करण के पृष्ठ 35 पर इस प्रकार लिखा है:-

"आप के प्रचार का मुख्य उद्देश्य धार्मिक रूप से डांवाडोल हो रहे सिक्खों में से कुरीतियां दूर करके सिक्ख धर्म को जीवित रखना था। आपका काम एक सुधारक नेता का था। प्रचार के निमित्त देशाटन पर जहां कहीं भी आप जाते, सिक्खी से दूर हो चुके या अन्य मतों से आये श्रद्धालुओं को बिना किसी लिंग तथा जाति के भेद के उपदेश देते ।

उस समय के एक बड़े सरकारी अफसर मिस्टर किनचैंट ने सन् 1863 में कूकों (नाम धारियों) के नियमों के विषय में इस प्रकार लिखा था :-

"गुरु गोबिन्द सिंह जी का ग्रन्थ ही केवल सत्य है। जो आदि बाणी है। केवल गुरु गोबिन्द सिंह ही गुरु हैं। हर प्राणी बिना जाति तथा मत के भेद-भाव के सिक्ख बन सकता है। सोढ़ी, बेदी, महन्त, ब्राह्मण तथा ऐसे ही गुरु कहलाने वाले अन्य लोग पाखंडी बहुरूपिये हैं । क्योंकि गुरु गोबिन्द सिंह के बिना गुरु नहीं । देवीद्वारे, शिवद्वाले तया मन्दिर लूट के साधन हैं । मूर्ति पूजा परमात्मा का निरादर है जो क्षमा नहीं किया जावेगा"

सन् 1863 में सरकारी समाचारों की रिपोटों में गुरु राम सिंह जी के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा हुआ है:-

"वह सिक्खों में से जाति-पाति के भेदभाव को मिटा रहा है। सब श्रेणियों में पारस्परिक खुले विवाहों के पक्ष में है। विधवा- विवाह करने की आज्ञा देता है। शराब तथा नशों से रोकता है। स्त्रियों और पुरुषों के पारस्परिक खुले मेल मिलाप का पक्षपाती है।"[2]

"उसके दीवानों (सम्मेलनों) में स्त्री-पुरुष खुले विचरते हैं। सहस्रों स्त्रियां तथा नवयुवतियां उसके सम्प्रदाय में सम्मिलित हैं। वह अपने सेवकों

---

[2] उपरोक्त भाव पर्दा रखने अथवा घूंघट निकालने की रोक तथा दीवानों में इकट्ठे बैठने की रीतियों से लिया प्रतीत होता है।

को पवित्र तथा सत्यवादी होने का उपदेश देता है। उसकी एक आज्ञा यह है। "यह अच्छा है कि प्रत्येक अपनी लाठी रक्खे, तथा वह सब रखते हैं। केवल ग्रन्थ साहिब ही उनका प्रमाणित ग्रन्थ है। नामधारी सिक्खों की पक्की पहिचान सिर पर सीधी पगड़ी, गले में (नाम के जाप के लिये पहनी हुई) ऊन की माला तथा आपस में मिलते और बिछुड़ते समय उच्च स्वर से सत श्री अकाल शब्द से अभिवादन करने से होती है ।"

पंजाब की अमुस्लिम जनता पर गुरु राम सिंह जी के सिक्ख धर्म के धार्मिक शिष्टाचार तथा सामाजिक नियमों का प्रचार करने का प्रभाव शीघ्र तथा अधिक हुआ । गांव के जन साधारण जाट, बढ़ई, छीम्बे (दर्जी) तथा अछूत जातियों में से रहतिये, रामदासिये, चमार, बाल्मीकि जिनकी संख्या गांवों में इस समय मुसलमानों को छोड़ कर शेष संख्या का 68 प्रतिशत है, सहस्रों की संख्या में अमृत छक कर केशा धारी सिंह बनने लगे। पंजाब के गांवों में ब्राह्मणों की संख्या 2 प्रतिशत है तथा वह शताब्दियों से जाटों की पुरोहिती, जन्म तथा मृत्यु के संस्कार करवाते और इनसे दान-दक्षिणा लेकर जीवन व्यतीत करते चले आए हैं। नामधारी बन कर लोग अपने समस्त संस्कार गुरु मर्यादा अनुसार स्वयं ही करने लगे अथवा ग्रन्थियों से करवाने लगे। इसका सीधा प्रभाव ब्राह्मणों की आजीविका के साधनों पर पड़ा। उन्होंने अपनी आय तथा मान प्रतिष्ठा जाते देख कर नामधारियों का कड़ा विरोध करना प्रारम्भ कर दिया ।

सरदार गंडा सिंह जी ने आपके प्रचार का वर्णन करते हुए लिखा है: "स्थान-स्थान पर सोढी, बेदी तथा पाखंडी साधुओं का बिस्तर गोल होने लगा तथा लोग खंडे का अमृत छक कर सिंह बनने आरम्भ हुए। इस प्रकार सिक्ख धर्म प्रचार का आंदोलन चल पड़ा । आप ने अपना जीवन हिन्दू, ब्राह्मणों तथा मुसलमान, पीरों-फकीरों के प्रभाव से सिक्खों में प्रविष्ट हो चुकी कुरीतियों को दूर करके, वास्तविक सिक्खी के प्रचार की ओर लगाना आरम्भ किया। लोगों के विचारों में परिवर्तन करने के लिये आपने सर्वप्रथम ब्राह्मणों तथा अपने आप को गुरु कहलाने वाले सोढ़ियों, बेदियों के विरुद्ध

एक जबरदस्त आवाज़ उठाई ।"

इस समय में ही लोगों ने यह नई कहावत गढ़ ली-"सप्पों, सिंघों, सोढ़ियों बख्शा लाईं करतार" (सांप, शेर तथा सोढ़ी कुल के पुरुष से हे परमात्मा ! हमें बचाना-अनुवादित)

"आप के प्रचार का यह परिणाम हुआ कि अमृतधारी सिंहों के साथ-साथ ही हिन्दुओं में भी सिक्ख धर्म के लिये श्रद्धा तथा प्रेम बढ़ना शुरू हो गया एवं सहस्त्रों हिन्दू गुरुवाणी पढ़ने तथा गुरु ग्रन्थ साहिब का पाठ करने लग पड़े। इस प्रकार वे शनैः शनैः सिक्खों की ओर आकर्षित होने लगे। बहुतों ने जो वृद्धावस्था अथवा ब्राह्मण प्रभाव में होने के कारण स्वयं पूर्ण केशधारी तथा रहत वाले सिक्ख न हो सके, अपनी संतान को सिख बनाना आरम्भ कर दिया । इस प्रकार जहां सिखों की गिनती की संख्या बढ़नी आरम्भ हुई, वहां सहजधारी (धीरे-धीरे बन रहे) सिक्खों की संख्या भी अधिक हो गई ।... हिन्दुओं में भी इसी प्रकार सिक्खों के लिये प्रेम की लहर चलाने का श्रेय बाबा राम सिंह जी को है।"

गुरु राम सिंह जी ने सेवा, परोपकार, स्वच्छ रहने, सत्य कहने तथा निर्मल क्रम की उच्च शिक्षायें दीं। कुरीतियों से बचकर सरल जीवन व्यतीत करने का ढंग बताया। आपका यह दृढ़ निश्चय था कि कोई भी देश अथवा राष्ट्र राजनीतिक रूप से पराधीन रहकर आत्मिक, सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति नहीं कर सकता। राष्ट्रीय उन्नति के लिये सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपनी जीविका कमाने के साधनों में किसी अन्य का दास न हो । उसके पास शारीरिक बल, बुद्धि, साहस, नीरोगता आदि सब गुण होते हुए जीविका के साधन भी हों। श्रम करने की आदत हो । साथ ही वह जीविका प्राप्त करने में किसी धनाढ्य तथा साहूकार का मुहताज न हो । आपका यह उपदेश था कि हर मनुष्य हाथों से श्रम करके निर्वाह करें । कोई बेकार न रहे, न ही धर्म के नाम पर धनवान् होते हुए धोखे से धन एकत्रित करके इतना उच्च बनने का यत्न करे कि साथ रहने वाले सहस्त्रों निर्धनों की टूटी झोपड़ियों के पास उसी का ही एकमात्र महल

हो। इस यत्न में जीवन व्यतीत न करो कि सबका धन इकट्ठा करके स्वयं ध्वजा लगा कर उस पर ज्योति जगायी जाए। बल्कि ऐसा यत्न करो कि निर्धन मनुष्य दरिद्रता के दलदल से निकल कर मनुष्य समाज में एक स्थान पर खड़े हो सकें । धन, धान्य, विद्या, जप, तप, भजन, बन्दगी आदि से प्राप्त थोथी प्रशंसा को तोड़ने के लिये आपने यह रीति चलाई कि परस्पर मिलते समय एक नामधारी दूसरे नामधारी के चरणों को अवश्य स्पर्श करे। आपके विचारानुसार सामाजिक समानता का युग लाने के लिये यह आवश्यक है, कि बड़ों को निम्न स्थल पर लाया जावे तथा साधारण को उठा कर उच्च स्थान पर खड़ा किया जाये ।

अपनी प्रिय मातृ भूमि भारत को विदेशी अंग्रेज़ शासकों की दासता से मुक्त कराने के लिये आपने सोच विचार करने के उपरान्त निम्न प्रकार का कार्यक्रम भारतीय जनता के सामने रखा तथा नाम धारियों को सदैव इस पर चलने के आदेश दिये :-

1. अंग्रेज़ शासकों की ओर से चलाये गये कानूनों के बन्धन अपने गले में न डालो। देश के पुराने न्याय के नियमों तथा रीतियों को मानो ।
2. फौजदारी तथा भूमि-सम्पत्तियों से सम्बन्धित पारस्परिक झगड़ों को अंग्रेज़ शासकों की स्थापित की हुई अदालतों में न ले जाओ । ऐसे झगड़े गांवों की पंचायतों तथा गोत्रों की पंचायतों में निबटाओ ।
3. अंग्रेज़ी शासन की ओर से स्थापित किये हुए स्कूलों में अपने बच्चों को न पढ़ाओ । अपने विद्यालयों तथा पाठशालाओं में ही बालक-बालिकाओं को पढ़ाओ ।
4. अंग्रेज़ो की नौकरी न करो।
5. विदेश का बना हुआ कपड़ा तथा अन्य पदार्थों का प्रयोग न करो । घर की बनी हुई खादी एवं ऊन के कपड़े पहनो तथा स्वदेशी पदार्थों का प्रयोग करो ।
6. अंग्रेज़ी शासन की चलाई हुई संस्थाओं, रेल, डाकखाने आदि का प्रयोग न करो। आने-जाने, समाचार पहुंचाने तथा पारस्परिक मेल के लिये अपने

ही साधन तथा बैलगाड़ी, गड्डा , घोड़े ऊंट को सवारी के काम में लाओ तथा चिट्ठी-पत्र पहुंचाने के लिये अपने हरकारों का प्रबन्ध करो ।

इन समस्त आदेशों का मूलभाव यह था कि विदेशी शासन से हर प्रकार का असहयोग किया जावे ।

इतिहास तथा सभ्यता के उच्च विद्वान्, भारत के राष्ट्रपति श्री डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद जी ने सन 1935 में अपने एक प्रस्ताव "श्री सतगुरु राम सिंह जी के सिद्धान्त" में इस प्रकार लिखा है:-

"गुरु राम सिंह जी स्वतंत्रता को भी धर्म का आवश्यक अंग समझते थे और नाम धारियों का संगठन बहुत जोरदार हो गया था। हमारे देश में महात्मा गांधी जी ने जो असहयोग आन्दोलन इतने जोर से चलाया उसको गुरु राम सिंह जो ने प्रायः 50 वर्ष पूर्व ही नाम धारियों में प्रचारित किया था। उनके सिद्धांतों में 5 चीजें हैं:-

(1) सरकारी नौकरी का बहिष्कार
(2) सरकारी स्कूलों का बहिष्कार
(3) सरकारी अदालतों का बहिष्कार
(4) विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार
(5) ऐसे कानून मानने से इनकार जो अपनी आत्मा के विरुद्ध हैं ।"

(सतयुग, बसंत अंक, 10 माघ 1992)

ग्रामों में रहने वाले जनसाधारण के लिये आपस में मिलजुल कर गांव में ही अमृत तैयार करने और छकाने की रीति को पुनर्जीवित करके आपने सिक्खी की उन्नति तथा बुद्धि के लिये एक बहुत बड़ा कार्य क्षेत्र तैयार किया । गुरुजी की यह रीति पूजा का धान्य खाने वाले ग्रन्थियों, पुजारियों, अरदासियों, धूपियों, ऐतिहासिक गुरुद्वारों तथा उनकी संपत्तियों पर अधिकार जमाये बैठे महन्तों, संतों और सिक्खी सेवकी की भेंट पर गुजारा करने वाले सोढ़ियों, बेदियों के लिये उनकी जीविका को तोड़ने के समान थी । भ्रमों में फंसी जनता को प्रकाशमय रास्ते पर चलने की शिक्षा देना महान् आत्मा बाले

पुरुषों का ही काम होता है। सरदार कपूर सिंह जी ने अपनी पुस्तक "सप्तश्रृंग " में इस बात का इस प्रकार वर्णन किया है:-

"सच्ची बात तो यह है कि भारत वर्ष के सहस्रों वर्षों के इतिहास में गुरु गोबिंद सिंह जी के अतिरिक्त कोई भी ऐतिहासिक व्यक्ति ऐसा नहीं हुआ, जिसने अपने जीवन का ध्येय इतना सर्वगुण सम्पन्न तथा ऊंचा रक्खा हो, जिसका व्यक्तित्व एवं विचार असाधारण के साथ साधारण को भी सरल उपायों से उन्नति के शिखर पर ले जाना हो। गुरु गोबिन्द सिंह जी के पश्चात् इस प्रकार की साहसी आत्मा वाले पुरुष भारत में बाबा राम सिंह जी ही हुए हैं।" उक्त पुस्तक में आगे आप लिखते हैं , "सिक्ख गुरुओं गुरु नानक तथा गुरु गोबिन्द सिंह जी के पश्चात् बाबा राम सिंह एक महान सुधारक तथा पथ प्रदर्शक हुए हैं, जिन्होंने समाज में स्त्री पुरुष की एकता का प्रचार किया और अपने प्रचार में सफल हुए। यदि उन्होंने देश तथा जाति के लिये जो अन्य महान कार्य किये वह हम छोड़ भी दें, तो उनका एक यही प्रचार कि स्त्री तथा पुरुष समाज में समानता के अधिकारी हैं, उनको संसार भर के शिरोमणि सुधारकों की पंक्ति में खड़ा कर देता है।"

सम्वत् 1914 की बैसाखी के अवसर पर भैणी में अमृत प्रचार होने के समय से ही गुरु राम सिंह जी के पास संगतों का आना जाना आरम्भ हो गया। यहां आकर लोग अमृत छकते तथा भजन करने की विधि पूछ कर अपने गांवों को चले जाते। दिन प्रतिदिन आप की प्रशंसा फैलती गई। आपके डेरे में हर समय गुरु ग्रन्थ साहिब की बाणी का पाठ होता रहता तथा भोग डाले जाते । ढोलक, छैनों के साथ दोनों समय कीर्तन किया जाता तथा शब्द पढ़े जाते ।

आस- पास के गांवों की संगतों की विनय पर आप उन गांवों में जाकर अमृत छकाते तथा उपदेश देते। आप जिस किसी गांव में जाते पहले वहां की धर्मशाला का पता पूछ कर उसको बड़ी अच्छी तरह सफाई करवाते। उस गांव में किसी उदासी साधु अथवा प्रेमी के घर से गुरु ग्रन्थ साहिब जी की प्रति का पता लगाकर पढ़ कर संगतों को उपदेश देते। मदिरा छुड़वाते

तथा मांस, तम्बाकू, भंग, पोस्त, अफीम आदि व्यसनों से लोगों को वर्जित करते । बालिकाओं को मारने से रोकते । लड़कियों के पैसे लेकर विवाह करने की बुरी रीति को हटाते। आपके इस उपदेश के आधार पर उस समय यह लोकगीत बना-

"न बेच क्राँरी वे बाबुला लालचिया ।
गल गऊ कटारी वे बाबुला लालचिया ।
तेरी गई मत्त मारी वे बाबुला लालचिया ।
न बनीं व्यापारी वे बाबुला लालचिया ।"

उस समय छापेखानों के मुद्रित हुए गुरु ग्रन्थ साहिब नहीं होते थे । लेखक व्यवसाय के कश्मीरी पंडित, हस्तलिखित प्रति तैयार करते तथा अच्छे मूल्य पर बेचते । कई-कई ग्रामों में कोई एक सज्जन ही ऐसी नकल की प्रति को खरीद कर अपने घर में रखता था। उदासी साधू , असवारा साहिब नाम रखकर उसे अपने डेरे में रखते तथा पाठ करके पूजा लेते। लेखक के अनुमानानुसार सारे पंजाब में तथा सिक्ख रियासतों में ऐसी हस्तलिखित प्रतियों की संख्या ढाई अथवा तीन हजार से अधिक नहीं थी। अधिकतर प्रतिलेखन अमृतसर अथवा दमदमा साहिब साबो की तलवंडी के आधार पर किये जाते।

नकल करने वाले कश्मीरी लेखकों में अमृतसर के लेखकों तथा दमदमा साहब के लेखकों के लेखों के रूप तथा लिपियों के मोड़जोड़ में मात्राओं के उच्चारण के अनुसार अक्षरों के लिखने में अन्तर था। छापे की प्रतियों का रिवाज होने पर भी पृथक् पृथक् छापेखाने की मुद्रित प्रतियों में अक्षर तथा मात्राओं के अन्तर पड़ते ही गये।

सन् 1867 में मुन्शी गुलाब सिंह ने अपना प्रसिद्ध छापाखाना "मुफीद- ए-आम" नामक लाहौर में खोला। सन् 1870 तक पंजाब में कई और छापेखाने भी खुल चुके थे। इनमें प्रस्तुत मुद्रणालय के ढंग से पुस्तकें छापी जाती थीं । गुरु राम सिंह जी ने प्रेस वाले दीवान बूटा सिंह लाहौर निवासी, के हाथों सिक्ख धर्म की मान्य पुस्तक गुरु ग्रन्थ साहिब जी को

छपवाया।

इसका वर्णन तथा तत्संबंधित हिसाब का ब्यौरा उनकी बही में अब तक मौजूद है।[3]

अनुमान यह है कि गुरु ग्रंथ साहिब जी का सर्वप्रथम पत्थर के छापे का संस्करण , आपके व्यय और उद्यम से ही हुआ था। इसका प्रयोजन वाणी का प्रचार आम जनता तक पहुँचाने का था। इसी के साथ-साथ आपने नित्य-कर्म की वाणियों को संकलित करके पंचग्रंथी और दसग्रन्थी नामक पुस्तकें छपवा कर उनका प्रचार किया ।

गुरु राम सिंह जी ने अमृत प्रचार के साथ-साथ ही गुरु ग्रन्थ साहिब जी के शुद्ध पाठ करने तथा भोग डालने पर अधिक जोर दिया। जहां-जहां पर भी नामधारी सिक्ख बनते, वहां ही पाठ किये जाते तथा भोग डाले जाते । भैणी के डेरे में सम्बत् 1914 से ही 5 ग्रन्थी 5 गुरु ग्रन्थ साहिब के पाठ करते रहते। पाठ समाप्त होने पर भोग डाले जाते। कुछ समय के पश्चात् यह संख्या 11 हो गई तथा सन् 1871 में यह संख्या पच्चीस पर पहुंच गई । हर एक मुख्य सूबे को गुरुजी का यह आदेश था कि वह प्रतिदिन कम से कम गुरु ग्रन्थ साहब जी के 100 पृष्ठों का पाठ अवश्य करे । प्रतिदिन दोनों समय डेरे में दीवान लगते । आप भी दीवानों में सम्मिलित हो कर संगतों के साथ ढोलक छैनों से शब्द पढ़ते । सम्वत् 1914 से सम्वत् 1917 तक के 4 वर्ष इसी कार्यक्रम के अनुसार व्यतीत हुए। बीच-बीच में अमृत प्रचार करने के

---

[3] नकल बही पन्ना 22

300) ग्रंथ साहिब के रुपये साहिब सिंह ले गया। सावन सुदी 1927 । 200) बूटा सिंह दीवान को अमृतसर में रोकड़ी दिये । कार्तिक बदी 15 संवत 1927 । 200) दीवान साहिब को दिलवाये ग्रंथ साहिब के। दुकान में से गोपाल सिंह ने दिये । 380) दीवान बूटा सिंह को दिये गोपाल सिंह ने दुकान से । पोह बदी 15 साल सम्वत 1927 । ग्रंथ साहिब की पोथियों का कुल हिसाब पूरा हुआ गोपाल सिंह के द्वारा ।

लिये आप ज़िला लुधियाना के गांव सियाहड, गुजरवाल, रायपुर, लोहगढ़, बसियां तथा ज़िला जालंधर में मुठड्डा, धुलेता आदि बड़े बड़े गांवों में चले जाते । प्रायः संगतें भैणी ही पहुंच जातीं तथा यहां ही अमृत छक कर भजन-बंदगी का उपदेश लेकर घरों को लौट जातीं । उच्च जीवन वाले सज्जनों को अमृत प्रचार करने तथा बंदगी की दीक्षा देने की आज्ञायें की गई। चार वर्ष के अल्प काल में ही प्रत्येक इलाके में अमृत प्रचार, भजन-बन्दगी करने तथा स्वरों में गुरु ग्रन्थ साहिब जी के पाठों के भोग डालने का प्रचार चल पड़ा । समस्त स्त्रियों की संगत में ढोलकी-छेनों से सीधे सादे ग्रामीण ... गुरुवाणी के शब्द पढ़ने की रीति दिन-प्रतिदिन फैलती गई। दीवानों में शब्द वाणी पढ़ने के लिये पहले-पहल तंती साज़ों , रबाब, ताऊस तथा तबलों वाली तीन मंडलियां भैणी में तैयार की गई । धुलेता गांव के भाई दित्तू, भाई फकीरीया तथा भाई वजीरा आदि मुस्लिम मिरासियों को दड़प अथवा स्यालकोट के प्रदेश की सेवा दी गई। भाई प्रेम सिंह , भाई कृपाल सिंह, भदौड़ वाले और भाई साहब सिंह वसियां वाले के जत्थे को मालवा (लुधियाना तथा फिरोज़पुर के प्रदेश) में सेवा करने के लिये लगाया गया। अटारी के भाई तारा तथा भाई पाली को माझे में संगतों को कीर्तन सुनाने के लिये नियुक्त किया । मलियांकी तलवंडी के भाई पशोरा तथा भाई सन्तू को ढड्ड सारंगे के साथ संगतों को बीर रस की ध्वनि में गुरुवाणी सुनाने पर लगाया। यह पंजाब के सभी इलाकों में जाते थे। गांव मोरों के रागी सूबा सिंह तथा उसके साथी जालंधर के द्वाबे में प्रचार करते थे। गांव छापा के रागी भाई खजान सिंह, भाई रतन सिंह, हरनाम सिंह, सुजान सिंह , तथा अतर सिंह (जिनके पूर्वजों को छठे गुरु हरगोबिंद साहब जी ने सारन्दा देकर राग का वर दिया था) आदि भैणी में रह कर आसपास के इलाकों के दीवानों में "आसा की वार" लगाते तथा शब्द सुनाते । रागियों तथा ढाड़ियों के लिये शब्द चौकी की भेंट एक रुपया नियत की गई ।

नामधारी इतिहास के विषय में अप्रकाशित पुस्तक 'सतगुरु विलास' में इन चार वर्षों का वर्णन इस प्रकार दिया है:-

"चौदह (1914) में दाने खरीदे, सम्वत् सोलह में अन्न घटा, सत्तरह में अकाल पड़ा। पहले अन्न एक रुपये का 2 मन बिका, फिर तीस सेर हो गया। आप भाव से दो सेर अधिक देते थे। अन्न से गुरु जी को बहुत लाभ हुआ । आये गये सिक्ख को प्रसाद छकाते । निर्धन छकते तथा आशीष देकर जाते ।"

इस समय ही बाबा जवाहर सिंह डरौलीवाले, काहन सिंह जी निहंग चकवाले, बाबा लक्खा सिंह, बाबा साहब सिंह, बाबा ब्रहमा सिंह तथा बाबा शुद्ध सिंह भैणी के डेरे में ही आकर रहने लगे तथा पृथक-पृथक् प्रदेशों में प्रचार के लिये जाते ।

सदावर्त लंगर लगा दिया गया। मुसाफिर, निर्धन, दुखी, तथा फकीरों को हर समय प्रसाद (भोजन) बांटने की रीति चलाई गई। पाठ के भोगों के समय का सारा चढ़ावा तथा नकदी लंगर में डाली जाती। गुरु राम सिंह जी चढ़ावे की किसी प्रकार की रकम अथवा वस्तु को अपने प्रयोग में नहीं लाते थे। अपना तथा कुटुम्ब का निर्वाह, खेती कारखाने तथा दुकान की आय पर होता था। गुरुद्वारे में कोई आदमी बेकार नहीं रह सकता था, उसको कुछ न कुछ काम अवश्य करना पड़ता था ।

हरिद्वार अर्धकुम्भ के मेले पर जाना

1 बैसाख संवत 1918 को अर्ध कुम्भ का मेला तथा गंगा स्नान था। गुरु रामसिंह भी मेला देखने तथा प्रचार करने के लिये हरिद्वार की ओर "पांच रुपये का कड़ाह प्रसाद (हलवा) करा कर चले।" बाबा जवाहर सिंह, काहन सिंह , सुद्ध सिंह, गोपाल सिंह, साहिब सिंह , चैन सिंह गुजरवालिया, उसकी बहिन, शोभा सिंह, दसोंदा सिंह, माई दौली, ताऊ सुद्ध सिंह , पधरी की माई साहबो, उबेक्यां वाला मैहताब सिंह और बहुत सी संगत साथ ही भैणी से चली। इनके अतिरिक्त सुद्ध सिंह रागी का तथा भाई लाभ सिंह रागी का जत्था तथा दित्तू रबाबी का जत्था भी साथ थे। सुद्ध सिंह सारी संगत का कोषाध्यक्ष था । संगत के साथ साथ गड्डे भी थे। भैणी से चावा होते हुए सराय के पास जाकर जरनैली सड़क पर चल पड़े।

खन्ना, बाड़ा, अम्बाला के रास्ते यमुना पार करके सहारनपुर पहुंचे। मार्ग में उन्हें घोड़ों का व्यापारी समुंद सिंह खोटे वाला घोड़े ले जाता हुआ मिला। सहारनपुर से वे हरिद्वार पहुंच गये । मार्ग में प्रतिदिन आसा की वार तथा शब्द चौकी लगाते गये। हरिद्वार जाकर भीम गोडा के पास पूर्व की दिशा में डेरा डाला। डेरे में प्रातःकाल "आसा की वार" का गायन होता तथा संध्या समय दीवान लगता ।

मेले पर हजारों की संख्या में संगत भी आई हुई थी, "सतगुरु विलास" में इस प्रकार वृतांत आया है :-

"अमृत समय (प्रातः काल) तो हज़रो वाली संगत को प्रसाद छकाया और बोले- 'जूठे बर्तन मैं मांजूंगा।" समस्त बर्तन (गुरुजी ने) स्वयं ही साफ किये ।

यहीं आप का मुकाबला एक अत्यन्त बहुमूल्य तथा रेशमी पहरावे में बैठे एक महंत से हुआ। इसके साथ ज्ञान चर्चा करते हुए आपने स्पष्ट तथा सरल वचन कहे कि :-

"तू तो कंजरों का बाना पहन कर बैठा है, तेरे शिष्य कौन सा बाना पहनेंगे । कंचनी (वेश्या) से परे कोई और बाना नहीं है। पट्टियां ढाली हुई है, केश गले में कुण्डलों की भांति खुले पड़े हैं तथा तिलक लगे हुये हैं। फिर उस की सिलवार को हाथ लगा , उन्होंने हास्य किया कि खूब कंजरों का बाना है।"

आप के डेरे के पास ही निर्मलों का डेरा था। आसा की वार तथा शब्द चौकी के समय संगतों में मेल-मिलाप होने पर निर्मले साधु चिढ़ते रहते तथा कई प्रकार की बातें करते। निर्मले वेदान्त विचारने तथा वेदान्त के धारण करने पर बहुत जोर देते। वे उपदेश देते कि यदि सब ब्रह्म ही ब्रह्म है, तो किस का गायन करें ? किस का जाप करें तथा किस की पूजा करें ? गुरु ग्रन्थ साहब जी में आई आदि वाणी को वे वेदों तथा वेदान्त का ही प्रतिबिंब बताते । गंगा को जाने के लिये निर्मलों को आप के डेरे के पास से जाना होता था । निर्मले कई बार अकारण भिड़ने तथा वादविवाद करने के लिये छेड़ छाड़ करने से नहीं हटते थे । 'सतगुरु विलास' के अनुसार एक दिन निर्मलों का वार्तालाप सुन कर गुरु राम सिंह जी ने कहा कि, "निर्मले पापी हैं । जिन्होंने जीवों को गुरुवाणी से हटा कर वेदों की ओर लगाया है। ये गुरुजी की वाणी से हटाते हैं। अपने को परमेश्वर कहलाते हैं।" यहां निर्मलों के साथ नामधारी सिंहों का लठ्ठ भी बजा, जिस में सिंहों ने निर्मलों को मजा चखाया ।

यहां भी आप ने नागा साधु तथा अन्य अतिथियों को भण्डारे दिये और अच्छे-अच्छे भोजन खिलाये। अर्धकुम्भ के पश्चात् आप पड़ाव डालते वापिस भैणी में आ गये ।

❋

प्रचार के लिए देशाटन

हरिद्वार के अर्धकुम्भ से वापिस आ कर आपने रागी जत्था तथा अमृत तैयार करने वाले पांच प्यारों के जत्थे को साथ लेकर बाहर गांवों में भ्रमण आरंभ कर दिया। आपने इस भ्रमण में लोगों को मढ़ी, मसान, जेष्ठों के स्थान, शहीदों के स्थान आदि की पूजा से हटा कर गुरुवाणी के पाठ की ओर लगाया । 'सतगुरु विलास' में पृष्ठ 132 पर लिखा है:-

"एक शहीद की जगह थी, लोग पूजते थे, गुरुजी ने उस जगह पर जूते मारे और कहा कि मिट्टी इकट्ठी करके पूजने लगे हैं। झूठे लोग भेड़चाल चलाते हैं।"

सम्वत् 1918 में हरिद्वार से लौटने पर आप फिर मुठड्डा गांव में गये । आसपास के गांवों में प्रचार करते धुलेता भी पहुंचे। द्वाबा में मुठड्डा, पुआहद्द, ज़िला लुधियाना में सियाहड़, गरेवालों के तपे में रायपुर, जंगल के तपे में खोटे आदि बड़े बड़े गांवों में प्रचार के केन्द्र स्वयं बनते चले गये। सिक्ख धर्म के प्रचार से लोग पुरातन प्रथाओं को छोड़ कर सीदी-साधी रीतियों को अपनाने लगे। इससे ब्राहमणों की मान प्रतिष्ठा और दान दक्षिणा घट गई । मुठड्डा के ब्राह्मणों ने गुरु राम सिंह जी से झगड़ा करने की चाल चली। चाल यह थी कि सिक्खों पर हुक्के का पानी फेंका जावे। आप को इस चाल का पता चला। आप ने ब्राह्मणों को इस कर्म से रोकने के लिये अपने सूबे भेजे, परन्तु ब्राह्मणों ने अपने घमण्ड में विपरीत ही उत्तर दिया। वे संधि की बात करने के लिये गये पुरुषों पर ही हुक्के का पानी फेंकने के लिये तैयार हो गये। इससे ब्राह्मणों तथा सिक्खो में दंगा हो गया। ब्राह्मणों को सिंहों ने लाठियों से अच्छी शिक्षा दी। इसके पश्चात् ब्राह्मणों तथा नामधारी सिक्खों में विरोध बढ़ता गया। ग्रामों की संगतें आपको अपने यहां आने की विनय करतीं, किन्तु आप ने शर्त यह निश्चित की हुई थी कि आप किसी गांव में उस दिन जायेंगे, जिस दिन गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी का पाठ समाप्त

करके भोग डालना हो। इस देशाटन में आप मल्लोट ज़िला होशियारपुर, दयालपुर आदि गाँवों में गये। बथोर भी प्रचार हेतु गये तथा स्कन्द पुराण मंगवा कर एक अध्याय सुनाया ।

सम्वत् 1918 को माघी (मित्ति 1 माघ का मेला) को आप मुक्तसर जाते हुए फरीदकोट ठहरे। साथ में काफी संगत थी। आपने भोजन बनाने के लिये बर्तनों के लिये राजा के पास आदमी भेजा। सेवक ने कहा- "अभी राजा साहब सोये पड़े हैं।" राजा ने बर्तन न दिये। फरीदकोट में दीवान लगा तथा बहुत से आदमी अमृत छक कर सिंह बने । राजा साहब फरीदकोट ने एक जासूस ,जो जाति का नाई था इनके संग में मिला दिया। नाई ने भी नामधारियों वाला बाना पहन लिया। नाई ने संगत के सिंहों के कपड़े चोरी करने आरम्भ किये । फरीदकोट के इलाके के गांवों में प्रचार करते हुये आप गांव बाजा पहुंचे। बाबा रूढ सिंह रुखड़ ने अपनी चादर के पल्ले में चौअन्नियां बांध ली। नाई ने दाव लगा कर चादर उठा ली। बाबा जी ने उस को पकड़ लिया। उसे संगतों में लाकर उस पर पंचायती दंड लगाया । उसकी एक ओर की दाढ़ी तथा दूसरी और की मूंछ मूड दीं। जासूस नाई ने जा कर राजा साहब को सारा वृत्तान्त सुनाया तथा यह भी कहा कि यदि गुरु राम सिंह जी का प्रचार न रोका गया तो शीघ्र ही आप की रियासत के समस्त ग्रामीण लोग नामधारी बन जायेंगे । राजा साहब ने गांव बाजा के नम्बरदार बाबा काहन सिंह को राजा के होते हुए, उसके राज्य में पंचायती अदालत स्थापित करके नाई को दंड देने के अपराध में 500) जुर्माना कर दिया ।

मुक्तसर पहुंच कर आपने आसा की वार तथा संध्या के दीवान (धार्मिक सभा) लगाने आरम्भ किये । गुन्डों और लफंगों को प्ररिक्रमा में गन्दे गीत गाने, नाचने तथा तूम्बा बजाने से रोका। इसी कारण नामधारियों तथा गुन्डों में अच्छी लड़ाई हुई और लाठी चली। नामधारियों ने मार मार कर गुन्डों का भुरकस निकाल दिया। माघी के स्नान के पश्चात् आप ने टिब्बी साहिब की ओर दौड़ कर आक्रमण के रूप में जाने का आदेश दिया। समस्त सिंहों ने पंक्तियों में खड़े होकर सोटा, लाठी , कुल्हाड़ी सैनिकों की भांति

कन्धों पर रख कर टिब्बी साहिब की ओर अन्धाधुन्ध नकली आक्रमण किया। जिनके पास लठ्ठ नहीं थे, उन्होंने बाजरा अथवा ठठेरा ही कन्धों पर रख लिये। ज़िला फिरोज़पुर की पुलिस का अंग्रेज़ अफसर तथा उसका अमला भी इस मेले पर थे। उन्हें इनका सैनिक ढंग के अनुसार पंक्तियां तथा टोलियां बना कर धावे के रूप में टिब्बी साहिब की यात्रा के लिये जाना बहुत बुरा लगा। इस पर अंग्रेज़ पुलिस अफसर ने गुरु राम सिंह जी को ताड़ने का यत्न किया, जिस पर आपस में प्रयाप्त झगड़ा हो गया। पुलिस वाले समय को विचार कर और अपनी अल्प शक्ति देख कर सोटा-लाठी की लड़ाई से टल गये। यद्यपि झगड़ा बढ़ते-बढ़ते रुक गया था, परन्तु ज़िला फिरोज़पुर पुलिस के छोटे बड़े अफसरों के मन में यह बात अच्छी तरह बैठ गई कि नामधारी अंग्रेज़ी सरकार के अफसर तथा उनकी आज्ञाओं की बिलकुल परवाह नहीं करते । नामधारी तथा सरकारी शासकों के 90 साल के लम्बे वैर का यह श्रीगणेश था ।

मुक्तसर से आप संगतों की विनय पर सुनइयां गांव में चले गए। इस प्रदेश में आप खण्डे का अमृत छकाते तथा प्रचार करते हुये जगरांव, रुमी, छज्जावाल. गुजरवाल होते हुये वापिस भैणी आ गये।

यह देशाटन अच्छा लम्बा था, जिस में ज़िला फिरोज़पुर, फूलकियां रियासतों (नाभा-पटियाला) के जंगल के प्रदेश तथा ज़िला लुधियाना की जगराओं और लुधियाने की तहसीलों के गांवों के लोगों ने अमृत छक कर वाणी पढ़नी आरम्भ की। साथ ही ब्राह्मणों और सोढियों की ओर से विरोध बढ़ा ।

शासक भी अब इस नये आन्दोलन को शंका की दृष्टि से देखने लगे। भैणी पहुंच कर आप ने हज़रों में अपने को गुरु बालक सिंह जी की सेवा में उपस्थित होने की तैयारी की। भैणी से हज़रों तक पड़ाव पड़ाव पर प्रचार करते हुए जाने का विचार था। रागी जत्थे , प्रचारक तथा घोड़े आप के साथ थे। उस समय के मण्डलेशवर साधू गांवों में अपनी मंडलियां ले जाया करते थे । साधु माथे टिकवाते, भेंट चढ़ाते, भंडारे खाते, दूध की

हंडिया जबरदस्ती चूल्हों से उतार कर पीते और चलते बनते । न कोई भलाई का उपदेश देते और न कोई कुरीति हटाते । अपना पेट भरते, डकार मारते, अच्छा खाते तथा मन्दा बोलते । गुरु रामसिंह जी दोनों समय दीवान लगा कर ढोलक छैनौं से शब्द पढ़ते । पुरुषों और स्त्रियों को अमृत पान कराकर कुरीतियों से हटाते, सच्चे साधारण मनुष्य बनने का उपदेश देते । भण्डारा वांटते । गुरु ग्रन्य साहब का पाठ करवा कर भोग डलवाते ।

जब आप भ्रमण करते करते गांव मुठडडा पहुंचे तब आप को इस विषय में एक पत्र मिला, कि गुरु बालक सिंह जी मार्गशीर्ष पूर्णिमा सम्वत् 1919 तदनुसार 6 दिसम्बर 1862 शनिवार को परलोकवासी हो गये हैं। इस पर आप वापिस अपने केन्द्र भैणी आ गये।

भैणी में आकर आप ने एक पत्र गुरु बालक सिंह जी के भाई मन्ना सिंह तथा हज़रों की संगत को लिखा और लगभग 50 साथियों के साथ हज़रों की ओर चल पड़े । लुधियाना, फिल्लौर, मुठडडा, होते हुए ढिलवां ब्यास का घाट पार करके आप अमृतसर पहुंचे । अमृतसर से कक्कड़ों के घाट होते हुए वजीराबाद के रास्ते बाबा जमीत सिंह के पास गिल गांव में जा विराजे । मार्ग में भी आप दीवान लगाते तथा अमृत पान कराते गये । गांव गिल्ल में आपने पुरुष-स्त्रियों को अमृत छकाया । जब आप नाव में बैठे हुए पार होने के लिये चनाब नदी के बीच पहुंचे, तो आपको हज़रों की संगत तथा गुरु बालक सिंह जी का भाई मन्ना सिंह दूसरी ओर से नाव में गुरु बालक सिंह जी की अस्थियां लाते हुये मिले । नदी में ही आपस में मिलाप हुआ । अतः आप भी वापिस आ गये । गिल गांव आकर बाबा जमीत सिंह जी के पास ठहरे तथा यहां से ही अस्थियां विदा कीं । अमृतसर तक कुछ सिक्ख भी साथ किये । आपने एक पत्र अमृतसर के खत्री भैया के नाम लिख कर दिया तथा उसको अस्थियों के साथ हरिद्वार जाने के लिये आज्ञा दी ।

इसी समय आप ने स्यालकोट अथवा शेखूपुरे के ज़िलों में अमृत तथा बाणी के प्रचार के लिये गांव गांव दीवान लगाने आरम्भ कर दिये ।

'पसरूर, उगोचक, वजीराबाद, माना वाले के प्रसिद्ध दीवान इसी भ्रमण में किये गये । सहस्त्रों स्त्रियाँ और पुरुष अमृत छक कर सिक्ख बने, तथा

उन्होंने हुक्का, अफीम, भांग, पोस्त, मदिरा, मांस, चोरी, बदकारी, ठगी आदि बुराइयां छोड़ दीं। स्यालकोट की पुलिस ने ज़िले के डिप्टी कमिश्नर को गुरुजी के इस देशाटन के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट दी । इसके आधार पर डिप्टी कमिश्नर स्यालकोट ने अपनी 5 अप्रैल 1863 की रिपोर्ट में लिखा है:-- "ज़िला लुधियाना का एक वृद्ध अवस्था का सिक्ख अपने दो सौ साथियों के साथ ज़िले का दौरा कर रहा हैं । रात को वह बन्दूकों की बजाय लाठियां पकड़ कर कवायद भी करते हैं । उसके पांच हजार अनुयायी हैं । वह् किसी शासक का शासन नहीं मानते। वह अपने जत्थे सहित जिस में स्त्रियां भी शामिल हैं, अमृतसर बैसाखी के मेले को जा रहा है ।"

इस समय तक गुरु रामसिंह जी के प्रचार करने तथा देशाटन के समाचार पंजाब के लाट साहब तक यथावत् पहुंचने आरम्भ हो चुके थे । आपके अमृतसर पहुंचने के समाचार पर लाट साहब ने मेजर मैकेन्ड्र्यू डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल पुलिस लाहौर को अमृतसर पहुंच कर डिप्टी कमिइनर अमृतसर के साथ मिल कर गुरुजी तथा उनके साथियों के वास्तविक उद्देश्यों के सम्बन्ध में ठीक ठीक पड़ताल करने का आदेश जारी कर दिया । साथ ही साथ ज़िलों के डिप्टी कमिश्नरों तथा पुलिस अफसरों को भी गुप्त आज्ञायें जारी हो चकी थीं, कि वह गुरु राम सिंह जी तथा नामधारी सिंहों पर कड़ी निगरानी रक्खें और उन के विषय में हर प्रकार के समाचार एकत्र करके सरकार को भेजें ।

11 अप्रैल 1863 को बैसाखी के मेले पर आप साथियों समेत अमृतसर पहुंचे । डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल पुलिस मेजर मेकेन्डर्यू, डिप्टी कमिशनर तथा सुपरिंटेंडेंट पुलिस अमृतसर आपको मिले और उन्होंने गुरुजी के साथ उनके देशाटनों तथा संगियों के विषय में बातचीत की । इस मुलाकात की रिपोर्ट डिप्टी कमिश्नर अमृतसर ने इस प्रकार दी : "उसके सब साथी हृष्ट-पुष्ट हैं । हर एक के पास काफी मजबूत लाठी है, मेला समाप्त

होने पर वह अपने गांव जाने का विचार रखते हैं । सरकार के विरुद्ध उन्होंने कोई बात नहीं की, वह शान्ति की ही बातें करते रहे । इसलिये भरे मेले में उनके कार्य में हस्तक्षेप करना अथवा बाधा डालना उचित नहीं समझा गया, क्योंकि उन्होंने अफसरों की यह सम्मति भी मान ली कि वह अपने साथियों को अपने से पृथक् कर दें । इसलिये उनको अपनी इच्छानुसार विचरने की आज्ञा दी गई ।" रिपोर्ट के शब्दों से ऐसा प्रतीत होता है कि लाट साहब की ओर से गुरु राम सिंह जी पर प्रतिबंध लगाने की आज्ञायें जारी हो चुकी थीं । सरकार तथा सरकार के कर्मचारी ऐसे समय तथा कारणों की प्रतीक्षा में ही बैठे थे जिनसे नामधारियों तथा नाम- धारियों के गुरु पर प्रतिबन्ध लगा कर इस समाज सुधार तथा राजनैतिक जाग्रति के नये उठ रहे आन्दोलन को उभरते ही रोक दिया जावे।

नई विवाह रीति अथवा आनन्द कार्य की मर्यादा

गुरु रामसिंह जी की उपस्थिति में, बैसाखी के मेले पर नामधारियों ने एकत्र हो कर व्यवहार सुधार तथा सामाजिक जीवन में से कुरीतियां दूर करने के सुझाव सोचे । एक प्रस्ताव यह भी था, कि जाति-पाति के बन्धन तोड़कर विवाह किये जावें। ब्राह्मणों वाली विवाह की रीति को तोड़ कर और परिवार-घातक रीतियों को हटा कर कम से कम व्यय में सीधे सादे ढंग से विवाह कार्य करने का निर्णय हुआ । जोगार्सिंह धूरकोट वाले ने अपनी पुत्री का आनन्द कार्य इस प्रकार करने की विनय की। खोटा गांव के समुंद्र सिंह तथा और साथी भी आये हुए थे। उन्होंने कहा, धूरकोट छोटा सा गांव हैं तथा जोगासिंह का गांव में बहुत प्रभाव भी नहीं । यदि कहीं बिरादरी का पारस्परिक झगड़ा हो गया अथवा ब्राह्मणों और दूसरे सभी लोगों ने इस नई रीति का विरोध किया तो बेल मंदे नहीं चढ़ेगी तथा लोग हंसी करेंगे। हमारा गांव खोटे बड़ा गांव है । हमारी बिरादरी भी बड़ी है। आस पास के गांव में अन्य भी बहुत से कुटुम्ब नामधारी हैं तथा मान-प्रतिष्ठा वाले पुरुष हैं । कोई

झगड़ा दंगा हो तो हम संभाल लेंगे । यदि ब्राहमण आदि बिगड़ेंगे तो हम जाट-विद्या का प्रयोग करके लट्ठों से ठीक कर लेंगे । यदि विवाह की नई रीति हमारे गांव खोटे से आरम्भ की जावे तो हम उत्तरदायित्व संभाल लेंगे । निर्णय खोटे के पक्ष में हुआ तथा प्रदेशों के नामधारियों को सूचनायें भेज दी गईं ।

बैसाखी के मेले के पश्चात् गुरु राम सिंह जी अपने जत्थे के साथ जालंधर तथा कपूरथला के ज़िलों के गांवों में प्रचार करते रहे । लगभग 1 मास के पश्चात् आप हरीकेपत्तनः (घाट) से होकर फिरोज़पुर के ज़िले में पहुंच गये । इस क्षेत्र में पंद्रह दिन प्रचार करके आप जेठ सुदी 10 सम्बत् 1920 वि. अनुसार 2 जून 1863 खोटे गांव पहुंचे । यहां पहिले से ही दीवान नियुक्त होने के कारण तथा विवाह की नई रीति के आरम्भ को देखने के लिये नामधारी सिंह तथा आसपास के लोग अच्छी संख्या में पहुंचे हुये थे ।

बाबा समुंद सिंह की लड़की तथा पौत्री के आनन्दकार्यों के अतिरिक्त 4 और विवाह जात-पाति के बन्धन तोड़ कर हुए । एक बढ़ई की लड़की का विवाह अरोड़ा कुल के लड़के से हुआ। दर्शक इस नई मर्यादा को देख कर चकित हो गये। बाबा समुन्द सिंह के ब्राह्मण पुरोहित तथा गांव के अन्य ब्राह्मणों ने धमकी दी थी कि यदि विवाह पुरानी रीति के अतिरिक्त किसी अन्य रीति से किया, तो वह चिता बना कर जल मरेंगे तथा इस का पाप गुरु राम सिंह जी तथा जाट यजमानों के सिर होगा । समझाने पर जब ब्राह्मणों ने आग्रह न त्यागा तो सिक्ख भी गर्म हो गये । ब्राहमणों ने मरने वाली धमकी को सफल न होता हुआ देख कर अफसरों के पास इनकी शिकायत करने का आश्रय लिया । ब्राहमण तथा गांव के समस्त लागी नाई, धोबी , मिस्त्री , मैरासी इस नई रीति से बहुत दुखी थे, क्योंकि इस ढंग के विवाह की रीति प्रचलित होने से उनकी बृति तथा समस्त आय मारी जाती थी । इसलिये उन्होंने गांव के चौकीदार के कान भर कर बाघापुराना के 'थाना में यह रिपोर्ट कराई कि “दो तीन दिन से रामसिंह तथा उसके 500 अनुयायी

खोटे गांव में एकत्रित हुये हैं तथा उन की चाल-ढाल पृथक् ही प्रतीत होती हैं । वह सरकार के विरुद्ध बातें करते हैं। वह कहते हैं कि शीध् ही सारा देश उन का हो जावेगा । उनके पीछे सवा लाख आदमी होंगे । लगान के रूप में वह किसानों से केवल उपज का पांचवां हिस्सा ही लिया करेंगे ।"

इस रिपोर्ट के पहुंचते ही थाने से एक हवलदार को मौके पर भेजा गया । 6 जून को फिरोज़पुर का छोटा सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस गुरु राम सिंह जी के सम्बन्ध में जांच करने के लिये खोटा गांव में पहुंचा । खोटा तथा साथ के गांवों के नम्बरदारों ने यह ब्यान दिये कि आप सरकार के विरुद्ध बातें करते हैं ।

7 जून को फिरोज़पुर के सुपरिस्टेन्डेंट पुलिस की यह रिपोर्ट लाट साहब तक पहुंचाई गई । इस पर लाट साहब ने पंजाब सरकार के मंत्री को आदेश दिया कि फिरोज़पुर का डिप्टी कमिश्नर मिस्टर थाम्स तत्काल खोटा गाँव पहुंचे और नम्बरदारों के ब्यान ले । ब्यानों की नकल सरकार के सचिव को भेज दे और यदि आवश्यकता समझे तो गुरु राम सिंह जी को तत्काल गिरफ्तार कर ले । इस़ आज्ञानुसार फिरोज़पुर का डिप्टी कमिशनर तत्काल खोटा गांव में पहुंचा और उसने गुरु रामसिंह जी को मिल कर यह हुक्म बताये एवं जारी किये किः--

(1) ज़िला फिरोज़पुर में नामधारी सिंह कोई मेला अथवा दीवान नहीं लगा सकते ।

(2) गुरु राम सिंह तथा उसके शिष्यों को उसके घर भैणी ज़िला लुधियाना में पहुंचा दिया जावे । 9 अथवा 10 जून को आप बाघापुराना के थाना में पहुंच गये । उक्त आज्ञा के फलस्वरूप आप को 6 जून तक भैणी पहुंचा दिया गया। भैणी केन्द्र पर पुलिस ने कड़ी निगरानी करनी आरम्भ कर दी। डिप्टी कमिश्नर की गिरफ्तारी के लिये एवं मिसल का पेट भरने के वास्ते उस समय पूरी सामग्री न मिल सकी, इसलिये उनकी गिरफ्तारी न हो सकी ।

निगरानी तथा दूतकार्य

लाट साहब ने मेजर मेकन्डर्यू को हुक्म दिया कि वह पंजाब के पृथक् पृथक् ज़िलों में से अपने अति विश्वास पात्र तथा आज्ञाकारी मनुष्य नाम- धारियों के विषय में समाचार एकत्रित करने के लिये भेजे ।

ज़िला अटक के सहायक सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस मि. ग्रीन को लाहौर बुलाया गया तथा आदेश दिया गया कि हज़रों वाले केन्द्र पर कड़ी निगरानी करे तथा हज़रों और भैणी में हर प्रकार के सम्बन्ध के साधनों, पत्रों अथवा मौखिक सन्देश ले जाने तथा लाने वाले हरकारों पर सख्त निगरानी रखी जावे ।

लाट साहब के संकेत होने की देर थी, कि स्थान स्थान पर अंग्रेज़ शासक तथा उनके देशी गुर्गे , नामधारियों के विरुद्ध कार्यवाहियों की फायलों के पेट भरने लगे। प्रत्येक अंग्रेज़ अफसर के मन में सन् '57 में हुए विद्रोह का चित्र फिर पनप उठा । उन के दिलों में यह बात बैठ गई कि गुरु राम सिंह धर्म प्रचार की आड़ में ग्रामीण जनता को अंग्रेज़ीं शासन के विरुद्ध विद्रोह के लिये तैयार कर रहा है तथा नामधारी अंग्रेज़ों के कट्टर बैरी हैं। मेजर मेकेन्डर्यू डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल पुलिस पंजाब ने अपनी 9 जून की रिपोर्ट में लिखा, "गुरु राम सिंह जी के प्रचार ने पंजाब में बड़ी गड़बड़ी "पैदा कर दी है । बेशक उस के विषय में देशी अफसरों की सम्मतियां पृथक् पृथक् हैं । उदाहरण के रूप में बटाले के देशी अफसर श्री कायम अली का मत है कि गुरु राम सिंह खतरनाक पुरुष है, उसको गिरफ्तार करना चाहिये । परन्तु उसी तहसील का छोटा तहसीलदार भाई लहना सिंह जो दरबार साहब अमृतसर के बड़े ग्रन्थी भाई प्रधुमन सिंह का भाई होने के कारण पुजारियों के वर्ग में से है, उसको कुमार्गी समझता है तथा राजनैतिक तौर पर खतरनाक नहीं समझता । उसको यह भी आशंका है, कि नाम के प्रेम में मुग्ध होकर कई बार वह भविष्य में होने वाली बातें कह देता है ।

घबराये हुये अंग्रेज़ शासक अब इस टोह में लगे रहते कि कहीं से

भी कूकों (नामधारियों) के विषय में और बातों का पता चले । देशी भेदियों ने नकद इनाम तथा प्रशंसा पाने के प्रलोभन में कूकों के प्रार्थना के समय खड़ा होने तथा सत् श्री अकाल के जयकारे लगाने को फौजी ढंग से कवायद करने का रूप दे कर विदेशी अधिकारियों के कान भरे ।

मुठड्डा के नम्बरदार तथा वजीरा चौकीदार से इसके विषय में पड़-ताल की गई। बहाल सिंह पुलिस सारजेन्ट से भी पूछा गया । उस ने बताया कि मैं नामधारी हूं, छुट्टियों के समय में गुरु रामसिंह जी के दर्शन के लिये जाता हूं तथा जहां भी वह हों, कई कई दिन शब्द बाणी सुनता हूं । दीवानों में प्रार्थना खड़े हो कर की जाती है । रात को शब्द कीर्तन के पश्चात् भी प्रार्थना खड़े होकर होती है । दीवान में सब सज्जन सावधान हो कर खड़े होते हैं। सम्भव है दुती वैरी इस को ही फौजी ढंग की कवायद कहते हों ।

अन्त में सरकार को नामधारियों के हर काम में से सरकार के विरोध की बू आने लगी । दूतों तथा जासूसों ने इस शंका को वास्तविक बना कर दिखाने के प्रयत्न करने आरम्भ किये । कई अंग्रेज़ शासक जिन का सीधा सम्बन्ध पुलिस अथवा शासन की नीति से नहीं था; अपने स्थान पर ही उड़ती हुई बातें तथा समाचार एकत्रित करने लगे। कई अपने ही व्यक्तिगत दूत रखकर समाचार लेने के यत्नों में व्यस्त हो गये । ऐसे हाकिमों में से जालंधर छावनी का मजिस्ट्रेट कप्तान मिल्लर भी था । उसके अपने निजी दूत का नाम गेंदा सिंह था जो न ही सरकारी पुलिस में नौकर था तथा न ही किसी और विभाग में । यह केवल साहब माई-बाप को सलाम करने वाला अनुत्तरदायी टोडी था। 11 जून को कप्तान मिल्लर ने मि. अलफन्सटन डिप्टी कमिशनर तथा मि. रेमजे ज़िला के सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस को बताया कि मैंने गेंदा सिंह को गुरु राम सिंह के गांव में भेजा था । गुरु वहां से अनुपस्थित था । उन का चेला साहब सिंह वहीं था, गेंदा सिंह ने नामधारी बनने की इच्छा प्रकट की। रात को गेंदा सिंह उनकी टोली में जा मिला, जिस में 50 के लगभग पुरुष थे । ढोलक बजते ही हर एक ने अपनी अपनी लाठी साहब सिंह से ले ली। साहब सिंह ने सारी टोली को दो घण्टे कवायद कराई वह

अकाल-अकाल के जयकारे लगाते रहे । इसके पश्चात् गेंदा सिंह ने गुरु राम सिंह को मिलने की इच्छा प्रगट की। इस पर उसके चेले ने उस स्थान का पता दिया, जहां कि वह गुरु राम सिंह जी को मिल सकता था ।

गेंदा सिंह को दो पत्र भी दिए गए । यह पत्र गेंदा सिंह ने गुरु को नहीं पहुंचाये । उस ने बहाना बनाया है कि दोनों पत्र खो गये हैँ । और जालंधर वापिस आकर गेंदा सिंह ने यह दोनों पत्र मुझे दे दिये । इन पत्रों के खुले अनुवाद इस प्रकार हैं :--

पत्र नम्बर (1) फतेह (अथवा सत श्री अकाल) हस्ताक्षर गुरु गोबिन्द सिंह ।[4]

"मैं गुरु गोबिंन्द सिंह एक बढ़ई की दुकान में पैदा होऊंगा तथा राम सिंह के नाम से बुलाया जाऊंगा । मेरा घर सतलुज तथा यमुना नदियों के मध्य स्थान में होगा। में अपना धर्म बताऊंगा । मैं फिरंगियों को पराजित करूंगा, मुकुट अपने सिर पर रखूंगा तथा शंख बजाऊंगा। सम्बत् 1921 में रागी मेरी प्रशंसा करेंगे। मैं बढ़ई सिंहासन पर बैठूँगा । जब सवा लाख सिख मेरे साथ होंगे तब मैं फिरंगियों के सिर काटूँगा, मैं युद्ध में कभी पराजित नहीं होऊंगा तथा अकाल शब्द का नाद करूँगा । ईसाई लोग जब सवा लाख सिक्खों के जयकारे सुनेंगे तो अपनी स्त्रियां छोड़ कर देश में से भाग जावेंगे। यमुना तट पर बड़ा भारी युद्ध होगा। रक्त रावी नदी के नीर की भांति बहेगा

---

[4] नोट लेखक:--यह लिखतें असल रूप में कहीं नहीं मिलती । मिल्लर के खुले अनुवाद से ही पुनः अपनी भाषा में अनुवाद किया है । कई लेखकों ने इन पत्रों को असली और सही समझ कर भीषण गलतियां की हैं । पहला पत्र मन-घड़न्त एवं नकली भविष्य-वाणी है, जिसको गुरु गोबिन्द सिंह जी के हस्ताक्षर से अथवा गुरु गोबिन्द सिंह जी की परिस्थिति में लिखी हुई सिद्ध करने का प्रयास किया है। बाबा साहब सिंह जी का ऐसी भविष्यवाणी अपने नाम दीक्षा गुरु की ओर लिख कर भेजना मूर्खता तथा पागलपन की सीमा से भी परे है । साथ ही द्वितीय पत्र में अपने गुरु को यह लिखना कि पहली लिखित सब सिक्खों को सुना देना सिद्ध करता है कि यह दोनों पत्र मनघड़न्त और जाअली हैं ।

। किसी फिरंगी को जीवित नहीं रहने दिया जायेगा । सम्बत् 1922 अथवा 1865 में देश में राज विद्रोह होगा। खालसा राज्य करेगा तथा राजा प्रजा सुख-शान्ति से रहेंगे। कोई किसी पर अत्याचार नहीं करेगा ।

दिन प्रतिदिन रामसिंह का राज्य बढ़ेगा । परमात्मा ने ऐसे ही लिखा है । भाइयों, यह झूठ नहीं है । सन् 1865 में सारे देश पर रामसिंह का राज होगा। राज्य होगा । मेरे सिक्ख वाहेगुरु की पूजा करेंगे, वाहेगुरु के हुक्म से यह होकर रहेगा ।"

पत्र नम्बर (2) "फतेह (सत श्री अकाल) साथ का बंद किया हुआ पत्र सब सिक्खों को सुना देना, यह यहां के सिक्खों की विनय है।आप जहां भी हों उस स्थान, गांव का पता भेजो, हम आप के दर्शन करना चाहते हैं । आप बहुत समय से बाहर गये हुये हैं । इस ओर शीघ्र आओ, हम इतने समय आप से पृथक् नहीं रह सकते ।"

गेंदा सिंह दूत ने जो बतंगड़ बनाया है, उस का ज्ञान पत्रों के शब्दों को एक दो बार पढ़ने ही से हो जाता है। यह दोनों पत्र नामधारियों के विषय में दूतों तथा जासूसों के अन्य पेचों के मन-घड़न्त तथा झूठी वर्णमाला के पहले अक्षर हैं । बाबा साहब सिंह बहुत चतुर तथा होशियार पुरुष थे । वह अमृत छकाने के समय ही से गुरु राम सिंह जी के साथ भैणी साहिब में रहते थे । उस की प्रत्येक वास्तविक तथा विश्वासपात्र नामधारी के सम्बन्ध में पूरी-पूरी जानकारी थी । हज़रों को जाते समय गुरु राम सिंह जी बाबा साहिब सिंह को भैणी केन्द्र का कामकाज सुपुर्द कर गये थे। उस को गुरु राम सिंह जी के भ्रमण तथा खोटे के मेले का पूरा-पूरा ज्ञान था ।

साहिब सिंह जैसा आदमी किसी प्रकार के पत्र , एक पर-पुरुष तथा अपरिचित पुरुष को देकर जो कि नामधारी भी नहीं था गुरु राम सिंह जी के पास कभी नहीं भेज सकता था। नामधारियों के अपने हर-कारे थे तथा सन्देश पहुंचाने के लिये अपने ही संकेत और गुप्त अक्षर भी थे । समस्त पंजाब में नामधारियों की डाक का गांव-गांव में अपना प्रबंध था ।

डिप्टी कमिश्नर तथा सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस को मिस्टर मिल्लर के दूत

गेंदा सिंह के बयानों तथा उपयुक्त दोनों पत्रों के लेखों पर विश्वास न हुआ । इन दोनों जिम्मेवार हाकिमों ने इस पर तत्काल कोई कार्यवराही करनी आवश्यक न समझी , जैसी कि खोटे गांव के मेले की रिपोर्ट पर लाट साहब तथा अफसरों की ओर से की गई थी। पांच अथवा छः दिन पश्चात् इन बयानों के सच-झूठ का निर्णय करने के लिये अच्छे वर्ग तथा उच्च सम्मान वाले चार पुरुषों को, जिनके नाम रिपोर्ट में जान-बूझ कर नहीं दिये गये भैणी को ओर भेजा गया । लुधियाना पहुंच कर इन के भेष बदल कर नकली नामधारी बनने की परीक्षा करने पर यह पता चला कि इन चार में से केवल एक ही भेष बदल कर नकली नामधारी बन सकता हैं । साथ ही साथ गेंदा सिंह भी नकली नामधारी बनने में सफल हुआ । यह दोनों दूत दो दिन भैणी में रहे। इन्होंने वापिस आ कर बताया कि गुरु राम सिंह जी ने उनके साथ प्रेम-प्यार वाला बर्ताव किया तथा भैणी पहुंचने पर पहली रात ही उन्हें अपने पास बुला लिया। उन्हें एक माला दी । वाहेगुरु नाम का भजन दिया तथा इस का जाप करने की आज्ञा दी ।[5]

इन दूतों के वक्तव्य सरकारी फाइलों के पेट भरने के लिए अच्छी सामग्री थी । इन बयानों में वह मानते हैं कि नामघारियों का बर्ताव शान्तिमय था । भैणी में उन्होंने कोई कवायद होती नहीं देखी, तथा न ही कोई शस्त्र थे। भाई साहब सिंह उन दिनों लुधियाना गया हुआ था।

पंजाब के कार्यवाहक इंस्पेक्टर जनरल पुलिस मेजर जी डब्ल्यू यंगहसबेन्ड ने स्यालकोट , लाहौर, अमृतसर, जालंधर के डिप्टी कमिशनरों, लाहौर तथा जालंधर डिवीजनों के कमिशनरों और फिरोज़पुर, जालंधर, अमृतसर, अटक के पुलिस सुपरिटेंडेन्टों मेजर मेकेन्डर्यू डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल तथा मजिस्ट्रेट मिल्लर के दूत गेंदा सिंह की ओर से दी गई समस्त खबरों के आधार पर एक रिपोर्ट लिख कर 28 जून 1863 को लाट साहब को प्रस्तुत

---

[5] भजन लेने के लिये सकेश स्नान करके प्रात:काल भजन देने वाले के पास उपस्थित होना पड़ता है। रात को भजन नहीं दिया जाता।

कर दी । इस रिपोर्ट में गुप्तचरों के समाचार के अनुसार यह भी लिखा था कि आ रही दिवाली को नामधारियों का एक बड़ा सम्मेलन गुरु राम सिंह जी ने अमृतसर में बुलाया है तथा यह शंका है कि इस मेले पर नामधारी कोई उपद्रव खड़ा करेंगे । अमृतसर डिवीजन के कमिश्नर मेजर फैरिनगटन ने भी 31 मई को लिखा था कि यहां यह बात उड़ी हुई है कि इस बार अमृतसर में दिवाली के अवसर या उसके आसपास ही गुरु राम सिंह जी तथा उनके सिक्खों की ओर से किसी न किसी प्रकार का प्रदर्शन अवश्य ही किया जायेगा ! कप्तान मेन्जीस, सुपरिटेन्डेन्ट पुलिस ज़िला अमृतसर को 7 जून के दिन एक ऐसे पत्र का पता चला जो गुरु राम सिंह जी की ओर से नामधारी संगतों के नाम लिखा हुआ कहा जाता था। यह पत्र महन्त नारायण सिंह ने कप्तान साहब को दिलाया। मिति 22 को इस पत्र का अंग्रेज़ी अनुवाद करके लाहौर पुलिस के केन्द्रीय दफ्तर में भेज दिया गया । अंग्रेज़ी अनुवाद का अनुवाद इस प्रकार हैः--

"वाहगुरु जी का खालसा, श्री वाहेगुरु जी की फतेह सब सिक्ख, सारे ग्रामीण भाई तथा बच्चे जो दीवान दरबार में आवें मेरी आज्ञा की ओर ध्यान दें, नहीं तो तुम्हारे मुंह दोनों संसारों में काले होंगे। जो भी व्यभिचार करे चोरी, ठगी, कुकर्म करे, उसको दरबार (दीवान) में न आने दो । यदि वह जबरदस्ती आने का यत्न करे तो गुरु से उस को रोकने के लिये प्रार्थना करो । इकट्ठे होकर ग्रंथ साहिब के शब्द गाओ तथा वाहेगुरु शब्द का जाप करो। किसी से भय न करो। किसी को बुरा न कहो। तुम्हारा गुरु अपने सिक्खों की रक्षा करता है तथा उनकी सहायता करेगा। जिन्होंने पाप करके मुझे दुखी किया है, मैं तुम्हें उन के नाम भेजता हूं । तुम उन्हें अपने घर पर न घुसने दो ।"

"जो भी अपनी पुत्री का मूल्य लेकर विवाह करता है, वह बदमाश है । जो पुरुष अपनी पुत्रियों को मार देते हैं तथा बदले में रिश्ते करते हैं वह लफंगे हैं। अपने बच्चे-बच्चियों को ग्रन्थ साहब के आदेशों की शिक्षा दो और दिवाली पर अवश्य आओ ।"

पंजाब सरकार का मत

इंस्पेक्टर जनरल पुलिस की इस रिपोर्ट पर सरकार के कार्यवाहक मंत्री मि. टी. डी. फोरर्साइथ ने इस प्रकार का नोट दिया--

1. गुरु राम सिंह की कार्यवाहियों के विषय में समाचार पहुंचने के समय 1 अप्रैल से लेकर अब तक पिछले तीन महीने में गुरु राम सिंह जी की शिक्षाओं तथा कार्यवाहियों पर पूरी पूरी निगरानी रखी गई है ।
2. बहुत से अफसरों की रिपोर्ट से जो अभी तक आ चुकी हैं , यह प्रतीत होता है कि गुरु राम सिंह सिक्ख धर्म में आ गई कुरीतियों को दूर करके सुधार करना चाहता है । उसके कई नियम तथा आज्ञाएं सुखदायी ही नहीं, परन्तु लाभदायक भी हैं ।
3. उसके चेलों की संख्या काफी है, परन्तु वह अधिकतर छोटी जातियों में से ही हैं । उनमें से कुछ पुलिस में भी हैं ।
4. गुरु राम सिंह जी कहते हैं कि वह इस धरती का राज्य नहीं चाहते, इससे यही परिणाम निकाला गया है कि उनकी शिक्षाएं राज विद्रोही नहीं हैं ।
5. उनके धार्मिक सुधार की लहर के पर्दे में कई पुरुष लाभ उठा कर इस प्रकार के सच्चे-झूठे पत्र फिरा रहे हैं, जो जन-शांति के लिये भयानक हैं । गुरु राम सिंह के कई चेलों के सम्बन्ध में यह रिपोर्ट हैं कि वे राज्य विद्रोह की बातें करते हैं। जनता में यह प्रभाव भी बैठा हुआ है कि गुरु राम सिंह आने वाले समय में ऐसा राजा बनना चाहता है, जो अंग्रेज़ों को पंजाब से बाहर निकालेगा ।
6. गुरु राम सिंह की इच्छा कुछ भी हो, परन्तु उसके दीवानों , मेलों तथा उसकी शिक्षाओं से लोगों के मन डावां-डोल हो गये हैं। पुरातन रीति वाले सिक्खों तथा नामधारी सिक्खों में एक दंगा भी हो चुका है।
7. यह बात जनसाधारण में बहुत फैली हुई है कि दिवाली के मेले के समय पर अमृतसर में नामधारियों का भारी सम्मेलन होगा । इस लिये दंगा

फसाद की भी संभावना है ।

8. ऊपर दी गई स्थितियों से यह प्रतीत होता है कि गुरु राम सिंह जी के दीवान अथवा सम्मेलन , अवैध सम्मेलनों की सीमा में आते हैं। तथा इस प्रकार वह धारा 141 भारतीय दंड संहिता के आधार पर अपराध अथवा जुर्म बन जाते हैं । सम्भव है कि कोई दीवान अथवा सम्मेलन कानून के विरुद्ध न हो, परन्तु बाद में सम्मेलन में गैर कानूनी कार्यवाहियां होने से सम्मेलन करने वाले अथवा उस में भाग लेने वाले इस धारा के अपराधी होंगे।

9. निःसंदेह सरकार धर्म से सम्बन्धित समस्याओं में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करना चाहती । न ही ऐसे सम्मेलनों तथा दीवानों में हस्तक्षेप करना चाहती हैं, जो धार्मिक सुधार के सम्बन्ध में किये जावें परन्तु यदि ऐसे दीवान शांति भंग करने वाले हों, तो ऐसे सम्मेलन कानून के विरुद्ध समझे जायेंगे तथा कानून के अनुसार ऐसे सम्मेलन के नेता दंड के भागी होंगे।

10. वर्तमान परिस्थितियों में, गुरु राम सिंह तथा उसके अनुयायियों को ऐसे दीवानों से निकलने वाले परिणामों के विषय में सावधान कर दिया जावे । उन से इस बात की जमानत ली जावे कि वे अमृतसर में कोई कानून विरुद्ध सम्मेलन नहीं बलायेंगे । उनको यह बात विस्तार पूर्वक बता दी जावे कि उनके सम्मेलन चाहे कितने ही शान्तिमय हों, परन्तु यह निश्चय हो चुका है कि इन के सम्बन्ध में फैलाई हुई सच्ची अथवा झूठी बातें लोगों के हृदयों में उथल-पुथल मचा देती हैं -।

11. इस चेतावनी के पशचात यदि फिर भी दीवान लगें, अथवा शांति भंग हो, तो उस के लिये गुरु राम सिंह तथा उस के अनुयायियों को उत्तरदायी ठहराया जावे तथा उन पर शांति भंग करने तथा सरकार के विरुद्ध राज्य विद्रोह करने के अपराध में अभियोग चलाया जावे ।

12. गुरु राम सिंह को उसके गांव में ही नजरबंद कर दिया जावे वह गांव से बाहर न जावे । पुलिस विभाग इस सम्बन्ध में सब बातों का ध्यान रखें तथा उसकी कार्यवाहियों की सीधी सूचना दे ।इस रिपोर्ट के

पश्चात् गुरु राम सिंह जी को भैणी में नजरबंद कर दिया गया । पंजाब में नामधारियों के दीवान, मेले तथा सम्मेलन सरकारी आज्ञानुसार बन्द कर दिये गये। नामधारी सिक्ख सरकार की दृष्टि में हिंदुस्तान में विदेशी अंग्रेज़ी शासन के विरोधी तथा दुश्मन समझे जाने लगे ।

नजरबन्दी तथा प्रतिबन्ध के चार वर्ष

2 जुलाई 1863 से जुलाई 1867 तक

लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर जार्ज इलियट ने अपने 6 जुलाई 1863 के पत्र में जो पंजाब गवर्नमेंट के सेक्रेटरी (सचिव) के नाम भेजा गया था, लिखा कि 5 जुलाई को गुरु राम सिंह जी को लुधियाना बुला कर सारे आदेश तथा हिदायतें सुना दी गई हैं ।

इसके साथ ही पंजाब के समस्त ज़िलों में आदेश जारी किये गये कि नामधारियों पर पुलिस कड़ी निगरानी रक्खे तथा किसी स्थान पर भी नामधारी कोई दीवान अथवा सम्मेलन न करें । इस पर नामधारियों तथा सरकारी कर्मचारियों में आंख मिचौनी का खेल शुरू हुआ ।

इन चार वर्षों की घटनाएं अभी तक पूर्ण रूप में इतिहास के प्रकाश में नहीं आई' । पहले अढाई सालों में सरकार इस आंदोलन को दबाने के लिये क्या कुछ करती रही, इस का अधिक विवरण अभी तक लेखक को नहीं मिला ।

19 जनवरी सन् 1867 को दी गई सरकारी रिपोर्ट में जून 1866 का ही समस्त वर्णन है अथवा 1863 की रिपोर्ट में आये विषयों की बातें ही विस्तार रूप में दी गई हैं। सितम्बर 1866 में दूसरी बार पुनः भाई गेंदा सिंह ने अपने दूतत्व की योग्यता के जौहर दिखाये । कूकों के सम्बन्ध में दी गई उसकी सूचनाओं की नकल रिपोर्ट के अंग्रेज़ी अनुवाद के अनुसार इस प्रकार है:

"भैणी पहुंच कर बहुत से कूकों (नामधारियों) से मिला, जिनमें से लुधियाना का एक भगत सिंह भी था । यह गुरु राम सिंह जो का हर-कारा है । भगत सिंह के कथनानुसार गुरु राम सिंह जी को नित्य रात को गुरु गोबिंन्द सिंह जी के दर्शन होते हैं। प्रत्येक कूके को हुक्म है कि एक अच्छी सफाजंग

अथवा परशु राम (कुल्हाड़ी) अपने पास रखे । वह राज्य के विरुद्ध गड़बड़ करने को तैयार बैठे हैं तथा आदेश के लिये गुरु रामसिंह जी से प्रार्थनायें भी की हैं। उन्होंने कहा है, कि वह दिवाली से पहले कोई आज्ञा देंगे। गुरु राम सिंह जी के बाद सूबा साहब सिंह उनके स्थान पर होगा। लुधियाना के समस्त रामदासिये सिंहों ने जो गुरु गोविन्द सिंह जी के सिक्खों के नक्कारची थे गुरु राम सिंह जी से नक्कारचीयों की सेवा मांगी है । गुरु राम सिंह जी का जामाता महताब सिंह जालंधर के सूबा काहन- सिंह के पास बहुत आता जाता है । सरदार मंगल सिंह रायपुरिया जागीर- दार ने दंगे के समय सहायता का विश्वास दिलाया है। अंग्रेज़ों की नौकरी में समस्त सिक्खों के शस्त्रों को गुरु राम सिंह अपने शस्त्र समझता है । यदि साहिब सिंह नेता बन गया तो अवश्य ही दंगा हो जावेगा । कूके बड़े जोश में हैं तथा गुरु राम सिंह जी के आदेश को मानने के लिए अपना बलिदान तक देने को तैयार हैं ।"

इस बार मि. मिल्लर को समाचार नहीं दिया गया । सम्भवतः गेंदा सिंह को मन घड़ंत समाचार गढ़ने अथवा झूठी लिखतें बनाने की शंका में अफसरों ने कोठी अथवा दफ्तर में घुसने की मनाही कर दी हो। इस बार भाई गेंडा सिंह स्वतन्त्र ही विचरते प्रतीत होते हैं। तथा समाचार सीधा ही लाहौर पहुंचाया गया दिखाई पड़ता है ।

रिपोर्ट में मि. क्रिस्टी , अमृतसर के सहायक सुपरिंटेंडेंट पुलिस को एक ऐसे लेख के मिलने का वर्णन है, जिसमें नामधारियों के लिये रहित-मर्यादा भी बताई गई है । इस का अंग्रेज़ी अनुवाद भी रिपोर्ट में दर्ज है।

नामधारियों ने 1857 से ही अंग्रेज़ी सरकार के चलाये हुए सम्बन्ध तथा यातायात के साधनों का बहिष्कार कर रखा था । इस रिपोर्ट में नामधारियों के अपनी डाक प्रबन्ध का वर्णन अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर मेजर परकिन्स के अनुसार इस प्रकार है । "कूकों अथवा संत- खालसों का पारस्परिक डाक का निजी प्रबंध है जो अत्यंत प्रशंसनीय युक्ति से संगठित किया गया है । गुप्त आदेश तथा हिंदायतें इस तरह चारों ओर भेजी जाती हैं जिस तरह पुराने समय में स्कॉटलैंड के लोग किया करते थे । पहले कूके के

संदेश अथवा पत्र गांव में लाते ही उस गांव वाला कूका तत्काल सब काम काज छोड़ कर दूसरे नियुक्त हरकारे की ओर अथवा स्वयं ही दूसरी मंजिल की ओर दौड़ पड़ता है ।

सारे काम वहीं छोड़ देता है । यदि रोटी खाता हो तो दूसरा निवाला मुंह में नहीं डालता । न ही पहले हरकारे से कोई प्रश्न करता है । आवश्यक बातें कागज़ पर लिखकर पत्र के रूप में नहीं बल्कि कण्ठस्थ रूप में भेजी जाती हैं । इन पत्र-पत्रिकाओं को लाने तथा ले जाने के लिये कूके बड़ी सड़कों अथवा साधारण मार्गों का प्रयोग नहीं करते, बल्कि अपने ही नियुक्त किये रास्तों द्वारा जाते हैं:-.

इस रिपोर्ट में निम्नलिखित रोचक बातें नामधारियों के विषय में दी हुई हैं:

(1) पुजारी, ब्राह्मण तथा अन्य धार्मिक नेता जो सनातनी हिन्दुओं के चढ़ावे की रकमों पर पलते तथा जीते हैं, स्वाभाविक रीति से इस नये सम्प्रदाय के बैरी है; क्योंकि इस सम्प्रदाय के नियमों, उद्देश्यों तथा मन्तव्यों के चालित होने पर उनको जन्म, विवाह तथा मृत्यु की रीतियों के समय वृत्ति तथा दान-दक्षिणा आदि की एक कौड़ी भी नहीं मिलती ।

(2) कूके, मढ़ी, मसान, मन्दिर, देवता, मज़ार तथा कब्र आदि को बिल्कुल नहीं मानते तथा उन का मत है कि मूर्ति-पूजा, पाषाण पूजा, ईट पूजा, अस्थि पूजा, तथा राख पूजा के यह अड्डे उड़ा देने चाहियें।

(3) कूकों के खड़े हो कर अरदास करने को तथा अंत में सत श्री- अकाल बुलाने को कई अनजान पुरुषों ने कवायद करना बताया है जो उचित नहीं । कूकों के ड्रिल करने की अन्य रिपोर्ट नहीं आई ।

(4) कूकों की पहिचान सिर पर सीधी पगड़ी, गले में ऊन की माला तथा मिलते बिछुड़ते समय के नियत वाक्यों से होती है ।

(5) यह सम्प्रदाय योरुप के फ्रीमेसनों जैसी संस्था है । इस में प्रविष्ठ होते समय का शब्द यों है--

"पहिला मरण कबूलि जीवण की छडि आस।

होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पास।"

(6) मेजर परकेन्स ने 1866 में लिखा कि नामधारी सम्प्रदाय में प्रविष्ट होने के लिये झूठ, चोरी, मदिरा पीना, परस्त्री-.गमन आदि सब कुकर्मों का त्याग करना पड़ता है तथा इनके करने की कड़ी मनाही है । जो कूके इनकी अवहेलना करें उनको कूकों की पंचायत से दंड मिलता है।

(7). कूकों को नित्यप्रति प्रात:काल 3 बजे उठ कर सकेश स्नान करने की आज्ञा है । इसके पश्चात् वह भजन, बन्दगी करते तथा बाणियां पढ़ते हैं।

आनन्दपुर का होला

20 मार्च 1867

पंजाब के लाट साहब ने सन् 1866 के अन्तिम दिनों में गुरु राम सिंह जी के भैणी से बाहर जाने के प्रतिबन्धों को कुछ ढीला करके इस नये आन्दोलन का अनुमान लगाना चाहा । गुरुजी ने जनवरी 1867 माघी के मेले पर मुक्तसर जाने की आज्ञा मांगी जो न दी गई । इस पर केंद्र भैणी में (होली) का मेला बिना आज्ञा करने का निर्णय किया गया । जब सरकार को यह पता चला, तो आप के पास डिप्टी कमिश्नर द्वारा यह बात पहुंचाई गई कि आप को केवल गुरुद्वारे की यात्रा की आज्ञा दी जा सकती है । भैणी में मेला लगाने के विषय में लुधियाना के सुपरिंटेंडेंट पुलिस की सम्मति थी कि मेला लगने दिया जावे, तथा इस में कोई हस्तक्षेप न किया जावे । इंस्पेक्टर जनरल पुलिस पंजाब का विचार था कि भैणी में मेला लगाने की आज्ञा इस शर्त पर दी जावे कि मेले में पुरुषों का अधिक जमघट न हो। जब आप को यह शर्त बताई गई तो आप ने शर्तें मान कर मेला लगाने से इनकार कर दिया तथा अंग्रेज़ अफसर को स्पष्ट रूप से कह दिया कि हम मेला अवश्य लगावेंगे । इस पर आप को होले के समय गुरुद्वारा आनन्दपुर साहब जाने की स्वीकृति लाट साहब ने दे दी । साथ ही सरकार की ओर से डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल की ड्यूटी लगा दी गई कि वह स्वयं आनंदपुर पहुंच कर सारे प्रबन्ध की निगरानी रक्खे ।

नामधारी सिंहों को स्थान स्थान पर समाचार पहुंचा दिये गये कि होले के समय पर गुरु रामसिंह जी आनन्दपुर साहिब जावेंगे तथा नामधारियों का मेला और दीवान भी लगेगा । इस प्रिय सूचना को सुनते ही नामधारी सिंह भैणी की ओर आने लगे और सहस्रों की संख्या में एकत्र हो गए। सारे सूबे, सहायक सूबे, जत्थेदार, धर्मसालिये तथा नामी नामघारिये आ एकत्रित हुए। भैणी से संघ के रूप में जत्था चला। गुरु राम सिंह जी चीनी घोड़ी पर

सवार थे। सूबे तथा प्रसिद्ध नामधारी घोड़ों पर थे । आगे आगे नक्कारची नक्कारों पर दोहरी चोटें लगाते जा रहे थे । उनके पीछे पैदल निशानची (झंडा बरदार) स्वतंत्र ध्वजा लहराते चले जा रहे थे। संगतें ढोलक-छेनौं की गुंजार में शब्द पढ़ती चली जाती थीं ।

सतगुरु बिलास में इस यात्रा का हाल इस प्रकार दिया है:--

"पहिले दिन चले तो खुमानों जा कर रहे, वहां सरदारों ने प्रेम भाव से संगतों की सेवा की । सरदार प्रताप सिंह जी ने 300) ₹ थाली में भेंट रखे । गुरुजी ने रुमाल उतारा तथा पूछा कि इतने रुपये किस लिये लाये थे ? कहने लगा जी अभी तो और लाने का संकल्प था। इससे अधिक की तो मैं मदिरा पी जाता था; परन्तु अब आप की कृपा हुई है । दीवान लगा तथा कितने ही सिंहों ने अमृत पान किया। आगे भोजो माजरा में जाकर पड़ाव किया। रोपड़ में से हो कर कीर्तपुर गये, बाबा गुरुदिता जी के गुरुद्वारे की सीढ़ियों के पास बाग में डेरा किया । संगतों से सारी वाटिका भर गई ।"

डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल मि. मेंकेन्डर्यू ने 10 मार्च को लाहौर से चल कर 12 तारीख को जालंधर के कमिश्नर से गुरु राम सिंह जी के आनंदपुर आने के सम्बन्ध में विचार किया । होशियारपुर के ज़िले के सुपरिटेंडेंट पुलिस के नाम हुक्म भेजा कि पुलिस के जितने भी सिपाही ड्यूटी से लिये जा सकते हैं , तैयार रखे जावें । 13 मार्च को होशियारपुर पहुंच कर डिप्टी कमिश्नर मि. परकेन्ज के साथ आनन्दपुर साहब के प्रबंध के विषय में परामर्श किया । एक इंस्पेक्टर, एक डिप्टी इंस्पेक्टर तथा 50 सिपाही होशियारपुर पुलिस के, एक डिप्टी इंस्पेक्टर तथा 10 सिपाही जालंधर पुलिस के साथ लेकर 17 मार्च को मि. मेकेन्डर्यू आनन्दपुर पहुंच गये । सिपाही सारे के सारे चुने हुये, पुरानी नौकरी वाले, मुसलमान तथा राजपूत डोगरे थे । सरदार बहादुर अतर सिंह शेरदिल रेजिमेंट का पुराना कमांडेंट, फिरोज़पुर पुलिस का इंस्पेक्टर कुतुबशाह, अमृतसर पुलिस का इंस्पेक्टर फतेहदीनखां तथा होशियारपुर का सहायक सुपरिटेंडेंट मि. हेचल भी साथ थे । पुलिस का डेरा तख़्त केशगढ़ (आनंदपुर साहिब) से थोड़ी दूर लोगों की आंखों से ओझल स्थान पर रखा

गया, 18 तारीख को डिप्टी कमिश्नर मि. परकेन्ज भी पहुंच गया। इस प्रकार सरकार ने अपनी ओर से किसी किस्म के होने वाले बलबे, फिसाद अथवा दंगे को रोकने का पूरा प्रबंध कर लिया।

अफसरों ने जब इस सम्बन्ध में सब दलों के विचारों की जांच-पड़ताल आरम्भ की । मिं. मेकेन्डर्यू तथा डिप्टी कमिश्नर ने केसगढ़ साहिब के बड़े महन्त हरी सिंह को अपने पास बुला कर बातचीत की । उसने सुनते ही नामधारियों को तख्त साहिब के दर्शन के लिये आने का कड़ा विरोध किया । यह भी विनय की कि सरकार हस्तक्षेप करके नामधारियों को तख्त साहिब आने से रोके । इस पर अफ़सरों ने महन्त को समझाया कि जब मन्दिर की यात्रा के लिये हर संप्रदाय के हिन्दू तथा सिक्ख आ सकते हैं, तो सरकार कूकों के अन्दर आकर दर्शन करने के विषय में कोई ऐसा कारण नहीं देखती, जिस पर उन्हें रोकने के लिये हस्तक्षेप किया जावे । काफी बातचीत के पश्चात् महंत साहब का विरोध केवल एक विषय पर आ टिका । महंत साहब ने कहा कि कूके तख्त साहिब के अन्दर नग्न सिर न आवें तथा ऐसी कोई बात न करें जो यहां की धर्म मर्यादा के विपरीत हो ।

संध्या समय सरदार अतर सिंह को महंत साहब के पास यह संदेश देकर भेजा गया कि जो कुछ वह कहते हैं, उसी तरह ही होगा । यदि फिर भी कोई गड़बड़ हुई तो उत्तरदायित्व महंत साहब तथा मंदिर वालों का होगा । महंत इस बात पर जोर देता था कि दो सौ के लगभग जो निहंग अपनी छावनी में आकर ठहरे हुये हैं, वे अवश्य ही कूकों के आने पर बाधा उपस्थित करेंगे तथा दंगा होगा । इस पर अफसरों ने वहां के महंत को बुलाया । डिप्टी कमिश्नर ने उसको यह बात भली भांति बता दी कि निहंग बिल्कुल चुप रहें, नहीं तो उसके लिये तथा निहंगों के लिये अच्छी बात नहीं होगी । तदन्तर सारे प्रबंध संतोषजनक हो गये ।

सरकारी रिपोर्टों के अनुसार 19 मार्च को प्रातः गुरु राम सिंह जी सब से आगे घोड़ी पर सवार, पीछे 22 सूबे घोड़ों पर चढ़े हुये तथा 2500 के लगभग पैदल नामधारी संगत तुरन्त केशगढ़ के दर्शन हेतु आनन्द- पुर

पहुंचे। जब संघ सरकारी कैम्प के पास से गुजरने लगा तो मि. मैकेन्ड्यू ने बाबा सुद्ध सिंह सूबे के साथ, जो घोड़े पर चढ़ा हुआ समस्त समारोह का नेतृत्व कर रहा था, बातचीत की । इस पर गुरु राम सिंह जी तथा समस्त सूबे घोड़ों से उतर आये ।

डिप्टी कमिश्नर मि. परकेन्ज गुरुजी को अपने कैम्प पर ले गया तथा वहां काफी देर तक उनकी आपस में बातचीत होती रही । आपने मि. परकेन्ज को कहा कि उन का विचार गुरु गोबिन्द सिंह जी के मंदिर पर जाकर दर्शन तथा दण्डवत करने का है । यदि सरकार को इस पर आपत्ति है तो वे सारे के सारे जिस प्रकार आये हैं, उसी प्रकार बिना दर्शन किये तथा बिना माथा टेके ही वापिस चले जायेंगे । अफसरों ने आप को कहा कि मन्दिर के महन्त तथा पुजारी कूकों के सिर नग्न रखने तथा जयकार करने के विरोधी हैं । इस पर आपने उत्तर दिया कि मंदिर की सीमा में नामधारी शब्द पढ़ कर जयकार अवश्य करेंगे। यह उत्तर सुन कर अंग्रेज़ अफसरों ने कहा कि आप को तथा आपके साथियों को दर्शन करने अथवा माथा टेकने की आज्ञा नहीं दी जाती, क्योंकि पुजारियों तथा महंतों के कथनानुसार यह मर्यादा के विपरीत हैं तथा इस पर झगड़ा होने का डर है । झगड़े के लिये सरकार आप तथा आपके साथियों को ही उत्तरदायी ठहरायेगी ।

अंग्रेज़ अफसरों के इस तर्क को आपने बिल्कुल पसंद न किया तथा कड़ा रोष प्रकट किया । बहुत बातचीत होने पर गुरु राम सिंह जी यह बात माने कि यदि सरकार को तथा पुजारी महंतों को अधिक डर बैठा हुआ है, तो वह दर्शन करते समय केवल 100 साथी साथ ले आवेंगे तथा रोष के रूप में शब्द भी नहीं पढ़ेंगे । दर्शन करने के लिये दूसरे दिन का प्रातः समय निश्चित हुआ । इस पर आप तथा आप के साथ की नामधारी संगत बिना दर्शन किए तथा माथा टेके; अपनों की अनुदारता, तथा विदेशी सरकार के कष्टों, को सहन करते हुए वापिस आ गये ।

19 की संध्या को ही जालंधर का कमिश्नर मि. फोर्साइथ भी आनंदपुर सरकारी कैंप में पहुंच गया । सोढी, महन्त, पुजारी तथा बड़े बड़े

पुरुष कमिश्नर के द्वारे पर जा उपस्थित हुए । कमिश्नर के आने का यह फल हुआ कि जो दल दंगा करना चाहता था, वह सावधान हो गया।

संध्या को मि. मेकेन्डर्यू सरदार अतर सिंह को साथ लेकर गुरु राम सिंह जी के डेरे में गया । उसकी रिपोर्ट में लिखा है कि:--आप नामधारियों के मध्य में एक शामियाने के नीचे विराजमान थे । इस समय लगभग 5 हजार पुरुष उपस्थित थे और अनेकों सिक्ख चारों दिशाओं से इधर को आ रहे थे । कैम्प में कोई शोर नहीं था, सब चुपचाप थे । बहुत से पुरुष तथा स्त्रियां बढ़िया बढ़िया वस्त्र पहने हुए थे । मैंने किसी पुरुष को भी जोश , मस्ती अथवा विश्रुती की अवस्था में नहीं देखा । गुरु राम सिंह जी भी मुझे अति प्रेम तथा आदर से मिले ।" ऐसा करने से आपने शताब्दियों से चली आ रही भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का प्रमाण दिया कि यदि दुश्मन भी चल कर घर आ जावे तो "उसको घर में आया माता का जाया" समझ कर स्वागतम् कहो तथा उस का सत्कार करो।

20 मार्च सुबह 7 बजे के लगभग गुरु राम सिंह जी तथा सौ के लगभग नामधारी सिंह तुरन्त केशगढ़ साहब के दर्शनों के लिये पहुंच गए। सरकारी अफसरों ने कमिश्नर की सहमति से मंदिर के पास पुलिस की गार्दें लगाना उचित न समझा , परंतु लोगों की दृष्टि से परे कैम्पों में गार्द डयूटी के लिये तैयार रखी । फजल हुसैन, कुतुबशाह, तथा सरदार अतर सिंह को आज्ञा दी गई कि वह मंदिर के पास जा कर सब कुछ होता देखें तथा लोगों की भीड़ को शीघ्रतिशीघ्र गुज़ार दें। जब गुरु राम सिंह जी तथा उनके साथी मन्दिर के पास आये तो लगभग 50 निहंग सिंहों की एक टोली हाथों में लट्ठ लिये नामधारियों से दंगा करने के लिये आती हुई दिखाई दी । जब वह ऊंची आवाज़ लगाते, शोर मचाते कैंप के पास से गुजरने लगे तो मि. मैकेन्डर्यू ने उन्हें खड़े होने तथा डंडे और कुल्हाड़ियां छोड़ देने का आदेश दिया।

निहंग सिंहों ने जब देखा कि पुलिस के अफसर केवल तीन ही हैं, तो वह झगड़ने तथा मुकाबले में डटने लगे । पुलिस अधिकारियों के आदेश देने पर 30 तलवारों वाले पुरुषों ने कैंप से निकल कर निहंगों के इर्द-गिर्द

घेरा डाल दिया । इस पर उन्होंने तत्काल समस्त डंडे तथा कुल्हाड़ियां पुलिस के हवाले कर दी । शोर मचाते, शेखियां बधारते निहंग सिंह डेरे की ओर कूच कर गये । इस समय लगभग दो सौ निहंग मेले पर आये हुए थे । अफसरों को बाद में पता चला कि निहंगों ने अपने डेरों में गुरु राम सिंह जी के मंदिरों के दर्शन करने के सम्बन्ध में प्रस्ताव रखा था, शेष तो चुप रहे, परन्तु यह पचास का जत्था उनको रोकने के लिये बहुत व्यग्र था ।

इस मेले पर शांति रखने के लिये ज़िला होशियारपुर के डिप्टी कमिश्नर ने मियां फजल हुसैन की ड्यूटी लगाई हुई थी । उसने 20 मार्च को अपनी रिपोर्ट गुरु राम सिंह जी तथा नामधारियों के इस मेले पर आने के विषय में लिखी, उसका सार निम्नलिखित है:--.

"आज्ञानुसार मैं भी गुरु राम सिंह जी की इस सम्प्रदाय को स्थापित करने के संबंधित उद्देश्यों को जानने के लिये यतन करता रहा हूं ।"

"कूकों का तथा सिक्खों का धर्म एक ही है। दोनों ही बाबा गुरु नानक तथा गुरु गोबिन्द सिंह जी के ग्रन्थ को पढ़ते हैं , परन्तु इन दोनों में पारंपरिक बैर है । इस वर्ष सरकार ने गुरु राम सिंह जी को होला के मेले पर आने की आज्ञा दे दी । वह 8000 कूकों सहित 19 मार्च को यहां पहुंचे । निहंग, अकाली, बेदी तथा सोढ़ी गुरु रामसिंह जी के गुरुद्वारा आनंदपुर में आकर दर्शन करने तथा माथा टेकने के विरुद्ध थे । वे पहले से ही कूकों के गुरुद्वारे में आने के विरोधी थे। इस मेले के अवसर पर उनके विचार कूकों को गुरुद्वारे में घुसने की आज्ञा देने के नहीं थे। इसलिये उन्होंने कई शर्तें लगा कर दर्शन करने की आज्ञा दी । 20 मार्च को गुरु राम सिंह जी तथा उनके साथी गुरुद्वारा तख्त केशगढ़ के दर्शनों के लिये गये । गुरु राम सिंह जी ने 25 रु भेंट किये। पुजारियों ने धन की भेंट रख ली, परन्तु कड़ाह प्रसाद की प्रार्थना करने से इनकार कर दिया ।" (इस पर आप ने बाबा ब्रह्मा सिंह नामधारी सूबे को प्रार्थना करने के लिये कहा । बाबा ब्रह्मा सिंह ने प्रार्थना की तथा गुरु जी ने स्वयं ही संगतों में 'कड़ाह प्रसाद' बांट दिया। लेखक) इसके पश्चात् आप ने गुरु तेग बहादुर जी के गुरुद्वारा में जा कर 25

रुपये भेंट दी । वहां के पुजारियों ने प्रार्थना कर दी तथा कड़ाह प्रसाद स्वीकार कर लिया। इस पर आपने एक रुपया प्रार्थना करने वाले को भेंट किया ।

डेरे में आकर आप ने उसी दिन केशगढ़ के पुजारियों को गुरुमुखी में एक पत्र लिखा जिसके अंग्रेज़ी अनुवाद का अनुवाद इस प्रकार है :--

"क्या तुम मुझे गुरु जी का सिक्ख नहीं मानते तथा इसी कारण तुमने मेरे लिये अरदास नहीं की ? गुरु जी को तो अभिमान किंचित मात्र भी न था ।"

यह पत्र पढ़ कर पुजारियों ने आप को लिखित उत्तर तो कोई न भेजा, परन्तु मौखिक ही चार-पांच व्यर्थ के निजी आरोप आप के विरुद्ध लगा कर भेजे ।

इस पर आपने उत्तर दिया "यदि आप सिक्ख धर्म के नियमों का पालन करने वाले होते तो मेरी शिक्षाओं की प्रशंसा करते, परन्तु तुम गुरु ग्रंथ साहिब की आज्ञाओं के विरुद्ध मांस खाते हो, मदिरा पीते हो, व्यभिचार करते हो, लड़कियां मारते हो तथा अन्य कुकर्म करते हो, इसलिये ही कूके तुम्हें सिख नहीं समझते । कूके परमात्मा की श्लाघा करते हुये इतने मग्न हो जाते हैं कि उन्हें अपने केशों तथा पगड़ियों की सुधि नहीं रहती ।"

"गुरु रामसिंह जी के पास 40 घोड़े अपने तथा सूबों के चढ़ने के लिये थे । जब भी कूकों का समारोह होता तब सबसे आगे नक्कारची नक्कारे बजाते तथा उन के पीछे ध्वजा वाले ध्वजा उठा कर चलते। इस मेले पर लगभग 8000 कूके एकत्र हुए थे । इनमें से दो तिहाई पुरुष थे तथा एक तिहाई स्त्रियां और बच्चे ।"

"गुरु राम सिंह जी से बातचीत करने के पश्चात् मेरा यह मत है कि आप अंग्रेज़ी सरकार के विरुद्ध कोई काम नहीं करते, परंतु उनके कई सूबे बुरे पुरुष हैं जो उन के मान को घटाते हैं। निम्नलिखित पुरुषों को गुरु राम सिंह जी ने उपदेश करने तथा कूके बनाने के लिये अपने सूबे नियुक्त किया हुआ है:--बाबा सुद्ध सिंह, बाबा साहिब सिंह, बाबा काहन सिंह, बाबा जवाहर सिंह, बाबा हुकुम सिंह, बाबा हरदित्त सिंह, बाबा मलूक सिंह, बाबा

दीदार सिंह, बाबा रतन सिंह, बाबा सरमुख सिंह, बाबा जोता सिंह , बावा लक्खा सिंह, बाबा बुद्ध सिंह, बाबा नारायण सिंह, बाबा खजान सिंह, बाबा हरनाम सिंह, बाबा साधु सिंह, बाबा समुन्द्र सिंह, बाबा गोपाल सिंह, बाबा ब्रह्मा सिंह, बाबा लाभ सिंह । बाबा जोता सिंह को छोड़ कर शेष समस्त सूबे आनंदपुर साहिब के मेले पर आये हुए थे ।"

"गुरु राम सिंह सदा ही अपने घर से निर्धनों को रोटी वस्त्र देते रहते हैं तथा पवित्र उपदेश देते हैं । इसी कारण ही बहुत सी जातियों के पुरुष कूके बन गये हैं । आनन्दपुर के मेले पर दो दिनों में ही 50 नये कूके बने ।"

"प्रताप सिंह रसोलो वाला तथा उस का पुत्र देवा सिंह दोनों कूके बन गये हैं । सोढ़ी नरेंद्र सिंह तथा सोढी हीरा सिंह कुराली वाले दोनों कूके बनने के लिये तैयार हैं । मुसलमानों में से भी कई पुरुष कूके बने हैं। फजल हुसैन लिखता है कि "कूकों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है । अंबाला, लुधियाना, तथा फिरोज़पुर के ज़िलों, पटियाला, नाभा की रियासतों में इनकी बड़ी संख्या है । जालंधर, होशियारपुर, अमृतसर लाहौर, सियालकोट तथा गुरदासपुर के ज़िलों में भी लोग कूके बने हुये हैं ।"

अमृतसर की दीवाली

27 अक्टूबर 1867

सरकार ने यद्यपि प्रकट रूप में प्रतिबंध कुछ ढीले कर दिये थे, परन्तु अभी तक मेले अथवा सम्मेलन करने के लिए आज्ञा लेनी पड़ती थी । सरकारी अफसर पंजाब के ज़िलों से गुप्तचर भेज कर भैणी के समाचार मंगवाते रहते थे। आनन्दपुर से भैणी वापिस लौट आने पर गुरु राम सिंह जी ने आगामी दिवाली के अवसर पर अमृतसर के दर्शन करने तथा वहां नामधारियों का मेला लगाने का विचार किया । इस मेले का समाचार मिल जाने पर कप्तान मेनज़ी पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट ज़िला अमृतसर ने एक गुप्तचर दशहरा के दिनों में मेले के सम्बन्ध में पूरे पूरे समाचार लाने के लिये भैणी भेजा । उस ने आ कर यह बयान दिया, "दशहरे के समय पर लगभग तीन हज़ार नामधारी भैणी में एकत्रित हुए थे । होशियारपुर का सूबा काहन सिंह तथा अन्य सूबे लक्खा सिंह, सुद्ध सिंह , नत्था सिंह, साहब सिंह, जवाहर सिंह, खजान सिंह, वजीर सिंह, तथा नारायण सिंह अमृतसर वाले आये हुये थे । पटियाला वाला सरदार मंगल सिंह भी 5 सवारों के साथ आया हुआ था।" वह यह भी समाचार लाया कि अमृतसर की दीवाली पर पहुंचने के लिये पत्रिका्यें भेज दी गई हैं। आशा है कि 15000 नामधारी मेले पर आएंगे ।

सरकारी रिपोर्ट के अनुसार गुरु राम सिंह जी अपने सूबों तथा कुटुम्ब के प्राणियों सहित 25 अक्टूबर 1867 को अमृतसर पहुंचे तथा शहर से बाहर 1 मील दूर तरनतारन वाली सड़क पर एक कुएं के पास डेरा लगाया । 26 तारीख को कमिश्नर साहब और आप की भेंट हुई । आपके पहुंचने से पहले ही लगभग 800 नामधारी डेरे में थे। 26 तथा 27 तारीख वाले दिनों में कैंप में लगभग 1200 पुरुष थे । इनके अतिरिक्त तीन साढ़े तीन सौ के लगभग नामधारी अपने अपने प्रदेश तथा गांवों के बुंगो (प्रत्येक

ऐतिहासिक सिक्ख गुरुद्वारे में गांवों तथा प्रदेशों के पृथक मकान बने होते हैं, जिनमें यात्री मेले तथा उत्सवों के दिन ठहरते हैं) में ठहरे हुए थे । इंस्पेक्टर नारायण सिंह की यह ड्यूटी लगाई गई कि जहां भी गुरु रामसिंह जावें उनके साथ साथ रहे ! 27 तारीख को आप अपने 450 साथियों को ले कर दरबार साहिब के दर्शनों तथा माथा टेकने के लिये आये । परिक्रमा में साथियों की संख्या दो तथा तीन सौ के लगभग हो गई ।

हरमंदिर साहिब में भेंट चढ़ाने तथा माथा टेकने पर आप को एक दुशाला तथा एक सिरोपा मिला। बाबा अटल साहिब के गुरुद्वारा से सुनहरी पल्लों वाला एक दुपट्टा तथा एक पगड़ी सिरोपा मिला । आप ने अकाल बुन्गा में 2 रुपये भेंट चढ़ाए; परन्तु अकाल बुंगा के पुजारियों ने आप की प्रार्थना करने से इनकार कर दिया । इस पर आप ने दर्शनीय ड्योढ़ी तथा अकाल बुंगे के मध्य स्थान खड़े हो कर स्वयं ही प्रार्थना की और कड़ाह प्रसाद बांट दिया जिसे आप डेरे से तैयार करवा कर साथ ले गये थे । 28 तारीख को आप फिर दरबार साहब में नामधारी संगतों के ठरहने वाले बुगों में गये । राजासांसी वाले सरदार शमशेर सिंह तथा ठाकुर सिंह दोनों भाइयों ने आकर दर्शन किये तथा भेंट रखी ।

जिस दिन से गुरुजी अमृतसर पहुंचे थे, आप के दर्शनों के लिये शहर के लोग घडयालियों वाले तालाब पर आने लगे थे । शहर के बहुत से सम्माननीय हिन्दू, सिख एवं मुसलमान लोगों ने डेरे में पहुंच कर आप के दर्शन किये। दर्शन करने वालों ने 700 रुपये नकद तथा 12 थान बढ़िया कपड़े के भेंट स्वरूप अर्पण किये । अमृतसर के प्रसिद्ध पादरी मि. स्टोर्स तथा पुलिस अफ्तर मि. क्रिष्टी ने भी डेरे में आ कर गुरुजी से मुलाकातें की ।

इस समय पर बहुत से लोगों ने अमृत पान किया तथा नामधारी सिंहों वाली दीक्षा प्राप्त की । कई लोगों का विचार है कि दो हज़ार की संख्या में नामधारी सिक्ख इस अवसर पर बने ।

इस साल की सरकारी रिपोर्ट में लिखा है कि, "वर्ष डेढ़ वर्ष के समय में अम्बाला ज़िला के 15 गांवों के समस्त लोग कूके बन गये हैं तथा

उनकी संख्या 4000 के लगभग हैं । वह सब छोटी जातियों जाट, लुहार बढ़ई तथा रामदासियों में से हैं । सुद्ध सिंह तथा काहन सिंह सूबे इस ज़िले में आते जाते रहते हैं। इस क्षेत्र में कूकों के छोटे-छोटे सम्मेलन होते रहते हैं। पुलिस में भी कूके हैं ।

जनवरी 1867 में अमृतसर के कप्तान मिस्टर वाल को रिपोर्ट मिली, कि राजासांसी वाला सरदार बख्शीश सिंह संन्धावालिया भी कूका बन गया है। परन्तु पड़ताल करने से यह बात झूठ सिद्ध हुई ।

इस वर्ष के फरवरी में कैप्टन बेली ने अपने एक विश्वस्त सूत्र के आधार पर सरकार को सूचना दी, कि काबुल के एक प्रसिद्ध आदमी ने अपने दोनों पुत्र भैणी साहिब में कूका मत के नियम जानने के लिये भेजे है । इस साल की रिपोर्ट में सरहद की एक पलटन में देशी अफसर (सूबेदार अथवा सूबेदार मेजर) का मत नामधारियों के विषय में दर्ज है । रिपोर्ट में लिखा है कि 'नामधारी सिख धर्म को वास्तविक पवित्र रूप में प्रकट कर के उस का प्रचार करना चाहते हैं। वह हिन्दुओं वाली रीतियों, विवाह के मुहूर्त देखने आदि का जो सिक्खों में पुनः प्रविष्ट हो गई है, परित्याग करवाते हैं । उन का सम्प्रदाय निपट अकाल सेवी है । परमात्मा को एक ओंकार "आपे आप निरंजन सोहै," अकृत्रिम तथा अयोनि मानते हैं। परमात्मा के बार बार योनि धार कर अवतार लेने पर वे विश्वास नहीं रखते, उन की शिष्टाचार प्रणाली अत्यन्त कड़ी है । झूठ, चोरी तथा व्यभिचार को वे महापाप समझते हैं ।"

इस बर्ष के आरम्भ में ही नामधारियों के सम्मेलन करने, मेले लगाने तथा दीवान सजाने के सम्बन्ध में लगाये हुए प्रतिबन्ध ढीले कर दिये गये थे । साथ के साथ ही यह आदेश भी प्रसारित कर दिये गये थे कि नामधारियों के सम्मेलनों पर दृष्टि रखी जावे । यदि यह प्रतीत हो कि ऐसे सम्मेलनों के अवसर पर शांति भंग होने का डर है तो निःसंकोच ऐसे सम्मेलन बन्द कर दिये जायें ।

फरवरी के महीने में माछीवाड़ा के साथ वाले गांव में एक सम्मेलन हुआ, जिसमें लगभग 80 कूके सम्मिलित हुए थे । गुरु राम सिंह जी भी

वहां गए तथा उन्होंने यह सम्मेलन करने के लिये सरकार से कोई आज्ञा भी न ली। दस दिन बाद ही गांव भमदी के मेघ सिंह के घर कूके इकट्ठा हुए। मार्च के महीने में कूकों का एक सम्मेलन कोटलांचक में हुआ, जहां डेढ़ सौ के लगभग नये कूके बने । सियालकोट के डिप्टी कमिश्नर मेजर मरसर ने हुक्म दिया कि बिना सूचना दिये तथा आज्ञा प्राप्त- किये, कूके कोई सम्मेलन न करें। सितम्बर में कूकों ने बिना आज्ञा किला शोभा सिंह में सम्मेलन किया । इस ज़िले का सूबा बाबा जमीयत सिंह तथा लुधियाना के ज़िला के अन्य सात कूके भी यहां आए हुए थे !

अमृतसर के जिले के गांवों में ब्रहमा सिंह तथा जोता सिंह सूबों की संरक्षण में बहुत से छोटे मोटे सम्मेलन होते रहे । इस पर इस ज़िला के डिप्टी कमिश्नर ने आदेश जारी किया कि जब तक सम्मेलन करने के लिए विशेष प्रार्थना पत्र दे कर आज्ञा प्राप्त न कर ली जावे कूके कोई सम्मेलन नहीं कर सकते ।

सन् 1857 से ही गुरु राम सिंह जी ने नामधारियों के संगठन का काम आरम्भ कर दिया था। इस संगठन कार्य के मूल अधार गांव ही बनाये गये । आठ अथवा 9 साल के अल्प समय में ही इस सम्प्रदाय का यह रूप बन गया था । हर गांव के नामधारियों तथा अन्य संगियों की एक संगति थी, वह आपस में एक ही कुटुम्ब के पुरुषों की भांति मिल कर रहते । दिन के काम काज से अवकाश मिलते समय रात्रि में ढोलक छेनों से शब्द पढ़ते तथा भजन बन्दगी करते । संगत के एकत्रित होने वाले स्थान का नाम धर्मशाला रखा गया । संगतों के नेता ग्रन्थी थे जो धर्मशाला में बालक-बालिकाओं को गुरुमुखी अक्षरों में विद्या पढ़ाते ।

गुरबाणी कण्ठस्थ कराते तथा गुरु ग्रन्थ साहिब का पाठ करके मेला अथवा दीवान लगा कर भोग डालते । इन से ऊपर के पदाधिकारी जत्थेदार थे । कई जत्थेदार एक छोटे सूबे के आधीन होते थे । प्रदेश के दल का नेता सूबा होता था । इस दल का प्रबन्ध करने के लिये केन्द्रीय स्थान भैणी में 5 सूबों की बड़ी पंचायत थी, जिन के अध्यक्ष बाबा जवाहर सिंह जी गांव भाई

की डरौली तहसील मोगा ज़िला फिरोज़पुर वाले थे । इस समस्त संगठन के शिरोमणि नेता गुरु राम सिंह जी थे ।

केन्द्रीय पंचायत के सदस्य ये सज्जन थेः--

(1) बाबा जवाहर सिंह जी गांव डरौली ज़िला फिरोज़पुर (2) बाबा काहन सिंह जी गांव चक कलां रियासत मलेरकोटला (3) बाबा सुद्ध सिंह जी गांव मंढोर ज़िला अम्बाला (4) बाबा साहिब सिंह गांव बनवालीपुर ज़िला अमृतसर (5) बाबा लक्खा सिंह गांव मलौद ज़िला लुधियाना। दूसरे सूबों के नाम यह थे, बाबा सरमुख सिंह गांव लल्लूवाल रियासत पटियाला , बाबा गोपाल सिंह सुपुत्र साहब सिंह गांव रखड़ा मनढोर रियासत पटियाला बाबा हुक्म सिंह सुपुत्र केहर सिंह गांव पित्थों रियासत नाभा, रतन सिंह अथवा ज्ञान सिंह पुत्र राम किशन गांव मंडी रियासत पटियाला, बाबा खुशहाल सिंह सुपुत्र कर्म सिंह गांव थराज ज़िला हिसार, बाबा ब्रहमा सिंह सुपुत्र गुलाब सिंह गांव दरियापुर ज़िला करनाल[6], बाबा पहाड़ा सिंह गांव मलौद ज़िला लुधियाना। बाबा नारायण सिंह सुपुत्र संता सिंह गांव खटड़े ज़िला लुधियाना । बाबा मान सिंह सुपुत्र मक्खन सिंह गांव सैदो ज़िला फिरोज़पुर, बाबा मलूक सिंह सिंह सुपुत्र मुक्खा सिंह गांव फूलेवाल, बाबा समुन्द सिंह सुपुत्र बसावा सिंह गांव खोटे ज़िला फिरोज़पुर, बाबा खजान सिंह सुपुत्र मणी सिंह गाँव लधाना ज़िला जालंधर, बाबा रुड़ सिंह सुपुत्र दयाल सिंह गांव बन्गालीपुर ज़िला अमृतसर, बाबा भगवान सिंह गांव फतेहवाल ज़िला अमृतसर, बाबा जमीयत सिंह सुपुत्र चन्दा सिंह गांव गिलल ज़िला सियालकोट, बाबा राजा सिंह गांव तरांडी ज़िला सियालकोट, बाबा जोता सिंह सुपुत्र रतन सिंह गांव ढपई ज़िला सियालकोट ।

सूबों को पृथक् पृथक् प्रदेश संगठन तथा प्रचार के लिये सौंपे हुए थे ।एक प्रदेश के सूबे का दूसरे प्रदेश के सूबे से डाक प्रबंध तथा सम्बन्ध स्थापित किया हुआ था। यह सम्बन्ध इस प्रकार पक्का था कि केन्द्र के

---

[6] सूबा ब्रह्मा सिंह का गांव दरियापुर के पास, जिला मानसा (पंजाब) है ।

समाचार, हुक्म तथा हिंदायतें आठ पहर के अन्दर अन्दर समस्त पंजाब में स्थान स्थान पर पहुंच जाती थीं ।

पारस्परिक झगड़े निबटाने के लिये कूकों के अपने ही न्यायालय अथवा पंचायतें थीं। गांवों की पंचायतों के ऊपर सूबे न्यायकारी थे । ज्ञान सिंह अथवा रतन सिंह मंडी वाले सतलुज दरिया के पूर्वी प्रदेश के अदालती थे। इसी प्रकार अन्य सूबे भी न्याय करते थे । झगड़ों के निपटारे भारत में शताब्दियों से पैतृक रूप में चले आ रहे जन न्याय तथा भाईचारे की नीतियों के अनुसार किये जाते थे । नामधारी शेष लोगों को भी यही प्रेरणा देते कि वह भी पारस्परिक झगड़े सरकारी न्यायालयों की अपेक्षा अपनी पंचायतों में निपटाएं । सरकारी न्यायालयों में धर्म तथा परमात्मा की शपथ लेकर झूठी साक्षी करने की अपेक्षा अपने ही भाइयों का न्याय स्वीकार करें ।

नामधारी सिंह बनने का आन्दोलन बड़ी तीव्रता से चला । दस बारह वर्षों में ही सारे पंजाब में इनकी संख्या तीन चार लाख पर पहुंच गई । पेशावर तथा हरीपुर हजारा के प्रदेश में बेदी कन्हैया सिंह तथा बाबा जगत सिंह डेरा बाबा नानक वाले नामधारी सिक्खी का प्रचार करते थे । इन स्थानों की धर्मशालाओं में रह कर गुरु ग्रन्थ साहब का पाठ करते । हरीपुर का चेत सिंह नामक नामधारी एक धनवान् पुरुष था जिसने एक धर्मशाला भी बनवाई थी ।

रावलपिडी में कूका धर्मशाला थी, जहां भाई काहन सिंह नित्य-प्रति प्रातः तथा संध्या समय धर्मशाला में गुरु ग्रंथ साहिब की वाणी पढ़ते थे । ज़िला गुजरांवाला में बाबा जमीयत सिंह गांव वर्ण, महंत बुलाका सिंह तथा महंत गुलाब सिंह बबर प्रचार करते थे। गुरु राम सिंह जी ने स्वयं सरदार हरी सिंह नलुआ के जमाई सरदार लहना सिंह घरजाखिया तथा पुत्र मोती सिंह को जो नेपाल राज्य की फौजों में एडजुटेंट था, नामधारी बनाया । महाराजा रणजीत सिंह के समय में पेशावर सूबा के गवर्नर सरदार मीहां सिंह का भतीजा सरदार तारा सिंह गांव मिश्री म्यानि वाला, सरदार बुद्ध सिंह का पुत्र सरदार मान सिंह, गांव मानावाला का रईस चूहड़काना के जेलदार

अनोख सिंह तथा नम्बरदार अमरीक सिंह , सहारन का नम्बरदार जवाहर सिंह, बैंकेचीमे का नम्बरदार मीहां सिंह , मनहेस का नम्बरदार राजा सिंह तथा हिन्दूचक का नम्बरदार अतर सिंह सब नामधारी बन गये थे । सियालकोट के ज़िला में बाबा जमीयत सिंह गांव गिल्ल थाना किला शोभा सिंह तथा सूबा राजा सिंह तरांडी वाला और मंगल सिंह आदि के प्रचार से हमजागोस, उरगू चक, अलो मुहार, बासरा, सिखाना तथा चक रामदास आदि बड़े बड़े गांव तथा गोत्रों के प्रमुख पुरुष नामधारियों में प्रविष्ट हो गये थे। गुरुद्वारा "बाबे की बेर" का महन्त प्रेमसिंह भी नामधारी बन गया था ।

गुरु नानक देव जी के समकालीन प्रसिद्ध बाबा पुराना के वंशज गुरुचरण सिंह जो कि पश्तो तथा फ़ारसी भली भांति जानते थे, नामधारी बन चुके थे।

अपने पूर्वजों की भांति बाबा गुरचरण सिंह जी बाबा पुराना जी की काबुल (अफगानिस्तान) नगर में स्थापित की हुई धर्मशालाओं में जाते और अरोड़ों और सुनार जातियों के लोगों में अपने बुजुर्गों की फैलाई हुई सिक्खी की देखभाल करते थे । बाबा गुरचरण सिंह जी गुरु राम सिंह जी के साथ महाराजा रणजीत सिंह की सेना में नौकर थे । जब गुरु राम सिंह जी ने सिआलकोट का भ्रमण किया तो इन्होंने उनका बड़ा स्वागत तथा भण्डारा किया। बाबा पुराना के वंशज और जाट अन्य गोत्री जाट सब कूके बन गये थे।

मिन्टगुमरी के प्रदेश में बाबा महल सिंह गांव जेठपुर थाना हुजरेवाला ने मुलतान के प्रदेश तक के लोगों को नामधारी बनाया । ज़िला लाहौर के क्षेत्र में सूबा श्याम सिंह गांव लाखणा, बाबा केसर सिंह गांव राजाजंग बाबा हरसा सिंह गांव मांगा, बाबा हरा सिंह गांव कंगनपुर तथा बाबा फतेह सिंह गांव वलटोहा, महताब सिंह आल्हा नम्बरदार गांव शेखवां, बूटा सिंह नम्बरदार गांव मांगा तथा जीत सिंह , नायब सूबा बघेल सिंह गांव नारली पक्के नामधारी थे तथा लोगों को नामधारी बना रहे थे । शहर लाहौर में बाबा देवा सिंह, तरांडी वाला, सूबा राजा सिंह का जमाई इन्द्र सिंह मशीना

वाला, गांव पंजग्राइयां वाला हरनाम सिंह महंत , मक्खन- सिंह ग्रंथि नामधारियों के नेता थे ।

लाहौर का रहने वाला प्रसिद्ध नामधारी दीवान बूटा सिंह था । बड़े बड़े अंग्रेज़ अफसर इनकी मान प्रतिष्ठा से भय खाते थे । दीवान बूटा सिंह के पिता का नाम गुरुदयाल सिंह था तथा जाति कलाल थी । बूटा सिंह महाराजा दलीप सिंह की माता महारानी जिंदा का नौकर था । यह महारानी के समस्त काम काजों की देखभाल करने वाला दीवान तथा बड़ा अहलकार था । मुल्तान की लड़ाई के समय में उसको अंग्रेज़ी सरकार के विरोधियों से गठजोड़ करने के अपराध में पकड़ कर निगरानी में रख लिया गया । अंग्रेज़ों के पंजाब को अपने राज्य में मिला लेने के पश्चात् दीवान बूटा सिंह पर विद्रोह का मुकदमा चलाया गया । उसको जनता को भड़काने के जुर्म में दोषी सिद्ध होने पर सात साल की कैद का हुक्म हुआ । दीवान बूटा सिंह ने इलाहाबाद के किले में सात साल की कैद काटी । पूरी कैद काटने पर वापिस आ कर अपने घर लाहौर में रहने लगा । यह धनवान् पुरुष था , सम्पत्ति काफी थी। मान- प्रतिष्ठा वाले वंश का मनुष्य था । कई व्यक्तियों को घर से रोटी दे सकता था। सन् 1866 में इन्होंने अपना छापाखाना लगा कर कानूनी मासिक- पत्र "अनवर उल शम्स' निकाला । इस छापेखाने की एक शाखा पेशावर में थी तथा दूसरी अजमेर में । अजमेर वाले छापेखाने में राजपूताना गवर्नमेंट गजट छपता था । पेशावर वाला छापाखाना तो कुछ वर्ष बाद बंद हो गया था, परन्तु अजमेर वाली शाखा सन् 1881 में भी चल रही थी। पंजाब के नामी नामधारी सूबे लाहौर आ कर दीवान बूटा सिंह के पास ही ठहरते थे । सिक्खों की धार्मिक पुस्तक गुरु ग्रंथ साहिब जी को छपवाने का प्रथम प्रबंध गुरु राम सिंह जी ने दीवान जी के द्वारा ही कराया था। कई बड़े-बड़े अंग्रेज़ सरकारी अफसर दीवान बूटा सिंह की मान-प्रतिष्ठा से इतना डरते थे कि वे कूकों के सम्बन्ध में कोई वक्तव्य अथवा रिपोर्ट लाहौर के छापाखानों में छपने के लिये नहीं देना चाहते थे। उन का विचार था कि उस वक्तव्य की नकल प्रकाशित होने से पहिले ही दीवान साहब के द्वारा गुर राम सिंह

जी तक जा पहुंचेगी । लाहौर दरबार के पुराने कागज़ातों के अनुसार दीवान बूटा सिंह उस षड्यंत्र में हाथ रखता था, जिस का निशाना मंत्री लाल सिंह तथा अंग्रेज़ी रेजिडेंट का वध करना था। यह षड्यंत्र वजीर लाल सिंह ने स्वयं पकड़वाया था । परिणाम स्वरूप महारानी जिन्दा को पंजाब से निकाल दिया गया था तथा दीवान बूटा सिंह को कैद हुई थी । पुराने कागज़ों में इस षड्यंत्र का नाम प्रेमा षड्यंत्र करके लिखा है ।

गुरदासपुर के ज़िला में सूबा करतार सिंह जी बेदी डेरा बाबा नानक तथा नायब सूबा जेलदार हरी सिंह जी सिंहपुरिये के प्रयत्नों से डेरा बाबा नानक के बहुत से बेदी साहबजादे अमर सिंह, प्रताप सिंह, जागीर सिंह तथा गुरदास सिंह, नामधारी बन गये थे। जेलदार हरी सिंह के दोनों पुत्र नारायण सिंह तथा श्याम सिंह भी कूके थे। जेलदार हरी सिंह सिंहपुरिया अत्यंत सम्मान प्रभाव वाला पुरुष था। इसके नामधारी बनने से आसपास के गांव ठेठरके, पक्खोके आदि में बहुत लोग कूके बन गये थे। श्री गोबिन्दपुर में भाई गोबिन्दराम पक्के कूके थे तथा मद्रोगोल, चोरांवाली, पनुआं, खोखर के गांवों में लोग नामधारी बन गये थे ।

अमृतसर के ज़िला में नैना सिंह गांव वरियांह थाना सरहाली, भगवान सिंह, फत्तेवाल, काहन सिंह ठठी, थाना सरहाली, खड्ग सिंह गांव कक्कड़ गिल्ल थाना लोपोके, बाबा महताब सिंह नम्बरदार गांव उभोके के प्रचार को सुनकर तथा शिष्टाचार को देख कर आस-पास के गांवों के बहुत से लोग नामधारी बन गये थे।

ज़िला होशियारपुर में गांव पुरहीरां का जागीरदार सरदार मान सिंह एक प्रसिद्ध नामधारी था । उसके पांचों भाई उस से बैर रखते थे। मान सिंह का चचेरा भाई हमीर सिंह उस के तथा नामधारियों के विरुद्ध सरकार को सूचनायें देता रहता था । मान सिंह के घर गुरु ग्रन्थ साहब के भोग पड़ते तथा कूकों के मेले लगते रहते थे । कालूवाहर, थाना हरियाणा का जागीरदार चंदा सिंह भी प्रसिद्ध कूकों में से था। इस के घर में भी भोग पड़ते तथा मेले लगते ।

जालंधर के ज़िला में बाबा काहन सिंह दुर्गापुर, थाना राहों में खजान सिंह गांव लधयाना, फतेह सिंह गांव मुठड्डाकलां में मंय्या सिंह, गांव जंड्याली में महताब सिंह प्रसिद्ध नामधारी लोगों को कूके बनाते थे ।

ज़िला फिरोज़पुर की तहसील जीरा में गांव गादड़ीवाले के नत्था सिंह; प्रदेश बाहिया में गांव पूहला के खड्ग सिंह अथवा जोड़ा जिन की सम्पत्ति में एक गांव भटिंडा के पास खड़ग सिंह वाला भी था, हरनाम सिंह गांव नथाना, ध्यान सिंह गांव छतयाना थाना कोट भाई, शोभा सिंह गांव तामकोट थाना मुक्तसर, काहन सिंह गांव बाजा प्रदेश फरीदकोट तथा देवासिंह गांव धूर कोट थाना निहाल सिंह वाला, नामधारी संगतों के मुखिया थे । चुगांवा थाना मोगा के सोढी फतेह सिंह जी जागीरदार तथा उन के भाई हीरा सिंह चोटी 'के नामधारियों में से थे। गांव धूरकोट थाना निहाल सिंह वाला के जोगा सिंह तथा भगवान सिंह देर से नामधारी चले आ रहे थे । बाबा जवाहर सिंह गांव बिलासपुर थाना निहाल सिंह वाला तथा नारायण सिंह सुपुत्र देवा सिंह दबड़ीखाने वाला जो गांव रोडा में जहां उनकी बुआ व्याही हुई थी, वहां के महंत नारायण सिंह के पास रहता था, यह सब कूके थे। समुन्द सिंह गांव खोटे थाना निहाल सिंह वाला, सूबा मानसिंह, नायब सूबा गुरबक्श सिंह गांव सैदोके थाना निहाल सिंह वाला बहुत धनवान् नामधारी थे। फीरोज़पुर शहर में मिस्त्री निहाल सिंह एक सम्मान, प्रभाव तथा उच्च शिष्टाचार वाला नामधारी था । यह गांव महतपुर थाना नकोदर ज़िला जालंधर का रहने वाला था । फिरोज़पुर का किला बनने के समय से उसने अपना निवास फिरोज़पुर में कर लिया था । ठेकेदारी तथा अनाज का व्यापार करता था। कूके उसका बहुत सत्कार करते थे । आते जाते कूके इसके घर ही निवास करते तथा भोजन करते।

ज़िला लुधियाना में नामधारियों की संख्या अधिक थी । गांव खटटड़ा थाना डेहलों के सूबा अतर सिंह, दया सिंह, मस्ताना वीर सिंह, बाबा रामसिंह, समुदं सिंह, सूबा नारायण सिंह सुपुत्र संगति सिंह, नारायण सिंह सुपुत्र लहना सिंह, महा सिंह सुपुत्र चढ़त सिंह राज, गुर्जर सिंह सुपुत्र ध्याना

राज कूकों के पुरातन कुटुम्ब समझे जाते थे । रायपुर के बाबा दरबारा सिंह नम्बरदार, जैमल सिंह नम्बरदार, धौंकल सिंह, बूटा सिंह छींबा जो हर कारे का काम करता था, काला सिंह मस्ताना, बेला सिंह छींबा तथा अन्य प्रसिद्ध प्रसिद्ध व्यक्ति सब कूके थे। गांव लोहगढ़ कट्टर नामधारियों का गढ़ था, तथा इस गांव का नाम छोटी भैणी पड़ गया था । नम्बरदार काहन सिंह पुत्र अलबेल सिंह को सरकार अत्यंत भयानक आदमी समझती थी। सरदार सिंह सुपुत्र लाल सिंह । महताब सिंह पुत्र विसावा सिंह पुलिस से आंख मिचौनी खेलते रहते तथा खुल्लम खुल्ला अंग्रेज़ों के विरुद्ध प्रचार करते रहते थे । पंजाब सिंह पुत्र वसावा सिंह फिरंगियों को निकालने के स्वप्न लेता । साहिब सिंह पुत्र केशर सिंह, दीप सिंह पुत्र जवाहर सिंह, सावन सिंह पुत्र कुमा सिंह, जीवन सिंह . पुत्र गर्भ सिंह सब कूके थे । इन में से प्रत्येक अंग्रेज़ों को निकालने के लिए अपना बलिदान देने के लिये तैयार रहता । गुजरवाल के जमादार समुंद सिंह पुत्र भूप सिंह, सूबा बुद्ध सिंह पुत्र मोहर सिंह, काला सिंह पुत्र बुद्ध सिंह, चैन सिंह पुत्र धन्ना सिंह , तथा चिड़ीमारों की पत्ती का नम्बरदार सब कट्टर कूके थे। गांव कलाहड़ के कृपाल सिंह , बुद्ध सिंह , खजान सिंह, थानेदार विशाखा सिंह पुत्र दशोंदा सिंह, नम्बरदार लाल सिंह, बेला सिंह गांव खेड़ी के काला सिंह पुत्र संता सिंह , गांव रुड़का के वीर सिंह मस्ताना, काहन सिंह मस्ताना, गांव खेड़ा के झाबा सिंह, महिमा सिंह वाला का चढ़त सिंह नाई, गांव लताला के ईश्वर सिंह पुत्र गर्भा सिंह, लाल सिंह पुत्र गुरदयाल सिंह, भाग सिंह पुत्र गरीबू कूके थे, और फिरंगी राज्य के कट्टर बैरियों में से थे।

थाना साहनेवाल के गांव राइयां के बहादुर सिंह पुत्र मान सिंह, मंगल सिंह पुत्र मोहर सिंह , कोट गंगू राय का दया सिंह पुत्र हिम्मत सिंह , छोटी कटानी का ज्वाला सिंह पुत्र साहिबा, भैरोंमुन्ने का भंगा सिंह पुत्र टहल सिंह सभी पक्के नामधारी थे । थाना रायकोट गांव जोहल के राम सिंह पुत्र महताब सिंह सुनार तथा नारायण सिंह पुत्र खड़ग सिंह गांव बुर्ज हरी सिंह का मस्सा सिंह पुत्र मोहरु, ताजपुर का शोभा सिंह पुत्र बूटा सिंह नाई,

अचरवाल का देवा सिंह पुत्र उत्तम सिंह, छोटे बोपाराय का नारायण- सिंह पुत्र जीवन सिंह बढ़ई, बुर्ज हरी सिंह के रामदास अथवा मोहर सिंह तथा बघेल सिंह पुत्र हिम्मत सिंह, बस्सीआं का साहिब सिंह पुत्र महा सिंह , पक्खोवाल का प्रेम सिंह, अचरवाल का उत्तम सिंह पुत्र काहन सिंह, छोटे बोपाराय के किशन सिंह पुत्र शेर सिंह छींबा तथा श्याम सिंह पुत्र जीवन सिंह बढ़ई, हठूर का भूप सिंह पुत्र आलम हरावल दस्ता के कूके थे। थाना माछीबाड़ा के गांव तक्खरां के खज़ान सिंह पुत्र टेकु , जवाहर सिंह पुत्र गुरदयाल, माछीवाड़ा गांव का नंबरदार अतर सिंह तथा उस का छोटा भाई रतन सिंह, गांव बिजलीपुर का नारायण सिंह पुत्र भगवान सिंह , गहलेवाल का साहब सिंह पुत्र सैदा सिंह लोहार, बड़ा ककराला का दयाल सिंह पुत्र. देवा सिंह सब ऐसे कूके थे जो अंग्रेज़ों के विरुद्ध हर समय कमानें कसे रहते थे । थाना खन्ना के बड़ी बगली गांव के नंबरदार साहिब सिंह पुत्र बहादुर, देवा सिंह पुत्र राय सिंह हरकारा, सुद्ध सिंह , बुद्ध सिंह , राम सिंह , मस्तान सिंह , गांव उटालां के सुक्खा सिंह नाई ज्ञानी हरनाम सिंह पुत्र रण सिंह बढ़ई, गांव दयालपुर के बेला सिंह, बुद्ध सिंह, बाल सिंह , पंजाब सिंह, महताब सिंह चारों सगे भाई, गांव दीवा के लहना सिंह नम्बरदार समशेर सिंह तथा भाग सिंह, भमदी का मेघ सिंह पुत्र वीर सिंह, दोदपुर का सुन्दर सिंह पुत्र मीहां सिंह गांव बूथगढ़ का लाल सिंह पुत्र बहाली, खन्ना के खड़ग सिंह झीवर, वसावा सिंह जाट, दीवान सिंह झींवर, अतर सिंह जाट, जयमल सिंह दुकानदार, कोटला अजनेर का जागीरदार विष्णु सिंह पुत्र भूप सिंह, फैज गढ़ का लक्खा सिंह बढ़ई गाँव शहाबपुरा का बुद्ध सिंह, गांव सेह के मस्तान सिंह, संगत सिंह, दया सिंह बौना तथा, बधावा सिंह, विष्णु सिंह बढ़ई, गांव हरगना का मान सिंह गांव गंडवां का वजीर सिंह तथा जवाहर सिंह सब प्रथमपाल के कूके थे, जो विदेशी शासकों को हिन्दुस्तान से निकालना धर्म समझते थे। गांव राएसर के उत्तम सिंह , भगवान सिंह , दीदार सिंह तथा काबल सिंह, गांव चीमता के मलूक सिंह तथा प्रताप सिंह, गांव भोतना के चंचल सिंह तथा नत्था सिंह गांव वक्तगढ़ के निधान सिंह

कर्म सिंह तथा गांव शैहना के दसोंदा सिंह बढ़ई सरकार अंग्रेज़ी की पुलिस के कागज़ों में खतरनाक कूके ये। थाना दाखा के गांव दाखा का अतर सिंह जाट तथा थाना जगरांवा के गांव कमालपुरा के गुलाब सिंह, खजान सिंह जाट, गांव छज्जाबाल के शोभा सिंह बढ़ई तथा समुन्द सिंह जाट पक्के नामधारी थे ।

बड़े-बड़े गावों डलला, मल्ला, रसूलपुर, काउंके आदि में कई कई पत्तियां (गांव का एक हिस्सा) कूकों की थीं ।

ज़िला अम्बाला के गांव मन्डौर, के सूबा बाबा सुद्ध सिंह, गांव सढौरा के नायब सुबा हीरा सिंह नाटा तथा सूबा हीरा सिंह लम्बा, कोट कछवा का अतर सिंह जागीरदार जो अवध पुलिस में इंस्पेक्टर था और अब पेन्शन ले रहा था, चुन्नी कलां का हीरा सिंह , झाड़मड़ी का दल सिंह नम्बरदार, बालियां का दया सिंह तथा शहर अम्बाला का भाई मस्तान सिंह ठठेरा नामधारी थे। ज़िला सिरसा अथवा हिसार के गांव थराज थाना रोड़ी के प्रसिद्ध जमींदार बाबा खुशहाल सिंह जी नामधारी थे। यह अत्यन्त दयावान तथा पुन्यदान करने वाले पुरुष थे । इन का पटियाला तथा नाभा की रियासतों के नामधारियों से घनिष्ठ सम्बन्ध था ।

जैसे जैसे लोग अमृत पान कर नामधारी बनते गये, वे पुराने भ्रमों को छोड़ कर गुरुवाणी के पाठ तथा गुरु सिक्खी के रीति-रिवाज की ओर झुकते चले गये । कई गांवों में नामधारियों ने अपने पूर्वजों जठेरों की समाधें तथा मढ़ियां बिल्कुल ही तोड़ दीं । माताराानियों अथवा बीबडियों की मढ़िया भी साफ कर दीं । ब्राहमणों की सहस्रों बर्षों की मानसिक तथा हार्दिक दासता के नीचे दबी हुई ग्रामीण जनता गुरुबाणी की शिक्षा लेकर उठने लगी ।

नामधारी सिख बन कर लोगों ने अपने अपने गांवों में से सखी सरवर, सुल्तान के पीरखाने तथा मुसलमान फकीरों की खानकाहें खत्म करनी आरम्भ कर दीं । "ढैंदी दीहंदी दीहनी ऐं मजार, ढैंदी दीहंदी ऐं" (टूटता नजर आ रहा है, मजार टूटता नजर आ रहा है) उस समय कूकों के गीतों की अन्तिम तुक थी । हिठाड़ सतलुज के प्रदेशों में मुगल राज्य के समय में

मुसलमान सूबेदारों तथा शासकों ने काली पोश और मदारी फकीर, दूतों के रूप में नियुक्त किये हुए थे । जाटों के बड़े गांवों में मुसलमान सक्के हलाल किये हुये बकरों की खालों की बनी हुई मश्कों के साथ घरों में जा कर घड़ों में पीने वाला पानी भरते थे तथा चमड़े के बोकों से कुओं में से इस पानी को निकालते । कालीपोश सवेरे आ कर ही सारे गांव की गलियों में मुसलमानी कलाम पढ़ते तथा मदारी भिक्षुक हर शाम को हर घर जाकर "यारबफज़ल" कह कर रोटियां मांगते । साथ के साथ ही यह लोग हिन्दू प्रजा के समाचार भी मुसलमान शासकों तक पहुंचाया करते थे। नामधारी बन कर लोगों ने कालीपोशों तथा भिक्षु मुसलमान फकीरों का गांवों में आना बंद कर दिया । मुसलमान सक्कों को घरों में आकर पानी भरने से हटा कर लोहे के डोल का पानी पीना आरम्भ कर दिया। इस से मुसलमान फकीरों, भिक्षुओं तथा बेकारों का यह टोला भी नामधारियों के विरुद्ध हो गया। ब्राह्मणों तथा नामधारियों की प्रारंभ से ही अनबन चली आ रही थी । नामधारी ब्राह्मणों को चिढ़ाने के लिये यह गाया करते थे, "गई ब्राह्मणों तुम्हारे हाथों से खीर। आगे तो मिलती थीं पूरी घोतियां अब न मिलती लीर"। हुक्का पीने वाले ब्राह्मणों को नामधारी गदहोचूस तथा मांसखानेवालों को कटराखाने कहा करते थे । मंगतों, फ़कीरों , ब्राहमणों तथा गांव के पारस्परिक बैर लेने वालों ने समाधों- मज़ारों को तोड़ने वाली बात का नामधारी सिंहों के विरुद्ध उपयोग किया। पुलिस के अफसर भी नित्य-नित्य नामधारियों के विरुद्ध जांच करने से तंग आये हुये थे। अत: उनको भी अब नामधारियों के विरुद्ध गुस्सा निकालने का अच्छा अवसर भिला। गांव खटड़ा थाना डेहलों ज़िला लुधियाना के नामधारियों ने अपने जेष्ठों की मढ़िया तोड़ दीं। यहां के ब्राहमणों के साथ एक बार पहले भी नामधारियों की लड़ाई हुई थी । ब्राह्मणों ने पुलिस में शिकायत की ।

मुकदमा चला कूकों ने स्पष्ट रूप में बयान दिये कि जब से वे कूके बन गये हैं, तब से वह अपने जेष्ठों की मढ़ियों को नहीं मानते । परन्तु फिर भी चार कूकों खजान सिंह, काहन सिंह, बसावा सिंह तथा बहादुर सिंह को 6-

6 महीने कैद तथा दस-दस रुपये जुर्माना की सजायें हुई । गांव भमदी थाना खन्ना के मेघ सिंह , शेर सिंह , जोता सिंह तथा गुलाब सिंह मजहबी ने अपने गांव में एक मढ़ी तथा पीरखाना तोड़ दिया। लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर के सम्मुख साफ-साफ कह दिया कि मंढ़ीआं तथा पीरखाने उन के पूर्वजों ने बनाये थे, परन्तु अब वह इन की पूजा नहीं करते अतः तोड़ दिये है । इन को भी 6-6 महीने कैद तथा दस-दस रुपया जुर्माना की सजाएं हुई ।

सन् 1866 तथा 1867 में इस किस्म की कई घटनाएं लाहौर, अमृतसर, गुरदासपुर तथा गुजरांवाला के ज़िलों में हुई । नामधारियों को जुर्माना तथा कैदें हुई । परन्तु जब नामधारियों ने यह देखा कि धर्म पर चलते हुए स्वेच्छाचारी होने से ब्राह्मणों, फकीरों, बेकारों, पीरखानों के मजोरों तथा विदेशी सरकार के कर्मचारियों को उन के विरुद्ध गुस्सा निकालने का अवसर मिलता है, तो उन्होंने ऐसा करना बन्द कर दिया ।

❋

प्रचार के दूसरे चार वर्ष

सन् 1867 से 1871 तक

सन् 1867 के पश्चात् के चार वर्ष गुरु राम सिंह जी ने भ्रमण कर के पंजाब के ज़िलों अंबाला, लुधियाना, फिरोज़पुर, सिख रियासतों के प्रदेशों, होशियारपुर, जालंधर, अमृतसर, गुरदासपुर, सियालकोट तथा गुजरांवाला में अमृत पान कराने, सिख धर्म फैलाने तथा सामाजिक कुरीतियों का सुधार करने में लगाये । नामधारियों की हस्तलिखित तथा अमुद्रित पुस्तकों में आपके इन देशाटनों का वर्णन विस्तार से किया हुआ है[7]। इस को यदि क्रम पूर्वक सम्वत् के अनुसार लिख दिया जाये तो ऐतिहासिक दृष्टिकोण से यह पंजाब के सामाजिक जीवन के इतिहास के लिये बहुमूल्य सामग्री होगी ।

सन् 1868 में प्रचार करते हुए गुरु राम सिंह जी दिवाली के अवसर पर अमृतसर पहुंचे । लाहौर में से गुजरते हुये सम्बत् 1925 को माघी संक्रांति का दिवस आपने बाबा जमीयत सिंह के पास गांव गिल्ल ज़िला स्यालकोट में मनाया । आपने इस सम्वत् का होला, जो मार्च 1869 में था मानवाला के सरदारों हीरा सिंह तथा सरदार बुद्ध सिंह आदि के पास मनाया। गांव मानावाले का यह होला नामधारी इतिहास में एक बहुत प्रसिद्ध मेला है।इस बार आपने सरदार लैहना सिंह घरजाखिया जिस के साथ जनरल हरी सिंह जी नलवा की पुत्री व्याही हुई थी, को नामधारी बनाया। इससे नलुआ वंश के साथ भी. गुरु राम सिंह जी का घनिष्ठ सम्बन्ध हो गया। सरदार हरी सिंह नलुआ का पुत्र मोती सिंह नेपाल राज्य की फौज में एडजुटेंट था । यहां ही आपने उच्चारण किया था कि मैंने ढाई सिख देखे हैं । सरदार लैहना सिंह घरजाखीया पूर्ण, बाबा जमीयत सिंह काहने वाला पूर्ण तथा बाबा जमीयत

[7] संत संतोख सिंह बाहोवाल द्वारा रचित सतगुरु बिलास । अब नामधारी दरबार द्वारा ये पुस्तक दो भागों में छप चुकी है ।

सिंह गिल्लांवाला आधा । यहां ही महाराजा रणजीत सिंह के पेशावर के गवर्नर सरदार महा सिंह का भतीजा तारा सिंह गांव मिश्रीमीने वाला आप के कर कमलों से अमृत पान कर नामधारी बना । कोट छोरा की माई भागन आप को अपने गांव में ले गई तथा वहां भण्डारा किया। सन् 1868 की सरकारी रिपोर्ट के अनुसार गुजरांवाला के प्रदेश के लोग नामधारी बन रहे थे । सरकारी कर्मचारियों की इस वर्ष की रिपोर्ट में नामधारियों के विरुद्ध बहुत ही बुरी बुरी बातें लिख कर परिणाम निकाले गये हैं। उसमें लिखा है, कि लोग इस वर्ष नामधारी नहीं बन रहे जो कि वास्तव में बिल्कुल ग़लत हैं । जिस महिला चन्दों को सरकारी अफसरों ने प्रचारिका लिखा है, वास्तव में वह केवल 15 वर्ष की लड़की थी । रिपोर्ट के अन्त में लिखा है कि सरकार को नामधारियों पर निगरानी रखनी चाहिये, क्योंकि यह भी सम्भव है कि दबी हुई अग्नि पुनः प्रचंड ज्वाला बन जाये।

नामधारियों की सभाओं पर प्रतिबन्ध ढीले होने से कूकों ने अपने अपने इलाकों में मेले तथा दीवान लगाने आरम्भ कर दिये थे । सम्वत् 1925 के अथवा मार्च 1869 होला के मेले के लिये बाबा खुशहाल सिंह तथा मस्तान सिंह थराजवाला निवासियों ने आसपास के नामधारियों को निमन्त्रण भेज दिये। मुक्तसर, फाज़िलका तथा अबोहर के इलाकों की नई बन्दोबस्त हो रही थी । मोगा, भटिंडा , फरीदकोट के प्रदेशों के केसधारी जाट मुसलमान बोदलों, खोखरों, और हिंदू बागडियों, विशनुइयों, आदि से चार आने से ले कर 1)रुपया बीघा के हिसाब से भूमि खरीद रहे थे। भूमि बरानी थी । असाड़ी श्रावणी की फसलें वर्षा होने पर हो जाती थीं । दूर दूर तक रेत के टीले ही टीले चले जाते थे । इन नये आबादकारों ने प्रबंध यह रक्खा हुआ था कि एक कुटुम्ब के कुछ व्यक्ति तो पिछले गांव में रहते तथा कुछ अगले गांव चले जाते । चोरी डाके से डरते हुये कई कई गांवों के लोग एकत्रित हो कर सफर किया करते। थराजवाला के होला के मेले के समाचार सुन कर आसपास के बहुत से नामधारी सिंह तथा उनके संगी -साथी मुक्तसर से कुछ दूर गांव रुपाना में एकत्रित हो गये । नई नई आबादियां थीं । सारे

जाट सिक्ख पुराने मुसलिम निवासियों के मुकाबले में इकट्ठे रहते थे । तथा एक दूसरे का दुख बटाते थे । जहां मुसलमान संगठित हो कर झोपड़ियां जलाते तथा बाहुबल से ढोर ले जाने का यत्न करते, यह सारे संगठित रूप में डट कर मुकाबला करते । अधिकतर स्थानों में नये सिक्ख आबादकर जो नामधारी बन गये थे इस प्रदेश के गौ घातक मुसलमानों को मौत के दूत हो कर मिलते थे । इन प्रदेशों के सोढ़ी गुरु , नामधारिओं के स्वाभाविक ही विरोधी थे । मुसलमान पुलिस वाले, पटवारी मुन्शी मुसद्दी, जाट सिक्खों के मुसलमानों की इस निरोल -आबादी में आ कर भूमि खरीदने तथा गांव बसाने के सख्त विरोधी थे । रुपाने से तैयार हो कर नामधारियों का जत्था गांव थराजवाला को चल पड़ा । मुसलमान थानेदार दीवान बख़श व्यर्थ ही सिक्खों के इस जत्थे के पीछे हो लिया । दो दिन तो जत्थे के सिक्खों ने इसे कुछ न कहा, परन्तु जब वह खुल्लम खुल्ला इनका निरादर करने लगा तो जत्थे के नेताओं ने उस को धैर्य से समझाया कि वह थराजवाला में होला के मेले पर जा रहे हैं । इस पर भी वह सर पर ही चढ़ता गया । अतः जत्थे में से कुछ जोशीले सिक्खों ने दीवान बख़श के साथ बही व्यवहार किया जो तंग आये हुये जाट ऐसे समय पर बुरे हाकिमों के साथ किया करते हैं । थानेदार ने अफ़सरी मान में आकर छेड़खानी की, इस पर दंगा हो गया। उस ने तलवार चलाने की धमकी दी। सिंहों ने उस की तलवार छीन ली तथा डण्डे अथवा (मौला बखश) से दीवान बख़श थानेदार की मरम्मत कर दी । उसके घोड़े को एक दो सोटे मार कर पीछे भगा दिया। थानेदार के साथ का सिपाही भी झाड़ खा कर लौट आया ।

दीवान बख़श ने आते ही नामधारियों के विरुद्ध ज़िला के अफसरों को उसे जान से मार डालने की नियत से हमला करने तथा बलवा करने के इरादे से इकट्ठा होने, अंग्रेज़ी शासन के विरुद्ध नारे लगाने, तथा हुकूमत को न मानने के अपराधी होने की रिपोर्ट भेज दी ।

रिपोर्ट मिलने पर फिरोज़पुर का सुपरिटेंडेंट पुलिस मि. टर्टन स्मिथ तथा असिस्टेंट कमिश्नर मि. वेकफील्ड लगभग 20 सिपाहियों को साथ ले

कर थराजवाला की ओर चल पड़े । घुड़सवार पुलिस भी साथ थी । 1 मार्च को रात के 2 बजे वह मुक्तसर पहुंचे । सोढी मान सिंह तथा उस के भाई ने साहब बहादुरों को आ कर सलाम की तथा अपनी ओर से हर प्रकार की सहायता प्रस्तुत की ।

प्रातःकाल अंग्रेज़ अफसर तथा पुलिस के सिपाही थराजवाला को चले । अफसरों को तथा टोडियों को कूकों के नाम से ही बुखार हो जाता था । अतः थराजवाला से दूर ही यह बात बनाई गई कि पुलिस को पीछे रक्खा जावे तथा गांव वालों को आगे करके नामधारियों को पकड़ने का यत्न किया जावे । दो बजे समस्त पार्टी थराजवाला पहुंची । इंस्पेक्टर कुतुब-शाह, आठ पुलिस वाले, और बंदोबस्त का सुपरिटेंडेंट अली मौला, यह सब गांव से बाहर अफसरों के पहुंचने की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

इंस्पेक्टर कुतुबशाह ने अपनी सारी कारगुज़ारी अंग्रेज़ अफसरों को सुनाई और कहा कि, "सेवक ने हुजूर के आने से पहले फूले वालिये कूका मलूक सिंह के द्वारा विद्रोही कूकों को स्वयं ही हमारे. हवाले करने का हुक्म दिया था, परन्तु मस्तान सिंह थराजवाला ने मलूक सिंह की पेश नहीं जाने दी। मलूक सिंह के द्वारा फिदवी मस्तान सिंह को भी मिला जिस ने मेरा परिहास किया तथा सरकार की नौकरी छोड़ कर कूकों के साथ मिल जाने के लिये कहा । अली मौला के समझाने पर कूकों ने उस पर ढेले भी फेंके ।"

उधर मुसलमान देशी अफसर नामधारियों को हुकूमत के विद्रोही सिद्ध करने तथा उन्हें फांसी के दंड दिलवाने के यत्नों में लगे हुए थे, इधर निष्कपट नामधारी गुड़ बांटने तथा आपस में मिलकर मेला करने की तैयारियां कर रहे थे । अंग्रेज अफसरों का आना सुन कर नामधारी खुले हृदय से इन के पास मुसलमान कर्मचारियों की शिकायत करने को आये । परन्तु उलटे उन में से ही 44 आदमी पकड़ कर मलोट के थाने में भेज दिये गये। तथा नामधारिओं के सोना-चांदी के आभूषण जो सरकारी रिपोर्ट के अनुसार 5000) मोल के थे, अफसरों ने अपने कब्जे में कर लिये।

दो मार्च को 44 नामधारी कैदी मलोट से मुक्तसर लाये गये तथा फिरोज़पुर भेज दिये गये। फिरोज़पुर के डिप्टी कमिश्नर मिस्टर नाकस के सामने मुकदमा पेश हुआ। पंजाब सरकार की आज्ञानुसार लाहौर के कमिश्नर मि. क्रेकक्रापट ने डिप्टी कमिश्नर को लिखा, कि दोषियों पर विद्रोह का मुकदमा न चलाया जाए, बल्कि बलवा का मुकदमा चला कर कुछ एक को ही कड़े दंड दिये जावें ।

सरकार की मान प्रतिष्ठा को कायम रखने के लिये थराजवाला गाँव के मस्तान सिंह तथा बेली सिंह, कराईवाला के विचित्र सिंह , औलख के हरनाम सिंह , चन्नो के मन्ना सिंह , फूलेवाले के सरमुख सिंह, को थोड़ी-थोड़ी कैद की सजाएँ दीं और जुर्माने किये । शेष तीस आदमियों को मुकदमा चलाये बिना ही छोड़ दिया गया।

सोढ़ी मान सिंह को सरकार को सहायता देने के बदले में आनरेरी मजिस्ट्रेट बना दिया गया । गांव वालों को भी नकद इनाम दिये गये । परन्तु पुलिस वालों में से किसी को भी कुछ न मिला । वास्तव में अंग्रेज़ अफसरों को यह निश्चित हो गया था, कि छोटे मुसलमान अफसरों ने षड्यंत्र करके झूठा मुकदमा खड़ा कर दिया है और असल बात कुछ है ही नहीं ।

सन 1869 अथवा सम्वत् 1926 में गुरु राम सिंह जी ने लुधियाना, लाहौर, गुरदासपुर तथा सियालकोट के ज़िलों का पर्यटन किया । जब दड़प के देशाटन से लौटते हुए गुरदासपुर के ज़िले से गुजर रहे थे तो सरकारी रिपोर्ट के अनुसार आपके साथ 150 आदमी थे। इस समय उनके साथ सरदार बुद्ध सिंह मानावाले का, सियालकोट का जोता सिंह, तथा सरदार मंगल सिंह पटियाला वाले उनके साथ थे । बाबा नारायण सिंह जिन्हें नामधारी पंथ में दीवान साहब के नाम तथा सम्मान से बुलाया जाता था भी आपके साथ थे ।

मौलवी गुलाम भीख जालंधरी अपनी उर्दू की अप्रकाशित पुस्तक तारीख वाकरी में पृष्ठ 142 से 148 तक कूकों के विषय में इस प्रकार लिखता है । (इस पुस्तक को लिखकर समाप्त करने की तारीख सन 1882 है ।)

"मैं स्वयं भैणी गया और देखा--कूकों ने जो तरीका अखत्यार किया है वह और कुछ नहीं है, वह असल मजहब सिक्खों का ही हैं और उसे उन्होंने दुबारा रौनक दी है । मैलान उनकी तबीयत का व असली रुख सिक्ख मजहब की जानब है । 'पर उनके तरीके और डेढ़ लाख आदमियों से भी ज्यादा गिरोह के इतफाक से, यह भी अयां (स्पष्ट) है कि यह लोग गुरु गोबिन्द सिंह के तरीके पर चलते हैं । उनकी जोलानियें तबाह, सख्त गुज़रान, नीमशबी (अर्धरात्रि) पंचायतें और सिपाहियाना बजा को देखकर गवर्नमेन्ट पंजाब की नज़र उनके ऊपर हुई, और उन्होंने उनके सरग्रोह को निगाह में रखा था।"

"नानकशाह की तरह राम सिंह भी हर कौम और हर जाति के आदमी को अपने मजहब व फिरके में मिला लेता है। मुसलमानों को भी कूका कर लेता है ।इन कूकों में अक्सर नीची जाति के लोग मिसल पंजाबी जाट और चमार बगैरह के हैं । अकायद (नियम) उनके साफ़ और आसान हैं । यानी बुतपरस्ती किसी तरह की जायज नहीं । किसी जाति की कैद नहीं है । गुरु गोबिन्द सिंह जी को अपना देवता मानते हैं। हर किस्म की बुराई को गुनाह मानते हैँ । चोरी, जनाकारी, शराबखोरी और कुल मुस्कुराते फसाद (मादक पदार्थ) गोश्त और झूठ उनके कतई मना है । जो कोई कूका होता और यह मजहब अख्तियार करता है, उसके ऊपर अतायत (आधीनता) गुरु की और पाबंदी अकायद की ओर जफाक़शी और जानफशानी जबरन लाज़िम करवाते हैं । बड़ा मकूला उनका यह है--मरना कबूल करो, जीने की ख्वाहिश छोड़ो । अपने को खाक समझो, तब कूका बनो-कूकों का रोज रात के तीन बजे उठकर नहाना होता है और नहा धोकर ग्रन्थ के श्लोक पढ़ते हैं । उनको तमाम उमर, नेकी और नेकचलनी की ताकीद की जाती है । कूका फ़िरका में किसी ने मक्कार और बदइखलाक कम देखा होगा । इन लोगों के बड़े गरोह को देखकर मालूम होता है कि इस जदीद (नये) फिरके की बड़ी जल्द तरक्की हुई है । गांव के गांव और मोजे के मोजे कूके हो गये । जिस वक्त गुरु नानक जी मौजूद थे और उन्होंने

सिलसिला अरशद शुरू किया, उनको यह नसीब न हुआ कि दस वर्ष में भी एक हजार आदमी उनके चेलों में होता । उसके मज़हब का अरूज (उन्नति) पिछले मसनद नशीनों (उत्तराधिकारियों) के वक्त में हुआ था, इस मूजिद (गुरु) की ज़िंदगी में लाखों कूका हो गये ।"

"जबकि गुरुजी को कोई नया गश्ती हुक्म जारी करना मंजूर होता है तो वह लिखकर एक कूके को दे देते हैं । जितना उससे दौड़ा जाता हैं वह उस हुक्म को लेकर सफ़र करता हुआ दौड़ता है और फरमाबरदारी अपने गुरु की अपने ऊपर फर्ज जानता है । जब वह थककर चलने के काबिल नहीं रहता, किसी दूसरे कूके को दे देता है । जब वह भी दौड़ता कूकों को उस गश्ती हुक्म से मतलाह (सूचित) करता हुआ थक जाता है तो वह भी किसी दूसरे कूका को दे देते हैं, वह भी इसी तरह अमल करता है । ग़रज़ इस तरह वह हुक्म अजब सुरअत (तीव्रता) के साथ कूकों मे पहुंच जाता है। चेले उसके रोज़बरोज ज्यादा होते गये और बिलाशक इखलाक उसके चेलों का सिक्खों की निसबत बेहतर होता चला था । गरज़ कूका सिक्खों में ऐसे हो गये कि जैसे मुसलमानों में व्हाबी ...।"

तेरह चौदह वर्ष के प्रचार का यह प्रभाव पड़ा कि खण्डे का अमृत छके हुए तथा पंच ककारों की रहत रखने वाले सिक्खों में से 95 प्रतिशत नामधारी सिख बन गये थे । पंजाब तथा सिक्ख रियासतों के समस्त इलाकों तथा जाट गोत्रों के मान प्रतिष्ठा वाले कुटुम्ब नामधारी हो गये थे ।

नामधारियों का राजनैतिक कार्यक्रम

भारत के सीमान्त राज्य
कश्मीर तथा नेपाल से सम्बन्ध

गुरु राम सिंह जी ने धर्म प्रचार तथा सामाजिक सुधार आंदोलन की नींव का निर्माण राजनैतिक विचार से किया था । आपका वास्तविक ध्येय इन दोनों साधनों से लोगों को एक सूत्र में पिरो कर विदेशी राज्य के विरुद्ध स्वतंत्रता संग्राम के लिये जनता तथा देश को तैयार करने का था । सन् 1868 अथवा संवत् 1925 तक बाबा पुराना के वंशज बाबा गुरचरण सिंह, तथा बाबा कन्हैया सिंह और जगत सिंह बेदी के प्रचार से काबुल, पेशावर, तीराह तथा हरीपुर हजारा तक लोग इस नवीन आन्दोलन के उद्देश्यों तथा इसके संचालक गुरु के नाम से परिचित- हो गये थे । पंजाब के बहुत से वहाबियों (पवित्र जीवन वाले मुसलमानों का एक सम्प्रदाय) तथा नामधारियों के गांव एक ही थे ।

अंग्रेज़ों तथा सिक्खों की पहली लड़ाई के अंत में अंग्रेज़ों ने महाराजा रणजीत सिंह के राज्य का कश्मीर वाला प्रदेश एक करोड़ रुपये में राजा गुलाब सिंह डोगरा के हाथ बेच दिया था। जब अंग्रेज़ों ने अपनी पहले से ही सोची समझी चाल के अनुसार पंजाब को अपने साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया और इस नये प्रदेश की सीमाओं का अध्ययन किया, तब उन्हें कश्मीर बेचने की ग़लती अनुभव हुई। यूरोप में हुई क्रिमिया की लड़ाई के पश्चात् अंग्रेज़ों ने रूसी तुर्कीस्तान तथा कश्मीर की सीमा तथा यातायात के मार्गों आदि पर पक्का कब्जा करने की चालें सोचनी आरम्भ कर दी और रियासत कश्मीर की भीतरी समस्याओं में भी हस्तक्षेप करने लगे ।

कश्मीर का महाराजा रणवीर सिंह अंग्रेज़ों के पुरानी संधि से अधिक हस्तक्षेप करने को बुरा समझता था । कश्मीर दरबार में उस समय दरबारियों के दो दल थे । एक प्रधान मंत्री दीवान- कृपाराम एमनाबाद वाले का जो

अंग्रेज़ों से पक्की मित्रता रखने के पक्ष में था, दूसरा दल महाराजा गुलाब सिंह के गुरु वेदांती जी का, जो कश्मीर को अंग्रेज़ों के प्रभाव से सुरक्षित तथा अर्ध स्वतंत्र हिन्दू राज्य के रूप में रखना चाहता था । वेदांती जी महाराजा गुलाब सिंह जी के समय से एक विद्यालय चला रहे थे तथा उसमें स्वयं ही शिक्षा दिया करते थे । गुजरांवाला तथा सियालकोट ज़िलों के बहुत से नामधारी वेदांती जी के मित्र थे तथा उनके पास इनका खुला आना जाना था ।

किशन सिंह उपनाम हरी सिंह गांव ग्रंथ गढ़ ज़िला अमृतसर तथा राजा सिंह तरांडीवाला वेदान्ती जी को अधिकतर मिलते रहते थे । गुरु राम सिंह जी के दड्डुप, गुजरांवाला, सियालकोट के देशाटन के समय 1869 की ग्रीष्म ऋतु में ही आपके आदेश से तथा वेदांती जी के द्वारा हीरा सिंह लम्बू साढौरा वाला , तारा सिंह किलादेशा सिंह वाला, तीस अन्य कूकों के साथ महाराजा कश्मीर को जम्मू में मिले । वेदान्ती जी की सिफारिश पर महाराजा रणवीर सिंह ने इन्हें जम्मू नगर से बाहर जगह दे दी । महाराजा साहब ने इन्हें बचन दिया कि यदि वह एक पलटन की पूर्ण संख्या के बराबर कूके ले आवे तो उनको पृथक पलटन स्थापित कर दी जावेगी । कूकों की कम्पनी कुमादान हुकम सिंह की रेजीमेंट में सम्मिलित करके श्रीनगर भेज दी गई। ड्स रेजीमेंट का अजीटन गवर्नर मियां सिंह का भतीजा मिश्रीमीने गांव का तारा सिंह था। नामधारियों को पूरी तरह कवायद-परेड सिखाकर तथा वर्दियाँ देकर बाकायदा सरकारी नौकर कर लिया गया। 15 मास के पशचात नवम्बर 1870 में नामधारी सैनिकों की संख्या ढाई सौ के लगभग हो गई । इनकी ड्यूटियां सीमान्त चौकियों पर लगाई जाती थीं ।

नामधारी सैनिकों का वेतन 10 रुपये मासिक था । जम्मू की फौज के अन्य सैनिकों से इन्हें एक रुपया अधिक मिलता था । इन सैनिकों में से दो नामधारी वह भी थे जो मुसलमानों से कूके बने थे ।

पंजाब सरकार को जब इस बात का पता चला, तो उसने इसका पूरा पूरा समाचार लाने के लिये एक अफसर भेजा, जिसने तीन अथवा चार

मास पश्चात् आकर नामधारियों के कश्मीर की सेना में भर्ती होने का पता दिया । इस अफसर के अतिरिक्त अन्य दूत भी भेजे गये, जो इस बात का पता लगाते रहे । यद्यपि इस समय सरकार के पास नामधारियों के विरुद्ध कोई रिपोर्ट नहीं पहुंच रही थी, तथापि पंजाब सरकार नामधारियों के इस प्रकार देशी रियासतों की सेनाओं में भर्ती होकर कवायद परेड सीखकर फौजी अनुशासन के पालक तथा अभ्यस्त हो जाने को बहुत खतरे वाली बात समझती थी । भर्ती होकर नामधारी पुलिस की निगरानी तथा अफसरों की दृष्टि से ओझल हो जाते थे । इसलिए उनके कार्यों का कुछ पता नहीं चलता था।

दीवान कृपाराम वेदान्ती जी का विरोधी होने तथा अंग्रेज़ों का अपना आदमी होने के कारणों से कश्मीर की सीमान्त रियासत में नामधारियों की पलटन खड़ी करने का कट्टर विरोधी था । वह किसी ऐसे अवसर की टोह में था जब कि वह महाराजा से इस पल्टन को तोड़ने का आदेश प्राप्त कर सके । दीवान कृपाराम एक अत्यन्त चालाक रियासती दरबारी था। उसकी अंग्रेज़ अफसरों से गहरी छन रही थी, अंग्रेज़ भी दीवान साहब को फौज में नामधारी न रखने के लिये सदा कहते रहते थे । दीवान साहब के सम्बंध में प्रसिद्ध है कि उसने रियासत के पदों पर अपने साले तथा सालों के भी साले लगा रक्खे थे । अमृतसर तथा रायकोट के बूचड़ों के कत्ल करने वालों को फांसी मिलने समय अग्रेज़ों को नामधारियों की जत्थाबन्दी के विषय में बहुत आशंकायें हो गई थी । अतः इस अवसर पर दीवान साहब ने महाराजा के पास जाकर बताया कि उसने रेजिडेंट को बातचीत करते हुए स्वयं सुना है; कि अंग्रेज़ी सरकार कूकों के विरुद्ध है, क्योंकि कूके अंग्रेज़ों के कट्टर दुश्मन है ।

महाराजा ने दीवान साहब के कहने पर अपनी निजी बेहतरी इसी में समझी कि कूकों की कम्पनी तोड़ दो जावे । कम्पनी स्थापित करने के तीन साल पश्चात् सन् 1871 के अंत में वह तोड़ दी गई तथा नामधारी सैनिक घरों को वापिस आ गये । सढौरे वाला हीरा सिंह इन नामधारियों का अगुआ सन् 1881 के पश्चात् भी अपने गांव साढ़ौरा में ही रहता था ।

उस समय नेपाल के स्वतंत्र राज्य का प्रधानमंत्री जंग बहादुर राणा था । नेपाल का वास्तविक महाराजा जिसको पांच सरकार भी कहते हैं, सन् 1850 तक केवल नाममात्र का ही महाराजा होता था । राज्य और शासन आदि का समस्त काम सन् 1803 से लेकर 1850 तक प्रधानमंत्रियों के ही अधीन था, जिनको तीन सरकार कहते थे। महाराणा जंग बहादुर नेपाल इतिहास में भीमसेन थापा के पश्चात् प्रथम श्रेणी का राजनीतिज्ञ चतुर तथा अंग्रेज़ों की गहरी चालों को समझाने वाला प्रधान मंत्री हुआ है । जंग बहादुर अपने मामाओं, उनके परिवारों तथा हितैषियों के रक्त की नदियां बहाकर, सन् 1847 में स्वयं प्रधानमंत्री की गद्दी का स्वामी बना । बाल्यावस्था में जंगबहादुर अपने मामा जनरल मातावर सिंह थापा के साथ महाराजा रणजीत सिंह के दरबार में लाहौर भी रहा था । जब सन् 1843 में जनरल मातावर सिंह थापा लाहौर से जाकर नेपाल का प्रधानमंत्री बना तो जंग बहादुर को भी एक बड़े पद पर लगा दिया गया । यही कारण था कि जब महारानी जिन्दां चुनार के किले से भेस बदल कर निकली तो वह सीधी नेपाल में जंग बहादुर के पास पहुंच गई। उसने महारानी को बागमती नदी के तट पर थापाथलि में रहने के लिये एक प्रासाद देकर उसके लिये रियासत की ओर से एक अच्छी धनराशि जीविका के लिए नियुक्त कर दी ।

गद्दी संभालने के एक दो वर्ष पश्चात् महाराजा जंग बहादुर ने अपनी शक्ति दृढ़ करने में लगाई । 1850 में उसने तिब्बत पर चढ़ाई कर दी । युद्ध में तिब्बतियों की पराजय हुई । जंग बहादुर की ओर से संधि की दूसरी शर्त यह रखी गई कि "लाहौर दरबार के जो केशधारी सिक्ख सैनिक तिब्बत वालों के बन्दी थे, उन सबको छोड़कर नेपाल राज्य के हवाले कर दिया जावे ।" ये सिक्ख सैनिक तथा इनका अफसर काठमांडू पहुँच गये तथा अपने साथ सरदार लहना सिंह मजीठिया का आविष्कार ऊंचे पहाड़ों पर दुश्मनों के विरुद्ध लड़ाई में प्रयोग करने के लिये चमड़े की दो तोपें भी ले आये। ये तोपें अभी तक नेपाल राज्य की राजधानी काठमांडू के शस्त्रागार में पड़ी हैं । लेखक ने सन् 1947-48 में अपनी आंखों से इन्हें देखा है ।

महाराणा जंगबहादुर ने इन सिक्खों को अपनी फौजों को कवायद परेड कराने तथा नये ढंग के पहाड़ी तथा मैदानी युद्ध लड़ने के तरीके सिखाने के काम पर नौकर रख लिया । काठमांडू में उदासियों तथा निर्मले साधुओं के डेरे भी हैं, जिन्हें रियासत की ओर से जागीरें मिली हुई हैं । महारानी जिन्दा के वहाँ पहुँचने तथा सिक्खों की नेपाल की पल्टनों में नौकर होने के कारण सिक्खों का नेपाल में आना जाना हो गया था । महाराणा जंगबहादुर सन् 1857 की क्रान्ति के समय में अपनी फौजें तराई में ले आया था, परन्तु जब उसने वहां देखा कि हिन्दुस्तानी विद्रोहियों की योजना बिखरी हुई सी है, तो वह अंग्रेज़ो के साथ हो गया तथा नेपाल को वापिस जाते हुए लखनऊ की लूट भी साथ ही ले गया ।

सन् 1857 में अंग्रेजों के विरुद्ध लड़े गये स्वतंत्रता युद्ध के पश्चात् नाना साहिब, तांतिया टोपे, नवाब अब्दुल मजीद खाँ लखनऊ वाला, बाबू बन्धू सिंह तथा अन्य बहुत से भारतीय भाग कर नेपाल की सीमा में चले गये थे । महाराणा जंगबहादुर ने सबका स्वागत किया । नाना साहिब की महारानी लक्ष्मी के रहने के लिए पृथक् महल दे दिया तथा राशन लगा दिया। अंग्रेज़ों ने महाराणा जंगबहादुर पर इन विद्रोहियों को उनके हवाले करने के लिये अत्यंत ज़ोर दिया, परन्तु जंगबहादुर ने ऐसा करने से साफ इनकार कर दिया । जंग बहादुर का विचार था कि 1857 की सहायता के बदले में अंग्रेज़ नेपाल राज्य का वह प्रदेश जो उन्होंने सन् 1816 के युद्ध के पश्चात् सागोली की संधि के अनुसार छीन लिया था वापिस कर देंगे, परन्तु जंग बहादुर के बार बार मांग करने पर भी अंग्रेज़ों ने इस विषय में बातचीत करने से इनकार कर दिया । इसलिये जंगबहादुर भी यद्यपि ऊपर से अंग्रेज़ों के साथ संधि ही रखता था, परन्तु हृदय से सदा अपने दाँव पर रहता था ।

1857 के विद्रोह के समय लखनऊ में बंगाल रेजिमेंट के पंजाबी हवलदार नन्दराम राजपूत ने अपनी पलटन को अंग्रेज़ों के विरुद्ध खड़े करने तथा अंग्रेज़ अफसरों को मारने का सराहनीय काम किया था, इसलिए नन्दराम को अंग्रेज़ों के विरुद्ध लड़ने वाले सैनिक "जरनैल" के नाम से

पुकारने लगे थे। यह भी भागकर नेपाल चला गया था । वह बहुत ही वीर तथा जोड़ तोड़ को समझने वाला मनुष्य था। नामधारी किशन सिंह उपनाम हरी सिंह 1868 में नन्दराम को जा मिला । यह वही किशन सिंह अथवा हरी सिंह था जो राजा सिंह तरांडीवाले के साथ वेदान्ती जी को जम्मू में मिलता रहता था । जरनैल नन्दराम तथा हरी सिंह इकट्ठे ही रहने लगे । ये दोनों भूटान के देवराजा की ओर से महाराणा जंग बहादुर के नाम आवश्यक सैनिक सहायता लेने देने का संदेश लेकर नेपाल पहुँचे । इन्हीं दिनों में महाराणा जंग बहादुर के कुछ आदमी काश्मीर भी आये । अंग्रेज़ शासकों को जब इनके काश्मीर आने का पता चला तो वह बहुत घबराये ।

महाराणा जंगबहादुर प्रत्येक उस भारतीय के साथ जो अंग्रेज़ों के विरुद्ध हो, निजी सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था । पंजाब सरकार ने किशन सिंह नामधारी के एक कत्ल के मुकदमे में वारंट जारी कर दिये थे। यह वारंट नेपाल के रेज़ीडेन्ट के पास पहुंचाये गये, परन्तु जंगबहादुर ऐसे लोगों को लेने देने की बात अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट से कदापि नहीं किया करता था।

गुरु राम सिंह जी का नाम सुनकर जंग बहादुर ने उनसे सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा प्रकट की। उसका सन्देश पहुँचने पर गुरुजी ने दो प्रसिद्ध तथा सुघड़ नामधारी सूबों को एक जोड़ा खच्चरों का तथा दो भैंसे भेंट के रूप में देकर चार नामधारी स्वयंसेवकों के साथ नेपाल को भेज दिया ।

नेपाल पहुँचने पर कृपाल सिंह ने नामधारियों का परिचय जंग बहादुर 'के पुत्र युवराज जनरल बबरजंग से करवाया । युवराज बबरजंग ने इनकों अपने पिता महाराणा जंग बहादुर के सामने प्रस्तुत किया । सौगातों के बदले गुरु राम सिंह जी के लिये महाराजा तीन सरकार की ओर से 500 रुपये नकद, एक कस्तूरी के नाफों से गुथी सोने की माला, एक दोशाला, एक तिब्बती घोड़ा तथा दो खोखरियां सौगात के तौर पर भेजी गई ।

अंग्रेज़ी सरकार को कूकों के नेपाल जाने से अत्यन्त शंका पैदा हो गई थी। इसलिये अंग्रेज़ शासक अपने दूत नेपाल भेजते ही रहते थे । सन् 1871 में काशीपुर वाले राजा शिवराज सिंह को नेपाल भेजा गया, जिसने

आकर रिपोर्ट दी कि "बातचीत में महाराणा जंगबहादुर ने अमृतसर के बूचड़ों के घात का उल्लेख किया है । कृपाल सिंह भी उसको मिला है तथा उसने उसके साथ बातें भी की है, परन्तु किशन सिंह का कुछ पता नहीं लगा ।" राजा साहब ने यह भी बताया कि उसने जंग बहादुर को अंग्रेज़ों से मित्रता स्थापित करने को भी कहा था ।

नेपाल में अंग्रेज़ रेज़ीडेंट मि. लारेन्स किसी न किसी ढंग से महाराजा जंग बहादुर और नामधारियों की बातचीत का पता चलाने के यत्नों में लगा रहता था। एक दिन जंगबहादुर ने बातचीत करते हुए उसे बताया कि उसकी सूचना अनुसार पंजाब में तीन लाख कूके हैं ।नैपाल की सेना में कूकों के भर्ती होने के विषय में जंग बहादुर ने रेज़िडेन्ट को यह कह कर टाल दिया, कि वह गोरखों के अतिरिक्त किसी और को अपनी सेना में नहीं रखता । रेज़िडेंट को जंग बहादुर ने यह भी बताया कि नामधारी अंग्रेज़ी शासन के कट्टर विरोधी हैं तथा समय आने पर वह अंग्रेज़ों के विरुद्ध अवश्य खड़े हो जावेंगे ।

❋

पंजाब पर अंग्रेज शासकों का अधिकार

गोवध की स्वतंत्रता

मुसलमानों ओर हिन्दू-सिक्खों में बैर भावना का बीज बोना

अमृतसर तथा रायकोट की घटनाएं

सन् 1845-46 के युद्ध में लाहौर दरबार की सेनाओं की पराजय होने के पशचात मार्च 1846 को भरोवाल के स्थान पर अंग्रेज़ अधिकारियों और लाहौर दरबार के मध्य एक सन्धि हुई, इसके अनुसार व्यास नदी से नीचे का समस्त प्रदेश जब्त करके अंग्रेज़ों ने अपने राज्य में समाविष्ट कर लिया । महाराजा दलीप सिंह राजगद्दी के मालिक माने गए और उनकी माता महारानी जिन्दां राज्य की Regent नियुक्त हुई । लाल सिंह मंत्री बने और तेज सिंह सेनापति। ये दोनों न सिक्ख थे और न ही पंजाबी । लाहौर दरबार में अंग्रेज़ दूत नियुक्त किया गया । संधि के अनुसार अंग्रेज़ फौजों ने लाहौर के किले में अपने डेरे डाल दिए।

जीत होने पर अंग्रेज़ों ने युद्ध के कर की मांग की । युद्ध का कर एक करोड़ रुपया लगाया गया । सरकारी कोष बिल्कुल खाली था, इसलिये कश्मीर का प्रदेश महाराज गुलाब सिंह डोगरा को इस तावान की रकम देने के बदले में बेच दिया गया । गुलाब सिंह ने जम्मू कश्मीर की नई रियासत स्थापित कर ली । इसका सीधा सम्बन्ध अंग्रेज़ी शासन से रक्खा गया । लाखों माताओं के लालों के बलिदान देकर बनाये हुये पहिले स्वतंत्र पंजाबी राज्य को स्वार्थी नेताओं ने इस तरह बर्बाद किया कि महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के बारह वर्ष पश्चात् उसके वंश में से कोई एक भी पंजाब में उपस्थित नहीं था।

युद्ध के परिणाम स्वरूप एक अंग्रेज़ रेज़ीडेंट लाहौर में रहने लगा । रेजिडेंट के संबंध में उस समय में यह विचार प्रचलित था, कि जहां एक अंग्रेज़ रेज़ीडेंट बैठा हो तो समझ लो कि वहाँ 50 हजार संख्या में अंग्रेज़

फौज बैठी है । सिंहासन का स्वामी महाराजा दिलीप सिंह अनुभवहीन था । लाहौर दरबार के अफसर रेज़ीडेंट के सम्मुख आँख उठाकर नहीं देख सकते थे । शासन के छोटे बड़े कार्यों में रेज़ीडेंट हस्तक्षेप करता था । युद्ध में पराजय होने के पश्चात् भी दरबारियों में पारस्परिक दलबन्दी, एक दूसरे से द्वेष तथा बैर उसी प्रकार विद्यमान थे ।

24 मार्च सन् 1847 को लाहौर के रेज़ीडेंट मि. हेनरी एम-लारेंस ने गवर्नर जनरल का यह हुक्म जारी किया कि 'अंग्रेज़ों की प्रजा में से कोई भी मनुष्य दरबार साहब अमृतसर अथवा उसकी परिक्रमा में जूती पहन कर नहीं जा सकेगा ।' इसमें यह भी लिखा था कि अमृतसर में गोबध नहीं किया जावेगा । तांबे की चादर पर यह आदेश अंकित करवाकर दरबार साहिब की ड्योढ़ी पर लगाया गया ।

लाहौर के सिंहासन पर सिख महाराजा के होते हुए ऐसा आदेश निकालने की आवश्यकता क्यों हुई? कौन लोग थे जो दरबार साहिब में जूतों के साथ चले जाते थे ? अमृतसर में गोबध कौन करते थे तथा क्यों करते थे ? इन बातों की अधिक खोज करने की आवश्यकता है । अंग्रेज़ी लिपि में तांबे की चादर पर लिखा हुआ यह आदेश आजकल भी दरबार साहिब अमृतसर के तोशा खाना में स्थित है ।

सिक्खों तथा अंग्रेज़ों में मुल्तान, चिलियाँवाला तथा गुजरात की लड़ाइयों के पश्चात् अंग्रेज़ों ने अनुभवहीन महाराजा दिलीप सिंह को लाहौर दरबार के सिंहासन से उतारकर पंजाब को अपने भारतीय साम्राज्य में मिला लिया । 29 मार्च 1849 को किले में एक दरबार करके मि. इलियट ने यह घोषणा कर दी कि लाहौर दरबार की सेनायें तोड़ दी गई हैं और अंग्रेज़ों की सेनाओं ने पंजाब की छावनियों में आकर उन पर अधिकार कर लिया है ।

अंग्रेज़ों की सेनाओं में अंग्रेज़ सिपाही गोमांस खाते थे, इसलिये अंग्रेज़ी फौजियों के आने से लगभग सवा महीने पश्चात् ही भारत सरकार की सहमति से पंजाब के बोर्ड ऑफ-एडमिनिस्ट्रेशन के गशती पत्र नं 3 दिनांक 4 मई 1849 के अनुसार पंजाब में मांस भक्षण के लिए गोबध की आज्ञा दे

दी गई । लाहौर के कमिश्नर मि. आर. मिन्टगुमरी के पत्र नम्बर 12 दिनांक 10 मई 1849 के अनुसार इस आदेश के पालन करने की सूचना हुई । कई ज़िलों के अंग्रेज़ डिप्टी कमिशनरों ने इस हुकुम के सम्बन्ध में अधिक तथा स्पष्ट सूचनायें मांगीं । मेजर हरबर्ट एडबडंज़ ने मुल्तान के असिस्टेंट कमिश्नर लेफ़्टीनेंट जेम्ज को लिखा, "किसी शर्त पर भी नगरों तथा कस्बों की सीमाओं के अंदर गौ मांस को दुकानों में रखकर न बेचा जावे । मांस के लिये गोबध, शहर से बाहर ही किया जावे । यदि मुसलमान जानबूझकर खुल्लम खुल्ला अपने हिन्दू पड़ोसियों के दिल दुखाने के लिये ऐसा करें तो उन्हें कड़े दंड दिये जायें। ऐसे कड़े प्रतिबंध न लगने का परिणाम यह होगा कि मुसलमान एक ऐसे स्वाधिकार का जिससे वे चिरकाल से वंचित हैं, अनुचित प्रयोग करेंगे, तथा फिर हमें हिन्दुओं और सिक्खों को जो कल ही पंजाब के शासक थे, मुसलमानों के हाथों होने वाले ऐसे निरादर से बचाना पड़ेगा ।"

20 मई 1849 को गवर्नर जनरल ने एक सरकारी हुक्म जारी किया जो इस प्रकार था :--

"no one should be allowed to interfere with the practice by his neighbour's of customs which that neighbour's religion either enjoins or permits ."

अर्थात् "किसी व्यक्ति को दूसरे पड़ोसी की धार्मिक मर्यादा अथवा जीवन ढंग में रुकावट डालने की आज्ञा तथा स्वाधीनता नहीं दी जावेगी ।"

इस घोषणा के अनुसार पंजाब में मुसलमानों तथा ईसाइयों के लिए गोबध की बिल्कुल आज़ादी हो गई । पंजाब के बोर्ड ऑफ़ एडमिनिस्ट्रेशन (प्रशासन मंडल) ने इस आज्ञा के अनुसार इस प्रकार की सूचनायें जारी की

(1) गोबध के लिये हर नगर तथा कस्बे की सीमा से बाहर एक विशेष स्थान निश्चित किया जावे ।

(2) शहर अथवा कस्बे की सीमा में गोमांस बेचने के लिये कोई दुकान न खोली जावे ।"

अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर एम. सी. सान्डर्स ने राय तख्त मल तथा

अन्य हिन्दू पंचों की सम्मति से शहर की सीमा से दूर एक स्थान गौबध के लिये चुना । इसके साथ ही बूचड़ों को निम्नलिखित सूचनाओं के पालन करने का आदेश दिया—

(1) गोबघ एक विशेष स्थान में चारदीवारी के अन्दर किया जावे,

(2) कोई बूचड़ गौमांस को बेचने के लिये शहर में नहीं ले जा सकता, यदि कोई ऐसा करेगा तो उसको दंड दिया जाएगा,

(3) गोमांस खाने वाले तथा खरीदने वाले स्वयं बूचड़खाने से मांस ख़रीदेंगे और उसे कपड़े में लपेटकर अपने घरों में लायेंगे । ऐसा करने वाले किसी प्रकार भी हिन्दुओं के हृदय दुखी नहीं करेंगे ।

इस आज्ञानुसार शहर में गोमांस बेचने के लिये कोई दुकान नहीं खोली जा सकती थी तथा न ही कोई व्यक्ति गोमांस को टोकरी आदि में रखकर शहर में बेच सकता था ।

इस समय अमृतसर नगर में हिन्दुओं तथा मुसलमानों की जनसंख्या समान थी । सिख केवल आटे में नमक बराबर ही थे । केशधारी सिक्ख या तो कुछ भाटड़े थे या अरोड़े दुकानदार; शेष गुरुद्वारों के महन्त तथा पुजारी थे । रामगढ़िया सरदारों के साथ थोड़े से बढ़ई और लोहार- सिक्ख जीविकार्जन के लिये गांवों से उठकर नगर में बसे हुए थे ।

बूचड़खाना खुलने के पश्चात् अमृतसर के बड़े बड़े जागीरदार धनाढ्य साहूकार, व्यापारी, हिन्दू तथा सिक्ख रईस, अंग्रेज़ माई बाप की हर बात में हाँ मिलाकर प्रशंसा प्राप्त करने में अपना मान समझते थे, किंतु आम जनता बधगृह को सिक्ख गुरुओं के कर कमलों से बनी हुई नगरी के माथे पर एक महान कलंक का टीका समझती थी । धनवान और निर्धन के धर्म, रीति रिवाज और चालचलन में धरती आकाश के समान अंतर होता है । निर्धन एवं पुरुषार्थी कभी भी धर्म की हानि नहीं देख सकता । यदि ऐसा हो, तो रोटी कमाने वाला हाथ तलवार पर जा अटकता है तथा धर्म विघायक को मार कर स्वयं मर जाना ही अपना धर्म समझता है ।

अमृतसर की मध्य बर्ग की हिन्दू-सिक्ख जनता के हृदय में

बूचड़खाना एक माँसखोर फोड़े की भाँति दुखता था। दीवाली और बैसाखी के मेले के मौकों पर जब बाहर के ग्रामीण सिक्ख जाट, बढ़ई आदि शहर में आकर यहाँ के बधगृह की बात सुनते तो वे बहुत ही दुखी होते, परन्तु वे विवश थे, लाचार थे कुछ भी नहीं कर सकते थे।न ही कोई नेता था तथा न ही सहारा देने वाला ।

पंजाब को अंग्रेज़ी शासन में सम्मिलित करने के पश्चात् बिना लाइसेंस के किसी प्रकार का शस्त्र रखना जुर्म घोषित कर दिया गया था । सिक्खों का धार्मिक चिन्ह कृपाण अथवा तलवार भी इसमें शामिल थी। अंग्रेज़ी सरकार की ओर से गुरुद्वारे के नियुक्त किये गये संरक्षकों तथा तख्तों के पुजारियों ने तो हर समय पहनने वाली कृपाण की लम्बाई केवल तीन इंच बतलाकर अंग्रेज़ माई बाप की प्रसन्नता प्राप्त कर ली थी। पवित्र नगरी में खुल्लम खुल्ला गोबध होते देखकर ग्रामीण लोग आह भरकर चुप हो जाते ।

समय व्यतीत होता गया, अंग्रेज़ों ने पंजाब को भली भांति अपने अधिकार में कर लिया । दीवान मूलराज मुल्तान, राजा चतुरसिंह अटारी, राजा शेर सिंह अटारी, राजा सूरत सिंह मजीठिया, सरदार लाल सिंह मूराड़िया, दीवान बूटा सिंह आदि नेताओं पर सिक्खों की दूसरी लड़ाई में भाग लेने के अपराध में राजनीतिक मुकदमे चलाये गये तथा उन्हें देश निर्वासन का दण्ड दे दिया गया था । 21 दिसम्बर 1849 को महाराजा दिलीप सिंह को पंजाब से देश निर्वासित करके फतेहपुर सीकरी पहुँचा दिया गया। मार्च 1853 में अनुभवहीन दिलीप सिंह को प्रेरित करके उसके केश मुंडवा दिये गये । अंग्रेज़ शासकों ने उसे अपने ईसाई धर्म में दीक्षित कर लिया । अप्रैल 1854 में महाराजा दिलीप सिंह को इंग्लैंड भेज दिया गया।

गोबध की खुली आज्ञा होने के पश्चात् पंजाब में किस प्रकार की परिस्थितियाँ आई, इनकी खोज करने की अभी आवश्यकता है ।

अमृतसर नगर के हिन्दू और मुसलमानों के दिलों में एक दूसरे के विरुद्ध शंका, द्वेष तथा विरोध के भाव अवश्य आ गये। अंग्रेज़ों की विदेशी शासन की राजनीति का सबसे बड़ा शस्त्र था "आपस में लड़ाओ और राज्य

करो"। शहर की जनता में शत्रुता की चिंगारियाँ प्रज्ज्वलित होनी आरंभ हो गई' । 7 मई 1856 को खुला गोमांस बेचने के विषय में एक मुकदमा मि. एफ. कूपर के सामने पेश हुआ ।

बधगृहों के खुलने से पंजाब में कच्चे चमड़े का व्यापार खूब चला। उत्तरी भारत में अमृतसर का नगर चमड़े की सबसे बड़ी मंडी बन गया । इंग्लैंड की चमड़े का व्यापार करने वाली कंपनियों ने अमृतसर में अपने एजेन्ट नियुकत कर दिये । रोगी अथवा वृद्धावस्था के कारण मरे हुए जानवरों के चमड़े तथा जीवित पशुओं को मार कर उतारे हुए चमड़े के मूल्य में बहुत अंतर होता है। एक वर्ष से कम उम्र के बछड़े का चमड़ा तथा हल में जोतने से पहिले के बछड़े का चमड़ा विशेष कामों के लिये प्रयोग में लाया जाता है तथा अधिक मूल्य देता है । इंग्लैंड की व्यापारिक फर्म हिन्दुस्तानी पशुओं का कच्चा चमड़ा यहां से ले जाकर कुछ तो यूरोपीय देशों की मंडियों में बेच देती तथा शेष अपने कारखानों में रंगकर लाभ कमातीं। अमृतसर में मुसलमान शेखों ने व्यापारिक फर्म खोल ली तथा बूचड़ों ने धड़ाधड़ जवान गायें, बैल, बछड़े, वृद्ध बैल तथा वृद्ध गायें मारनी आरम्भ कर दीं। गाय तथा बछड़े का चमड़ा भैंस के चमड़े की अपेक्षा महंगा बिकता है । इनका मांस भी भैंस तथा भैंस के बच्चे के मांस की अपेक्षा अधिक पसन्द किया जाता है। अधिक लाभ कमाने के लिये गाय, बछड़े तथा बैल का ही हलाल करते थे। अंग्रेज़ी शासकों ने प्रत्येक वधगृह में वध किये जाने वाले पशुओं की संख्या तथा उनकी अवस्था पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाये थे। अनुमान है कि वधगृह में मरे हुए पशुओं का चमड़ा, माँस, खुर, सींगों आदि का मूल्य वास्तविक मूल्य की अपेक्षा कम से कम दुगुना होता है । बकरे के मांस से गोमांस केवल एक तिहाई कम मूल्य पर बिकता है ।

थोड़े ही समय में अमृतसर मुसलमान बूचड़ों और चमड़े के मुसलमान व्यापारियों का एक बहुत बड़ा अड्डा बन गया । नगर में मजदूरी करने वाले कश्मीरियों और गरीब मुसलमानों पर भी इसका प्रभाव पड़ा और वे सभी सस्ता गोमांस खाने लगे। दुर्भाग्य से इन वर्षों में लगातार वर्षा न

हुई । आर्थिक संकट आये और सभी चीज़ों का भाव चढ़ गया । अनाज खरीदने के लिए किसान लोगों ने ढोर बेचने आरम्भ किये । गांवों में ढोर सस्ते हो गये। बूचड़ों तथा ठेकेदारों को असीम लाभ होने लगा । अमृतसर नगर में गौमाँस की खपत बहुत बढ़ गई । तथा 90 प्रतिशत मुसलमानों के घर गौमाँस पकने लगा । इसका परिणाम यह हुआ कि अमृतसर, गुरदासपुर तथा लाहौर के ज़िलों में अच्छी जाति की दूध देने वाली गाएं तया जुतने वाले बैल मिलने बन्द हो गये । फलतः गांवों के जाट सिक्ख बैलों के स्थान पर भैंसे हलों में जोतने लगे।

गुरु की नगरी अमृतसर में बधगृह खुले को 14 वर्ष हो गये थे । किसी भी प्रसिद्ध हिन्दू अथवा सिक्ख ने इसके विरुद्ध आवाज़ नहीं उठाई थी । श्रमिक-निर्धन हिन्दू तथा सिक्ख उन मोहल्लों में रहते थे जहां मुसलमान प्रतिदिन गोमांस पकाते थे तथा जूठी हड्डियां कूड़े में फेंक देते थे। कौए तथा चीलें इन हड्डियों को उठाकर हिन्दू तथा सिक्ख पड़ोसियों के घरों की मुंडेरों पर जा बैठती थीं । नोचकर पक्षी हड्डियों को वहीं छोड़ जाते और इस प्रकार मुसलमानों के पड़ोस में रहने वाले निर्धन हिन्दू सिक्खों के घर गाय की हड्डियों से भ्रष्ट हुए रहते थे । दूसरी ओर शहर के मुसलमानों के हौसले बहुत ही बढ़े हुए थे, क्योंकि गौ भक्षक अंग्रेज़ शासक इस विषय में सदा ही मुसलमानों का पक्ष लेते थे। सारे मुसलमान एक थे तथा हिन्दू, सिक्ख बिखरे हुए । पुरानी कहावत है, "कि 100 मुसलमान संगठित होकर एक हुक्के पर इकट्ठे बैठ सकते हैं, परन्तु दो हिन्दू अथवा दो सिक्ख नदी पार करने के लिये एक नौका में इकट्ठे चढ़ना पसंद नहीं करते ।"

पहले पहले मुसलमान बधिकों ने गोमांस शहर में लाकर छुप छुप कर बेचना आरंभ किया, क्योंकि इतने अधिक ग्राहक शहर से बाहर जाकर बधगृह से मांस नहीं ला सकते थे । इसके पश्चात् मुसलमानों के मोहल्लों में विशेष स्थानों पर गौ माँस बिकने लगा । धीरे-धीरे मुसलमानों के हौसले इतने बड़े कि वह गोमांस को टोकरी में डाल कर बेचने लगे। गली-मोहल्लों में, आवाज़ें लगाकर बेचते तथा कई बार हिन्दुओं के मोहल्लों में टोकरा उठा

कर फिरते हुये, उन मोहल्ले में रहने वाले एक आध मुसलमान को गोमांस बेच जाते।

मई 1863 में एक मुसलमान हिंदुओं के मोहल्ले में गौ मांस बेचता पकड़ा गया । यह मुकदमा दो आनरेरी मेजिस्ट्रेटों के सामने आया, जिनमें से एक हिन्दू तथा दूसरा मुसलमान था । दोनों मैजिस्ट्रेटों ने उसको अपराधी सिद्ध करके 3 महीने की कैद तथा 50 रु जुर्माना का दंड दे कर मिसल डिप्टी कमिश्नर के पास भेज दी । मिसल में मजिस्ट्रेटों ने यह भी लिखा, कि नगर में गौमाँस बेचने की आज्ञा कदापि नहीं है और न ही ऐसा पहिले कभी हुआ है । मेजर फेरिंगटन ने इस मुकदमे का रूप ही बदल दिया तथा लिख दिया कि इस प्रकार का कोई आदेश अथवा सूचना दफ्तर के रिकार्ड (कागज़ों)में नहीं मिली। जुडीशल कमिश्नर ने 29 जून 1863 को अपील का फैसला सुनाते हुए दोषी को बरी कर दिया तथा निर्णय का नोट लिख दिया कि "न्याय की सम्मति के अनुसार नगर अमृतसर में गोमाँस का बेचना बन्द नहीं किया जा सकता। यदि पहिले कभी ऐसा आदेश दिया गया है तो वह स्थानीय अथवा अस्थायी होगा, उसकी कानूनी हैसियत कुछ नहीं हो सकती । यह दलीलें देकर उस मुसलमान को साफ बरी कर दिया गया । कमिश्नर तथा जुडीशियल कमिश्नर ने यह सब कुछ स्वेच्छाचार ही किया था तथा पंजाब सरकार से कोई स्वीकृति अथवा सम्मति नहीं ली गई थी ।

मुसलमान वधिकों तथा गोमांस बेचने बालों ने इस मुकदमे के फैसले वाले हुक्म से लाभ उठाया। गोमांस समस्त शहर में लाया जाने लगा तथा टोकरों में डाल कर हिन्दू बहुसंख्यक वाले मोहल्लों में भी आवाज़ें लगाकर मुसलमान ग्राहकों को बेचा जाने लगा । बकरे का मांस बेचने वाले मुसलमान कसाई नफा कमाने के लिये कई बार गौमांस बकरे के मांस में मिलाकर हिन्दू ग्राहकों को बेच देते । उस समय शहर में सिख झटकइयों की दुकानें कम थीं तथा बहुत से हिन्दू और सिख मुसलमान कसाइयों की दुकानों से ही हलाली मांस खरीद कर खा लेते थे । आजकल भी शहरों में बसने वाले हिन्दू, मुसलमानों की दुकानों से हलाल मांस खरीद कर खा जाते हैं ।

नवम्बर 1864 में शहर के हिन्दू और मुसलमानों में शहर के अंदर गौमाँस बेचने के प्रशन पर फिर तनातनी बढ़ी । इस मुकदमे की मिसिल अभी तक लेखक ने नहीं देखी । सन 1869 में अमृतसर की म्युनिसिपल कमेटी ने पशु के कटे हुए सिर पर आठ आने टैक्स लगा दिया । अप्रैल 1871 में गोहत्या तथा शहर में गोमांस बिकने पर हिन्दू मुसलमानों में फिर झगड़ा हो गया । 3 अप्रैल को हिन्दू-मुसलमानों में दंगा होते होते रह गया । भेजर डब्ल्यू . जी. डेविड ने होशियारी से अवसर को संभाल लिया । 24 अप्रैल वाले दिन भाई देवा सिंह सेवक भाई वीर सिंह नौरंगवादी ने गाय की हड्डी दरबार साहब के मन्दिर में श्री गुरु ग्रन्थ साहब के सामने रख दी और संगत को बतलाया कि यह हड्डी उसने पवित्र मन्दिर की सीमा में पड़ी हुई उठाई हैं। इस पर शहर के हिन्दू सिक्खों में बड़ा जोश फैल गया तथा साम्प्रदायिकता की दबी हुई आग फिर भड़क उठी । हिन्दुओं तथा सिक्खों की टोलियाँ इकट्ठी होने लगीं । रईसों को छोड़ कर शेष हिन्दू और सिक्ख जनता की ओर से यह माँग की गई कि गुरु की पवित्र नगरी में गौ हत्या बिलकुल बन्द की जाये। छोटी-छोटी बातों की आड़ में शहर में हिन्दू- मुस्लिम दंगे होने आरम्भ हो गये । सरदार मंगल सिंह रामगढ़िया ने भाई देवा सिंह को पकड़वा दिया । भाई देवा सिंह पर विधान की विशेष धाराओं के अनुसार मुकदमा चला तथा उसको 1871 में तीन साल कड़ी कैद का आदेश हुआ। साथ ही एक मास की कोठरीबन्द कैद भी सुनाई गई ।

8 मई की रात को नगर में फिर शोर मच गया तथा हिन्दुओं ने तीन कश्मीरी मुसलमानों को पीट दिया । दंगा छिड़ते ही ज़िला सुपरिटेंडेंट पुलिस मि. टर्टन स्मिथ घटनास्थल पर पहुँच गया और लोग तितर बितर हो गये । मि. स्मिथ को किसी ने ढेला दे मारा । इस समय हिन्दुस्तानी मजिस्ट्रेट अथवा म्युनिसिपल कमेटी के हिंदुस्तानी सदस्यों में से कोई भी सुपरिटेंडेंट पुलिस के साथ नहीं था । इस बात का पता लगने पर डिप्टी कमिश्नर ने कमेटी के समस्त हिन्दुस्तानी सदस्यों तथा मोहल्ले के चौधरियों को अपनी कोठी पर बुलाया और सूचनायें दी ।

9 मई को डिप्टी कमिश्नर ने शहर के सम्मानित व्यक्तियों की एक बैठक बुलाई। इसमें शहर के निवासी हिंदू-मुसलमानों को आपस में सम्बन्ध रखने तथा प्रेम से रहने की प्रेरणा दी गई।

दंगा करने के अपराध में 6 मई को 22 हिन्दुओं पर मुकदमा चलाया गया । मुकदमे का प्रभाव शहर के मध्य तथा निम्न वर्ग के हिन्दुओं और सिक्खों पर पड़ा । उन्होंने मुसलमानों का व्यापारिक बहिष्कार करना आरम्भ कर दिया । शहर के कसेरों (तांबे पीतल के बर्तन बनाने व बेचने वालों ने) मुसलमानों के घरों के टूटे-फूटे पीतल तांबे के बर्तन लेकर बदले में नये देने बन्द कर दिये । उनका विचार यह था कि मुसलमान इन बर्तनों में गोमांस पकाते हैं । साथ ही साथ नगर के हिंदुओं ने आषाढ़ की निर्जला एकादशी के दिवस पर दान करने के लिये मिट्टी के घड़े तथा सुराहियाँ आदि मुसलमान कुम्हारों से खरीदने का भी बहिष्कार कर दिया ।

अमृतसर नगर की इस प्रकार बिगड़ी हुई स्थिति को देखकर पंजाब सरकार के अंग्रेज़ कर्मचारी दिल ही दिल में बहुत खुश थे, कि उनका हिन्दू मुसलमानों में फूट डालने के लिए चलाया हुआ तीर ठिकाने पर जा बैठा है, और गौ हत्या के प्रश्न पर अब हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरे की जान के दुश्मन बन चुके हैं। भड़कती हुई आग को हवा देने के लिए मेजर डब्ल्यू. जी. डेविस, कार्यवाहक कमिश्नर अमृतसर डिवीजन, 20 मई 1871 शनिवार वाले दिन अमृतसर पहुँच गया । इससे पहले म्युनिसिपल कमेटी की एक बैठक में हिन्दू और मुसलमान सदस्यों ने यह सहमति दी थी कि अगले वर्ष से शहर के रहने वालों के हाथ गोमांस बेचने के लिये बूचड़खाने का ठेका बन्द कर दिया जावे । यूरोपियन सदस्य इस मत पर बहुत दुखित हुए थे । डिप्टी कमिश्नर ने इस विषय पर दोबारा सोच विचार करने के लिये 22 मई को पुनः कमेटी की बैठक बुलाई हुई थी । कमिश्नर ने अमृतसर पहुँचते ही 22 तारीख की बैठक के लिये रास्ता साफ करने के लिए शहर के बड़े-बड़े, धनवान हिन्दू-सिख नेताओं को अपने पास बुला कर समझाना आरम्भ किया ।

22 मई की बैठक में कमिश्नर ने अमृतसर नगर में गौ हत्या के

विषय पर स्वयं भाषण दिया । उसने बताया कि 24 मार्च 1847 वाला आदेश जिसके द्वारा अमृतसर में गौ हत्या बन्द की गई थी केवल उसी समय के लिये ही लागू किया गया था, जब तक पंजाब की हुकूमत महाराजा दिलीप सिंह के नाम पर चलाई जा रही थी। सिक्ख राज्य में क्योंकि कोई गौ हत्या नहीं होती थी, इसलिए अंग्रेज़ी सरकार ने भी सिक्ख महाराजा के सम्मान के लिए गौहत्या पर प्रतिबंध लगा दिया था, परन्तु जब सिक्ख राज्य समाप्त हो गया तो पंजाब हिन्दुस्तान के अंग्रेज़ी राज्य का भाग बन गया था । तब से यह प्रतिबंध सर्वथा हटा दिया गया था। उसने यह भी कहा कि गवर्नर जनरल की 20 मई 1846 की घोषणा में अंग्रेज़ी शासन का यह नियम बताया गया है कि "किसी व्यक्ति को अन्य व्यक्ति के धर्म में हस्तक्षेप करने की आज्ञा नहीं दी जाएगी ।' इसी घोषणा अनुसार पंजाब के नगरों तथा कस्बों में बूचड़खाने खोले गये है । कमिश्नर ने अंत में धमकी देते हुए कहा कि "अमृतसर में बूचड़खाना हर हालत में जारी रहेगा । सरकार हिन्दुओं को मुसलमानों की ओर से जानबूझकर दिल दुखाने वाली बातों से बचायेगी तथा हिन्दू-सिक्खों को भी दृढ़ता से गौ हत्या के सम्बंध में दंगा अथवा झगड़ा खड़ा करने से रोकेगी। यदि हिन्दुओं सिक्खों की गौमांस की विक्री के सम्बंध में उचित शिकायतें अथवा मांगें हैं, तो वह ठीक ढंग से सरकार के पास पेश करें और सरकार उन पर विचार करके शिकायतों को दूर करने का यत्न करेगी ।" कमिश्नर के इस भाषण का यह प्रभाव पड़ा कि नगरपालिका के मुसलमान सदस्य अंग्रेज़ी सदस्यों से मिल गये । कुछ हिन्दू सदस्यों ने वोट ही न दिये और केवल थोड़े से हिन्दुओं ने इसके विरुद्ध वोट दिये । वधगृह के ठेके को जारी रखने का विचार पास कर दिया गया । सरकारी समर्थन तथा स्वीकृति होने पर मुसलमान बूचड़ों, मुसलमान ठेकेदारों तथा मुसलमान व्यापारियों ने गोबध का काम अधिक तेज़ी से आरम्भ कर दिया ।

नगर की साधारण हिन्दू-सिख जनता में इस प्रस्ताव के पास होने पर अत्यन्त क्रोध और जोश फैल गया । प्रस्ताव के पास होने के दिन से लेकर एक सप्ताह तक कमिश्नर तथा डिप्टी कमिश्नर नगर में चक्कर काटते रहे

और प्रतिदिन देशी अफसरों, धनवानों तथा रईसों को बुलाकर वध गृह के विषय में समझाते बुझाते रहे ।

मुसलमान कुम्हारों से निर्जला एकादशी के लिये घड़े व सुराहियाँ न खरीदने, तथा कसेरों का मुसलमान ग्राहकों को टूटे तांबे पीतल के बदले नये बर्तन न देने के आंदोलन, बल पकड़ते गये । इस पर कमिश्नर ने सरदार हरचरन दास, ज्ञानी प्रद्युम्न सिंह तथा खाँ मुहम्मद शाह और नगर के अन्य अमीर पुरुषों को बुलाकर कहा, कि मुसलमानों से व्यापारिक असहयोग का आन्दोलन बन्द होना चाहिये । दूसरे दिन इन भद्र पुरुषों ने कमिश्नर साहब को रिपोर्ट दी, कि "आली जनाब हुजुर वाला की कृपा दृष्टि से सब कुछ ठीक हो गया है।" साथ ही साथ इन्होंने कमिश्नर के सम्मुख दो प्रण-पत्र भी ले जाकर रक्खे । एक मुसलमान कुम्हारों तथा हिंदुओं के मध्य, दूसरा हिन्दू कसेरों और मुसलमानों के मध्य । मगर अंग्रेज़ कमिश्नर तथा डिप्टी कमिश्नर ने हुकूमत के इन पुश्तैनी बूट चाटने वाले टोडियों की बातों पर विश्वास न किया और इनकी बातों की फिर तफ्तीश की ।

3 जून को कमिश्नर ने टाउन हॉल में एक दरबार किया, जिसमें नगर के बड़े-बड़े लोग तथा मीर मोहल्ला बुलाये गये । कमिश्नर ने इस दरबार में एक लम्बा घोषणा पत्र पढ़ा जिसमें वध ग्रह के सम्बन्ध में सरकारी आदेशों तथा नीति की व्याख्या की गई थी ।

4 जून तक कमिश्नर अमृतसर में रहा तथा इन दो सप्ताहों में कोई हिन्दू मुस्लिम दंगा न उठा । कमिश्नर ने जाने से पहले यह आदेश दिया कि बूचड़ों तथा इस पेशे से संबंधित लोगों को अच्छी तरह समझा दिया जाए कि उन्हें कोई ऐसा काम न करना चाहिए जिससे हिन्दू तथा सिक्खों के हृदय पीड़ित हो ।

भाई देवा सिंह के कैद होने, 22 हिन्दुओं पर मुकदमा चलने तथा कमिश्नर के दरबार में घोषणा करने पर कि "अमृतसर में गोबध कदापि बंद नहीं किया जा सकता", हिन्दुओं और सिक्खों के मध्यवर्ग तथा निम्नश्रेणी के लोगों के हृदयों में यह बात भली भांति बैठ गई, कि अंग्रेज़ शासक

खुल्लमखुल्ला मुसलमानों की सहायता करने पर तुले हुए हैं । दो जून को एक बूचड़, जिसको नगर में गोमांस बेचने के अपराध में तीन महीने की कैद हुई थी , अपील में बरी हो गया । इस पर मुसलमानों ने अंग्रेज़ शासकों के बल पर गप्पें उड़ानी आरंभ कर दीं कि शहर में खुल्लम खुल्ला गोमांस बेचने के लिये चार दुकानें खोलने की स्वीकृति मिलने वाली है और एक दुकान दरबार साहिब वाले घंटाघर के पास ही होगी । इससे मुसलमानों के तेवर बढ़ गए तथा बूचड़ों ने खुले रूप में नगर में गौमांस लाना आरम्भ कर दिया जहाँ से बेचने वाले टोकरों में रखकर गली मोहल्लों में बेचते फिरते । इससे गरीब हिन्दुओं और सिक्खों का नाक में दम आ गया ।

धर्म हानि को हटाने के लिये निर्धनों की बाज़ी का अन्तिम दाव जान से होता है। शहर के रहने वाले हिन्दू शोर बहुत मचाते थे, बातों से पर्वत गिराते थे, तर्क से आकाश फाड़ते थे, परन्तु जब मरने मारने की बात आती थी तो जल पर बने हुये बुदबुदे की भांति अंतर्ध्यान हो जाते थे । शहर के सिक्खों के नेता भाई प्रदुमन सिंह जी ज्ञानी थे, जो श्री दरबार साहिब के भीतर गुरु ग्रन्थ साहब की उपस्थिति में मदिरा पीकर कथा किया करते थे । बाकी सब पेट पूजने वाले पुजारी, ग्रन्थी, अरदासिये, सरकारी जागीरदार तथा वेतन में हिस्सा लेने वाले नौकर । नगर में सिक्खों की संख्या बहुत ही कम थी तथा वह भी अरोड़ों की, जो दुकानदारी से उदरपूर्ति करते थे । बाबा फूला सिंह के बुर्ज वाले पांच-सात निहंग सिंह भांग में मस्त हर बात से उदासीन थे । कभी-कभी कोई निहंग सिंह एक आध मुसलमान बूचड़ को तुरकड़ा कहकर लड़ाई झगड़ा कर लेता था, परन्तु गुरु की नगरी में से गोहत्या का कलंक हटाने के लिए बलिदान करने का साहस किसी को नहीं होता था । अंग्रेज़ शासकों की सख्तियों के होते हुये भी नामधारी आन्दोलन जोरों पर चल रहा था, तथा 1871 तक गाँवों में जाटों के लाखों कुटुम्ब अमृत छककर नामधारी तथा उनके हिमायती बन चुके थे। अमृतसर में गोबध होने से धर्म के अपमान की बात नामधारियों के हृदय में घूमने लगी थी । अंग्रेज़ी सरकार नामधारियों को अपना तीव्र वैरी समझती थी । सरकारी आदेशों के अनुसार नियुक्त किये गये गुरुद्वारों

के संरक्षकों, महन्तों, पुजारियों तथा ज्ञानियों ने अंगेज़ शासकों की गुप्त आज्ञानुसार गुरुद्वारों में नामधारियों का प्रवेश करना बन्द करवा दिया था। इस समय केवल नामधारी सिक्खों का ही एक ऐसा दल था, जिसके सदस्य विदेशी शासकों तथा अंग्रेज़ों को अत्यधिक घृणा करते थे और भारत को इनकी दासता से स्वतंत्र कराने के प्राणों पर डटे हुए थे ।

अमृतसर में हिन्दुओं तथा सिक्खों की दुर्दशा हो रही थी । मुसलमानों तथा बूचड़ों ने इनका नाक में दम कर रखा था। नगर में कुछ नामधारी सिक्खों के घर भी थे । एक गरीब किरती भाई लहना सिंह बढ़ई नामधारी सूबा[8] के घर गुरु की पवित्र नगरी के माथे से वध गृह के कुष्ट कलंक को दूर करने के विचार होने लगे । निश्चित हुआ कि शीश दिये जावें तथा सर्व प्रथम आक्रमण वध गृह के बूचड़ों पर ही किया जाए । जब से कमिश्नर ने खुले दरबार में बूचड़ों की पीठ ठोंकी थी तब से उन्होंने नगर में उधम तथा भय फैला रखा था । रविवार वाले दिन आषाढ़ की संक्रांति का मेला तथा स्नान भी आ गया । बाहर से कई नामधारी सिक्ख तथा उनके अन्य साथी भी पहुँच गये । बूचड़ों के अत्याचार देख तथा सुनकर सबको जोश आ गया । दस मिति से शहर वाले नामधारी सिंह बूचड़ों का घात करने के उपाय कर रहे थे। इस काम को पूरा करने के लिए वह तोप के चलने तथा नगर के द्वार बंद होने से पहले ही बाहर निकल जाते थे ।

परन्तु घात करने का अवसर नहीं मिलता था। 14 तथा 15 जून की रात को प्रात:काल ही मंगल के दिन सिक्ख दीवार फांद कर वधगृह के अन्दर प्रवेश कर गये और उन्होंने पीरा, जीवन, शादी और अमामी चार बधिकों को उसी स्थान पर कत्ल कर दिया । कर्मदीन, इलाही बख्श तथा खीबा इन तीनों को अधमरा करके बाहर निकल आये । यह तीनों बूचड़ पश्चात् बच गये । सिक्खों ने इस आक्रमण में परसे, गंडासे, तथा तलवारों का प्रयोग किया । कृपाण तथा तलवार रखने के लिये लाइसेंस लेना पड़ता था । अमृतसर पुलिस

---

[8] सूबा नहीं, अमृतसर नगर की सांगत के मुखिया थे ।

लाइन के सिपाही लाल सिंह नामधारी ने पुलिस लाइन में से तलवार लाकर दीं। बूचड़ों को उनकी करतूतों का दंड देकर सिंह अपने ठिकानों को चले गये । इस आक्रमण में बीहला सिंह संधू नारली गाँव वाला, लहना सिंह लोपोके, फतह सिंह भाटिया अमृतसर का, मोहड़े का हाकिम सिंह ब्राह्मण, अमृतसर का लहना सिंह बढ़ई, गाँव ठट्ठा का झण्डा सिंह जाट, चाहलाँ का लक्ष्मण सिंह, मरहाना का भगवान सिंह, सम्मिलित थे ।

बूचड़ों के कत्ल होने पर नगर के मुसलमानों के हृदयों में भय छा गया । डिप्टी कमिश्नर ने दोषियों को पकड़ने के लिये कड़े आदेश दिये । शहर के बड़े-बड़े लोगों को कहा गया कि वह दोषियों को पकड़वाने के यत्न करें । 24 जून तक पुलिस तथा तहसीलदार ने बहुत से आदमियों को शक में पकड़ा, परन्तु अपराधियों का कुछ पता न चला । सरकार ने यह सोचकर कि अमृतसर की पुलिस इस मुकदमें की छानबीन में सफल न हो सकेगी, पंजाब के सब से अधिक चालाक तथा सुप्रसिद्ध जासूस पुलिस अफसर मिस्टर क्रिस्टी को इसकी छानबीन के लिये भेजा । मि. क्रिस्टी 24 जून 1871 को अमृतसर पहुँचा, उसने आते ही सन्देह में पकड़े हुए सब लोग छोड़ दिये । छानबीन करने के लिये होशियारपुर ज़िला की पुलिस के इंस्पेक्टर फजल हुसैन, डोगरमल डिप्टी इन्सपेक्टर, अतर सिंह, सुर्जन सिंह तथा मैय्या सिंह तीन सारजेन्ट तथा आठ कांस्टेबल अपने स्टाफ के लिये बुलाये। कोतवाली से पृथक एक मकान लेकर इस स्टाफ ने छानबीन आरम्भ की और दोषियों का पता व निशान देने वाले को एक हज़ार रुपये इनाम देने की घोषणा की । राजा साहिबदयाल, सरदार मंगल सिंह रामगढ़िया, सरदार भगवान सिंह, राय मूल सिंह, खान मुहम्मद शाह आदि से सम्बन्ध स्थापित करके उनसे हर प्रकार की सहायता के प्रण लिये।

खान मुहम्मद शाह बहादुर को दिन रात यही चिंता थी, कि किसी न किसी तरह उसके धर्म-भाई बूचड़ों के घातकों का पता चल जाए । उसने सरदार निहाल सिंह आहलूवालिया के साथ परामर्श किया। निहाल सिंह मदिरा पीने, कबाब खाने तथा वेश्या गमन में खान बहादुर का गहरा मित्र

था। निहाल सिंह दो और आदमियों गुरमुख सिंह तथा काहन सिंह को खान बहादुर के पास ले आया । यह विचार बनाया गया कि गुरुमुख सिंह तथा काहन सिंह लोगों में यह बात उड़ा दें कि अमृतसर के बूचड़ों का घात करने वालों में वह भी सम्मिलित थे । खान बहादुर ने उन्हें सरकारी इनाम और इसके अतिरिक्त और धन भी देने का पक्का वचन दिया। परन्तु यह दोनों इस बात से भी डरते थे, कि यदि वह दूसरे शहरों में यह बात कहते हुए पकड़े गये, तो वहाँ की पुलिस उन्हें वास्तविक दोषी समझ कर कहीं जेल में न बन्द कर दे । इससे बचने के लिये मि. क्रिस्टी ने उन्हें अपने हस्तलिखित गुप्त पत्र दिये, जिनका ऐसा समय आने पर वह प्रयोग कर सकते थे । फिरते फिराते वह कुछ समय पश्चात् अमृतसर लौट आये । उनके निशान देने पर लहना सिंह तथा रूढ़ सिंह दो कूके पकड़े गये । इन दिनों में ही झण्डा सिंह ठठेवाला भी संदेह में पकड़ा गया, परन्तु मि. क्रिस्टी ने तीनों को ही छोड़ दिया ।

मि. क्रिस्टी को एक सप्ताह तक अपराधियों का कुछ पता न चल सका । उसने नगर के सबसे बड़े हिन्दू बदमाश मोहरी को अपनी सहायता के लिये साथ मिला लिया । पुलिस के रोज़नामचों की तफतीस होने लगी । शहर के थाने में करीम बक्श तथा पीर बक्श दो पुलिस कांस्टेबलों की 21 जून को लिखाई हुई निम्नलिखित रिपोर्ट निकली । "उन दोनों ने हीरा भाटड़ा को उस दिन बूचड़खाने के पास संदेहास्पद स्थिति में फिरते देखा था ।" इस रिपोर्ट के आधार पर हीरा भाटड़ा को मि. क्रिस्टी ने स्पेशल स्टाफ वाले निवास स्थान में 2 जुलाई को बुला लिया । हीरा भाटड़ा किसी समय सरदार भगवान सिंह के पास नौकर रहा था । सरदार ने तत्काल कह दिया कि हीरा बदमाश है । घायल बूचड़ों ने हीरा को पहचानकर बयान दिये कि कत्ल से कई दिन पहिले यह वधगृह के पास हमारे साथ कुछ सन्दिग्ध बातें करता रहा था । हीरा को जब स्पेशल पुलिस ने अपने तरीकों से दुःख दिया तो वह 3 जुलाई को वादा मुआफ' गवाह बनकर शेष दोषियों के नाम बताने के लिये तैयार हो गया । हीरे ने आहिये बदमाश का नाम ले दिया । आहिये की जब मरम्मत हुई तो उसने भी 7 जुलाई को अन्य दोषियों के नाम बताने के लिए हाँ कर

दी । आहिये को भी वादा मुआफ गवाह बना लिया गया। इन दोनों ने मिलकर सेठ जैराम दलाल का नाम ले दिया । पुलिस ने सेठ जैराम की भी खूब मरम्मत की । उसे लाल मिर्चों तथा विष्ठा की धूनियाँ दी । औंधा लटकाकर जूतों से उसके चूतड़ों की पिटाई की गई । उसकी गुदा में डण्डे दिये गये और लाल मिर्च डाली गई। कई दिन की कठिनाइयां सहन करने के पश्चात् उसने भी दस या 12 जुलाई को अपने आप को कत्ल के दोषियों का साथी मान लिया। अमृतसर का डिप्टी कमिशनर मि. बर्च सेठ जैराम को वायदा मुआफ गवाह बनाने के पक्ष में नहीं था, परन्तु मि. क्रिस्टी ने उच्च अफसरों से इसको वायदा मुआफ गवाह बनवा लिया । डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस कप्तान मि. क्रिस्टी के छानबीन करने के ढंगों को अच्छा नहीं समझते थे । बदमाश मोहरी मि. क्रस्टी की मूंछ का बाल बन गया था । नगर में धड़ाधड़ गिरफ्तारियाँ आरम्भ हो गई थी। स्पेशल स्टाफ वालों ने एक बड़ा हौज़ बनवाकर उसमें मेहतरों से विष्ठा डलवा दिया था। जिस पर भी दोषी होने का शक पड़ता उसको ही इसमें खड़ा कर दिया जाता । सोने न दिया जाता । दिन रात खाट के इधर उधर टांगें चौड़ी करके खड़ा किया जाता तथा नाना प्रकार के दुःख दिये जाते । दोषी बनाये गये लोग इन अत्याचारों से डरते फांसी के रस्से से लटक कर एक ही बार मर जाने को अच्छा समझते। 20 जुलाई तक मि. क्रिस्टी ने अपनी छानबीन समाप्त कर दी।

21 तारीख को इन तीन 'वायदा मुआफ' गवाहों को छोड़कर शहर अमृतसर के बारह आदमियों, सन्तराम, रामकिशन, मन्ना सिंह निहंग, ज्वाला सिंह , पन्नाजी, मूला, निहाल सिंह , मैय्या, सुन्दर सिंह, भूप सिंह, टेका तथा शोभा का बधिकों की हत्या के मुकदमे में मजिस्ट्रेट के न्यायालय में चालान कर दिया गया । झूठे गवाह बनाये गये । शपथें दिलवा दिलवा कर गवाहियां दिलवाई गई तथा मजिस्ट्रेट साहब ने 25 जुलाई को 12 दोषियों की मिसिल सम्पूर्ण करके डिप्टी कमिश्नर के पास भेज दी । 26 जुलाई को डिप्टी कमिश्नर ने यह मिसिल सेशन जज के पास फैसले के लिये भेजी ।

इस मुकदमे के दिनों में ही 15 जुलाई को आधी रात के समय

रायकोट ज़िला लुधियाना में वधगृह पर आक्रमण हुआ, जिसमें चार आदमी मारे गये तथा 7 अन्य बुरी तरह घायल हुए । अंग्रेज़ शासकों तथा अफसरों के हृदय त्रस्त हो गये तथा उन्होंने इस ज्वाला को प्रज्वलित हो उठने के पूर्व ही बुझाने के प्रबंध आरम्भ कर दिये । पंजाब के डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस ने लुधियाना पहुँचने के पहिले ही यह निश्चय कर लिया था कि बधिकों की हत्याएं नामधारियों अथवा कूकों ने की है । लोगों के दिलों में हकूमत का दबदबा बिठाने के लिए 22 जुलाई को महाराजा पटियाला की सहायता से गांव पित्थों रियासत नाभा तथा मंडी रियासत पटियाला से पकड़े गये सात कूकों पर 25 अथवा 26 जुलाई को बसियां की कोठी में मुकदमा चलाया गया। 27 जुलाई को सेशन जज ने अपराधियों को फांसी की सजा दी तथा एक अगस्त को भाई मस्तान सिंह, भाई गुरुमुख सिंह तथा भाई मंगल सिंह को वधगृह के पास रायकोट में फांसी दे दी गई । इस घटना का वृतांत आगे दिया जा रहा है :--

अमृतसर के सेशन जज ने अभी तक मुकदमा सुनना भी आरंभ नहीं किया था कि कर्नल बेली , डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस पंजाब लुधियाना से 27 जुलाई को एक तार डिप्टी कमिश्नर अमृतसर के नाम लेकर पहुंचा कि अमृतसर के बधिकों के घातकों का पता चल गया है तथा वह शीघ्र ही वायदा मुआफ गवाह को साथ लेकर अमृतसर आ रहा है । कर्नल बेली 15 जुलाई की रात से रायकोट में बधिकों की हत्या की छानबीन के संबंध में ज़िला लुधियाना में पहुंचा हुआ था ।

2 अगस्त को कर्नल बेली गुलाब सिंह 'वायदा मुआफ' गवाह को साथ लेकर अमृतसर पहुँच गया । गुरु राम सिंह जी के पास इन मुकदमों के समाचार गाँव भैणी में पहुँचते रहते थे । रायकोट वाले मुकदमे में उन्हें स्वयं बसीयां जाना पड़ा था जहाँ उन्होंने वायदा मुआफ गवाह गुलाब सिंह के झूठ को नंगा कर दिया था। जब उन्होंने देखा कि अंग्रेज़ शासक बूचड़ों की हत्या के कारण निर्दोष मनुष्यों को ही फाँसी पर लटकाने लगे हैं तो उन्होंने आदेश दे दिया कि निर्दोष लोगों को फांसी से बचाने के लिये नामधारी

अपने दोष को स्वीकार कर लें । इस पर भाई बीहला सिंह तथा उसके साथियों ने स्वयं न्यायालय में उपस्थित होकर अमृतसर वाली घटना के दोष को अपने सिर ले लिया। 2 अगस्त से 7 अगस्त तक पुलिस ने मुकदमा तैयार करके मजिस्ट्रेट को प्रस्तुत किया। मजिस्ट्रेट ने गवाहियां लेकर बीहला सिंह संधू नारली, फतेह सिंह भाटड़ा दुकानदार अमृतसर, हाकिम सिंह पटवारी मोहड़ा, लहना सिंह पुत्र मुसद्दा सिंह बढ़ई अमृतसर, लहना सिंह लोपोके को भारतीय दंड विधान की धारा 302 के अनुसार तथा लाल सिंह, लहना सिंह को भारतीय दंड विधान की धारा 106 तथा 302 अनुसार सेशन जज के पास चालान कर दिया । मेहर सिंह लोपोके, झण्डा सिंह गांव ठट्ठा तथा लक्ष्मण सिंह गांव चाहल ज़िला गुरदासपुर तीनों को भगोड़े घोषित किया गया । मि. डब्ल्यू- जे. डेविस सेशन जज ने सरदार रणजोध सिंह, खान गुलामकादिर तथा बालमुकन्द, तीन अफसरों की सम्मति से 31 अगस्त 1871 को बीहला सिंह जाट , फतेह सिंह भाटरा, हाकिम सिंह ब्राह्मण तया लहना सिंह बढ़ई चारों नामधारियों को फांसी की सजाएं दीं और लाल सिंह तथा लहना सिंह पुत्र बुलाका सिंह दोनों को काले पानी की सजाएं दीं ।

6 अगस्त 1871 को इन चारों प्राणदंड के प्राप्त मनुष्यों की मिसल पंजाब चीफ कोर्ट के जज मि. जे. एस. कैम्पबेल के सामने आई । जज साहब ने प्राणदंड को उचित ठहराया । 11 सितंबर को मि. सी. आर. लिन्डसे ने मि. कॅम्पबेल के निर्णय का समर्थन कर दिया।

15 सितम्बर 1871 वाले दिन इन चारों नामधारियों को अमृतसर में रामबाग के एक विशाल वट के वृक्ष के साथ, फांसी का यन्त्र बांधकर, लोगों के सामने फांसियां दे दी गई । अप्रकाशित पुस्तक 'गुरु बिलास' में इन फांसियों का वर्णन इस प्रकार किया हुआ है :--

“फांसी वाले सिंहों को फिरंगी ने कहा जो कुछ खाना है सो खा लो। जिसको मिलना है मिल लो । सिंहों ने कहा, हमारा खाना परमात्मा, अकाल पुरुष, का नाम है । मरने से हमें कोई भय नहीं, क्योंकि हमारे पूर्वजों ने धर्म हेतु शीश दिये हैं तथा सी तक नहीं की। इसी प्रकार हम शीश देंगे

। सम्बंधी हमारा धर्म है । हमें किसी को नहीं मिलना है । सुनकर फिरंगी चुप रहा , कोई उत्तर न जंचा । सिंहों ने अमृतसर सरोवर में स्नान करके, गुरु ग्रन्थ साहिब का भोग डाला तो तत्काल सिपाहियों ने हुक्म आ सुनाया कि चलो। सिंह ढोलक बजा कर शब्द पढ़ते हुए चले :--

"तेरी शरण मेरे दीन दयाला, सुख सागर मेरे गुर गोपाला ।
करि कृपा नानक गुण गावे, राखो शर्म असाढ़ी जीऊ ॥"

"उन्होंने बड़े सुन्दर ढंग से शब्द पढ़ा और चले । बीहला सिंह ने अरदास की और चले आये फांसी वाले स्थान पर। सिंहों के मुखमण्डल शान्तिमान हो रहे थे। निश्चिन्त थे। उनके मन में मृत्यु का भय नहीं था, निर्भय शब्द पढ़ते हुए, फांसी के तख्ते पर चढ़े। अन्तिम शवासों की अरिदास की और कहा कि हे भगवान तेरे प्रताप से हम (फांसी के) तख्ते पर चढ़े हैं, बड़ी नेकनामी हुई है उच्च पद पाया है ।" बड़े साहस वालों ने फांसी वाले मेहतर को पास नहीं फटकने दिया। अपने हाथों रस्से गले में डाले । हंसों जैसा श्वेत पहनावा पहनकर सत श्री अकाल बुलाई । पैरों के नीचे से पटरा खींचा । अन्तिम हिलोरा आया । प्राण पृथक हुए... ..फाँसी से मृतक शरीरों को उतार कर दाह संस्कार किया गया.....सन्मुख होकर शीश दिये हाय नहीं की । शूरवीरों ने आगे ही पग घरे ।"

नामधारी सिखों के स्वयं ही अपराध को मान लेने पर मि. क्रिस्टी का बहुत निरादर हुआ । लोग पुलिस के दिए कष्टों तथा अंग्रेज़ी शासन के न्याय के सम्बन्ध में कड़ी बातें कहने लगे । नगर में बहुत शोर मचा । नामधारी सिंहों तथा गुरु राम सिंह जी की जय जयकार होने लगी। गुप्तचरों तथा 'वायदा मुआफ' गवाहों ' को लोग बुरा भला कहने लगे । 3 अथवा 4 अगस्त को सेशन जज के सामने मुकदमा पेश हुआ । वायदा मुआफ गवाह जैराम अपने बयानों से मुकर गया । पुलिस ने कार्यवाही करते हुए अदालत से प्रार्थना की, कि इस मुकदमे में वायदा माफ गवाह अपने बयानों पर पक्के नहीं रहे, इसलिये पृथक अभय कोई प्रमाण दोषियों के विरुद्ध उपस्थित नहीं कर सकते । मिसलों के पेट भरकर 6 अगस्त को झूठे वायदा-

मुआफ गवाहों तथा निर्दोष पकड़े गये 12 दोषियों के विरुद्ध मुकदमा वापस ले लिया गया।

5 तथा 9 दिसम्बर 1871 को इस मुकदमे के निर्दोष "मुल्जिम" मन्ना सिंह, राम किशन तथा भैय्या ने सरकार से हीरा, अहिया तथा जयराम के विरुद्ध मुकदमा करने की आज्ञा मांगी ! आज्ञा मिलने पर मन्ना सिंह ने 17 अक्तूबर 1872 को हीरा तथा "आहिया वायदा मुआफ' गवाहों पर मुकदमा कर दिया। हीरा भाग गया तथा आहिया को दो साल कड़ी कैद तथा तीन महीने कोठी बंद के दंड मिले। सेठ जयराम के विरुद्ध भी मुकदमा करने की आज्ञा मांगी गई। यद्यपि डिप्टी कमिश्नर बर्च इस स्वीकृति के पक्ष में था। परन्तु जयराम ने न्यायालय में प्रस्तुत होकर ऐसे बयान देने की धमकी दी , जिससे मि. क्रिस्टी तथा अन्य अफसरों के विरुद्ध दोषियों पर कई प्रकार के दुख: देने के अपराध सिद्ध होते थे । यह आज्ञा न दी गई । राजा साहिब दयाल तथा सरदार बहादुर मंगल सिंह रामगढ़िया ने भी सरकार को यही सम्मति दी, कि सेठ जयराम पर मुकदमा चलाने की आज्ञा नहीं दी जानी चाहिए। 11 अगस्त सन 1873 कों झंडा सिंह गांव ठठृठेवाला पकड़ा गया । 12 अगस्त को उस पर भी मुकदमा चला तथा उसको फांसी दे दी गई।

❋

रायकोट की घटना

पंजाब में अंग्रेज़ों का शासन स्थापित होने तथा मुसलमानों को गोबध की पूरी आज्ञा मिलने पर नगरों के अतिरिक्त मुसलमान लोगों के छोटे छोटे कस्बों में भी बूचड़खाने खुल गये । ज़िला लुधियाना के प्रसिद्ध कस्बा रायकोट में भी सन् 1856 में ज़िला के डिप्टी कमिश्नर मि. रिकटस के आदेश अनुसार नगर की चारदीवारी के बाहर गुरु गोबिंद सिंह जी के गुरुद्वारे की ओर बूचड़खाना खोला गया था । यहाँ के दोनों बूचड़ राँझा तथा बूटा बहुत ही क्रूर थे। वे बघ किये पशुओं की हड्डियाँ पास के जोहड़ में डाल देते थे। मुसलमान गूजरों के पत्तियों (गाँव का एक हिस्सा) की भैसें तथा ढोर इसी जोहड़ से पानी पीते थे । मुसलमान गूजरों के पत्तियों के नम्बरदारों ने इस बात का बूचड़ों पर दावा कर दिया। साथ ही रायकोट की नगरपालिका ने भी बूचड़ों पर नियम भंग करने का मुकद्दमा किया था । इन दोनों मुकदमों में तहसील जगराँव के तहसीलदार ने बूचडों को दस रूपये जुर्माना किया था। बूचड़ों ने जुर्माना के हुक्म के विरुद्ध अपील कर दी थी। रायकोट के आस पास बहुत से गांवों में नामधारी रहते थे । एक दिन कुछ नामधारी गुरुद्वारा में माथा टेकने के लिये गये । वहां के सेवादार ने दुखित हृदय से उन्हें यह बात बताई, कि चीलें तथा कौवे बूचड़खाने से गौओं की हड्डियाँ उठाकर गुरुद्वारा साहिब की दीवारों पर आ बैठते हैं, और इस प्रकार प्रतिदिन पवित्र गुरुद्वारा भ्रष्ट हो जाता है ।अमृतसर की घटना से एक महीने पश्चात् 15 जुलाई 1871 को रायकोट के बूचड़खाने पर आक्रमण हुआ, जिसमें बूचड़खाने में सोये हुये मनुष्यों में से दो की मृत्यु हो गई, तथा सात बुरी तरह घायल हुए ।

16 तारीख को नौ दस बजे के लगभग जब इस घटना का डिप्टी कमिश्नर को पता चला तो उसने ज़िला के पुलिस कप्तान द्वारा सब थानों के अफसरों को आज्ञाएँ भिजवा दीं, कि वह अपने अपने इलाके के बूचड़खाने

तथा बूचड़ों की रात के समय नया हुक्म मिलने तक, रक्षा करें । अप्रकाशित पुस्तक 'सतगुरु बिलास' में यह घटना इस प्रकार वर्णित है।

"8 तलवारें ज्ञान सिंह ने एकत्रित की । इनको वह और उसके साथी ऊंटों की किचावों में रखकर गाँव मोड़ा से छीनीवाल ले आये । रत्न सिंह न गया। शाम सिंह न गया। हवन किया, कड़ाह प्रसाद (हलवा) के गफ्फे लगाये । हलवा बूटा राम के डेरे गाँव ताजपुर में किया । अरदास की। सिख शेरों की भाँति चले । वर्षा हो रही थी । नगर के पास पानी चढ़ा हुआ था । पानी से गुजर कर बूचड़खाने के द्वार पर आये, तो बूचड़ों ने पूछा कौन है ? सिंहों ने कहा हम ऊंटों वाले हैं। हुक्के में आग रखनी है । बूचड़ों ने झट दरवाजा खोल दिया। सावन महीने की संक्रांति को 12 बजे रात को रायकोट के बूचड़खाने में बंधी हुई गायों के रस्से काटकर उन्हें बाहर निकाल दिया। फिर बूचड़ों का सिर काट कर जयकारा लगाते जांये , तलवार मारें और जयकारा लगावें , तीन सिंह तो अन्दर बूचड़ों का वध करते रहे थे, शेष पहरे पर खड़े थे ।"

डिप्टी कमिश्नर मिस्टर कावन तथा डिप्टी सुपरिटेंडेंट पुलिस मि. हैचल 16 जुलाई को दोपहर से पहले लुधियाना से जगरांव पहुंचे । जगरांव से सवारी का प्रबंध करके 5 बजे शाम चलकर काफी रात गए रायकोट पहुंचने पर पता चला, कि जिन बूचड़ों को मारने के लिए यह आक्रमण किया गया था, वह दोनों ही बच गए हैं । बूटा लुधियाना में अपील करने के लिए गया हुआ था और रांझा आक्रमण होने पर घर की छत से कूद कर भाग गया था।

दसौंधी गूजर तथा उसकी स्त्री बस्सी, जो इस आक्रमण में मरे, बूचड़ों के पास पाहुनों के रूप में आये हुए थे । दसौंधी की लड़की रहमती तथा दो छोटे बच्चों के भी घाव आये । बूटा बूचड़ की स्त्री कोणी तथा उसकी दोनों लड़कियाँ बेजा तथा धन्ना भी घायल हुई । अकका राजपूत, जाता-जाता रात को यहीं ठहर गया था, उसको भी तलवार के 13 घाव आये , चौकीदारों का दफादार अहमदखां जो शहर की फसील से बाहर चौकीदारों

के साथ गश्त कर रहा था, शोर सुन कर आया परंतु उस समय आक्रमण करने वाले भाग गये थे। पुलीस का थाना बूचड़खाने से पाँच सौ गज़ ही पर था। हाहाकार यहां तक सुनाई देता था। बड़ा थानेदार मुसलमान था। वह कहीं शहर में सोया पड़ा था तथा छोटा मुसलमान थानेदार ज्वर से ग्रस्त पड़ा था। पुलिस रात को ही उस स्थान पर पहुंची, परन्तु घातकों का कोई निशान न मिला। पीले रंग का एक चिथड़ा मिला, जो तलवार के म्यान का कपड़ा प्रतीत होता था । रात को हवा चलती थी। मशाल जलाई नहीं जा सकती थी । पदचिन्हों का जानकार भी उस समय थाने में नहीं था, इसलिए पुलिस वालों ने पदचिन्हों का पीछा न किया । दूसरे दिन भंगा सिंह तथा भूपा पदचिन्हों को पहचानने वाले दोनों खोजी आठ आदमियों के पद चिन्ह रायकोट से गांव जलालदिवाल रियासत नाभा में ले आये । जलालदीवाल से दो आदमियों के पद चिन्ह पृथक् रास्ते पर हो पड़े, तथा शेष 6 आदमियों के पद चिन्ह रियासत पटियाला के दो गांवों में से होते हुए गांव छीनीवाल पहुंच गये ।

डिप्टी कमिश्नर ने रायकोट पहुंचते ही सुपरिंन्टेंन्डेंट पुलिस लुधियाना को स्थिति से सूचित किया । सुपरिटेंडेंट पुलिस ने सब थानों में लिखित आज्ञाएँ भेज दीं, कि नये आदेश तक ज़िले के बूचड़ों के प्राणों की रक्षा की जावे । साथ ही साथ लुधियाना के सिविल सर्जन को रायकोट आकर घायलों की देखभाल करने के लिये भी लिख दिया । डिप्टी कमिश्नर ने दोषियों का पता देने वाले को एक हज़ार रुपये इनाम तथा 'वायदा मुआफ़" गवाह को दंड से बचाने की घोषणा की। गांव छीनीवाल में पद चिन्ह पहुंचने पर पंजाब गवर्नमेंट ने महाराज महेन्द्र सिंह साहिब पटियाला को तार दिया कि "रायकोट के बूचड़ों के घातकों के पदचिन्ह गांव छीनीवाल, रियासत पटियाला में पहुंच गये हैं, इसलिये लेफ्टिनेंट-गवर्नर साहब आपको कहते हैं, कि आप इन दोषियों को गिरफ्तार कराने के लिये हर प्रकार की सहायता दें ।"

महाराजा पटियाला ने तार मिलते ही दोषियों को पकड़वाने वाले को 250 रु नकद इनाम देने की घोषणा कर दी, तथा रियासत के इलाकों

के नाज़िमों के नाम हुक्म भेज दिये, कि दोषी अति शीघ्र पकड़े जावें । नाभा के महाराजा हीरा सिंह ने लुधियाना में अपने वकील तथा अन्य अफसरों को हुक्म भेजे, कि इस विषय में लुधियाना के अंग्रेज़ अफसरों की हर प्रकार से सहायता की जाए । 20 जुलाई को महाराजा पटियाला ने निम्नलिखित तार पंजाब सरकार को भेजा । "आपका तार मिलने के पहले ही नाज़िमों के नाम इस सम्बन्ध में हुक्म जारी कर दिये गये थे । हमारा वकील इस विषय में आपको पूरी-पूरी सूचना देगा ।"

17 जुलाई को डिप्टी कमिश्नर इलाके के प्रतिष्ठित लोगों अहमद अली गांव तलवंडी तथा शर्फ़ हुसेन जगराँववाला के साथ परामर्श करने और लोगों के बयान सुनने में व्यस्त रहा । इनाम के प्रलोभन में गदाइया नामक व्यक्ति ने आकर बयान दिया, कि 13 तारीख को जब वह लुधियाना की ओर जा रहा था, तो उसने हलवारा के पास दो सिक्ख देखे थे । यह दोनों आदमी 15 तारीख को सायंकाल आक्रमण होने से पहले उसके कुँए पर पानी पीने के लिये आये थे । रांझा बूचड़ की स्त्री नूरी ने भी यही बयान दिया , कि गदाइया की बताई हुई शक्ल वाले दो मनुष्यों ने 15 तारीख को उसके घर के पास से गुजरते हुए यह पूछा था, कि रास्ता किधर को जाता है और जोहड़ में कितना पानी है ? गदाइया ने यह भी बयान दिया, कि ये दो सिख एक हिन्दू साहुकार के सम्बन्ध में पूछ रहे थे तथा मैंने अपने कानों इस हिन्दू को अपने भाई को यह कहते हुए सुना, कि "शीघ्र जाकर यह काम करो ।" इससे मैं ने यह अभिप्राय निकाला, कि "शीघ्र बूचड़ों का वध करो ।" गदाइया शपथ लेता था, कि इसी हिन्दू ने बूचड़ों का सिक्खों से घात कराया था। गांव हलवारा तथा आसपास के गांवों में छानबीन आरम्भ को गई। हिन्दू साहुकार को भी पुलिस वालों ने स्पष्ट बात बताने के लिये कहा। अन्त वही ढाक के तीन पात । पता चला, कि इस हिन्दू ने गदाइया से कर्ज लेना था, तथा 14 तारीख को अदालत ने गदाइया के विरुद्ध डिग्री दे दी थी।

दुर्जन तो ऐसे अवसर की ताक में ही रहा करते हैं । नूरपुर गांव के गाज़ी नामक मुसलमान गूजर ने आकर बयान दिया, कि कत्ल से 12 दिन

पहिले रायकोट का नानक क्षत्री उसके पास आया था और उसने कहा था, कि यदि वह टोला संगठित करके बूचड़ों का वध करदे, तो नानक उसको 250 रु देगा । गाज़ी ने अपने गांव के चौकीदार गंढ़ी से इस सम्बन्ध में पूछा, जिसने इस काम से बचने की सम्मति दी । छानबीन करने के पश्चात् बात यह निकली, कि नानक ने गाजी के विरुद्ध अदालत से कर्ज चुकाने की एक डिग्री ली थी ।

एक और गुप्त दूत नाई ने सौगन्ध खाकर कहा कि जैसे मनुष्यों के नख- शिख का वर्णन गदाइया तथा नूरी ने किया है, उनमें से एक पुरुष अवश्य ही कस्बा जगरांव की तहसील का कूका चपड़ासी है । बेचारा कका चपरासी बुलाया गया और उसकी अत्यधिक पिटाई की गई । निर्दोष का मार-मार कर भुरकुस निकाल दिया, किन्तु पुलिस वाले चपड़ासी से कुछ पता न निकाल सके । आखिर बेचारे को बुरी तरह पिटाई करके छोड़ दिया गया ।

पटियाला तथा नाभा के वकील और अफसर भी अब छानबीन में सम्मिलित किए गए थे । जलालदीवाल तथा छीनीवाल गांवों के कूके पकड़ कर लाये गये । उनके पदचिन्ह पहिले पदचिन्दों से मिलाये गये, परन्तु देवयोग से उनमें से किसी के पद चिन्ह न मिले ।

एक महीने के अन्दर अन्दर अमृतसर, मुरेण्डा, रायकोट आदि स्थानों पर बूचड़ों पर आक्रमण होने से पंजाब सरकार को बहुत चिंता हुई । पंजाब का डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस कर्नल बेली 20 जुलाई से पहले स्वयं रायकोट पहुंचा। यहां पहुँचने से पहिले उसको यह दृढ़ विश्वास था, कि रायकोट के कसाइयों का बध कूकों ने किया है, तथा इसमें गुरु राम सिंह जी का हाथ है ।

कर्नल बेली के रायकोट पहुँचते ही नामधारियों का कट्टर शत्रु आनंदपुर वाला लैहना सिंह निहंग भी उसके पीछे ही वहां जा पहुँचा । उसने भी हत्या का आरोप कूकों पर लगाया तथा शपथ उठाकर अपने बयान डिप्टी कमिश्नर को लिखवा दिये । लैहना सिंह ने इसके पहले दयालगढ़ ज़िला

अम्बाला के तीन कूके पकड़वा दिये थे ।

लैहना सिंह निहंग इस बात का बहुत आग्रह करता था, कि बूचड़ों का घात गुरु राम सिंह जी की आज्ञानुसार हो रहा है । लैहना सिंह के कथनानुसार जब ग्रंथि दल सिंह से यह बात पूछी गई, तो उसने लैहना सिंह की कहानी को झूठा बताया ।

हरनाम दास जो अपने आपको कूका कहता था, उसने भी यही बयान दिये, कि मैंने अपने कानों एक दरबार में गुरु राम सिंह को यह कहते सुना था कि "एक बूचड़ के घात का पुण्य सौ गायों के दान के पुण्य जितना होता है।" हरनाम दास ने यह बयान उस समय दिया, जब उस पर अम्बाला के न्यायालय में एक चौकीदार को मारने का मुकदमा चल रहा था ।

अंबाला में किसी सुन्दर सिंह ने भी यही बयान दिये, परन्तु कप्तान हार्स फोड अंबाला के डिस्ट्रिक्ट सुपरिटेन्डेन्ट पुलिस ने मि. कावन को यह बात बताई कि सुन्दर सिंह के बयान भी हरनाम दास की तरह बिल्कुल झूठे हैं ।

मि. कावन अपनी रिपोर्ट नम्बर 18 तिथि 20 जुलाई 1871 में इन सब बातों का वर्णन करते हुए लिखता है, कि "हत्या बेशक कूकों ने ही की हो, परन्तु मुझे सन्देह है कि गुरु राम सिंह ने कूकों को बूचड़ों का धात करने के लिए आज्ञा दी है :" साथ ही वह लिखता है, "मान लो, कि कत्ल कूकों ने ही किये हों, तो अमृतसर वाले जो अपराधी मुकदमे में फंसे हुए हैं, उनमें से किसी का भी इस घटना में हाथ नहीं । अतः यह बात कि गुरु राम सिंह की आज्ञानुसार बूचड़ कत्ल हुए हो, मानने योग्य नहीं है।" मि. कावन की रिपोर्ट कमिश्नर अम्बाला तथा उसकी नकल होम सेक्रेटरी को भेजी गईं । यह रिपोर्ट पढ़ने के योग्य है। डिप्टी कमिश्नर कावन ने रायकोट से आकर 200 रुपए कोष में से निकालकर पुलिस वालों को दिए तथा सरकार से रायकोट के अलिया नामक जराह को 50 रुपए पुरस्कार देने की स्वीकृति मांगी ।

पटियाला और नाभा की रियासतों के कर्मचारी तन्मय होकर ज़ोर-

शोर से रायकोट के बूचड़ों को कतल करने वालों की खोज करने में जुटे हुये थे । पटियाला का महामंत्री खलीफा मोहम्मद हसन तथा पंजाब सरकार का कार्यवाहक सेक्रेटरी मि. एल. एच. गिर्फन आपस में बहुत घनिष्ठ मित्र थे । अतः खलीफा साहिब हार्दिक रूप से चाहते थे, कि इस मुकदमे का पता अवश्य चल जाये अंग्रेज हाकिम आले की रियासत (पटियाला) तथा चौधरी की रियासत (नाभा) दोनों के राजाओं पर जोर डाल रहे थे कि "अपराधी तुम्हारी रियासतों में हैं , उन्हें किसी प्रकार शीघ्रातिशीघ्र ढूंढ कर हमारे हवाले करो ।" 20 जुलाई को रियासत पटियाला के वकील ने डिप्टी कमिश्नर लुधियाना को यह बताया, "पता चला है कि कत्ल की घटना से लगभग 5 दिन पहिले कुछ कूके गांव नाईवाला में एकत्रित हुये देखे गये थे और उन्हें खोज निकालने के यत्न किये जा रहे हैं ।"

21 तारीख को पटियाले वालों ने डिप्टी कमिश्नर को सूचना दी, "कि उन्होंने 7 कूके अपनी रियासत में से पकड़ लिये हैं. तथा उनकी तलवार भी पकड़ ली गई है । पंजाब के सेक्रेटरी मि. ग्रिफिन ने मि. ई. सो. बेली गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया के सेक्रेटरी ,को उस सूचना की रिपोर्ट देते हुए लिखा, "यद्यपि स्वाभाविक तौर पर सिख, कूके पर यह आरोप लगावेंगे, परन्तु मुझे अब भी दृढ़ विश्वास नहीं कि वास्तविक अपराधी व्यक्ति पकड़े गये हों ।" साथ के साथ यह भी लिखा, "महाराजा साहिब बहादुर पटियाला इस मुकदमे में हमारी पूर्ण सहायता कर रहे हैं ।"

22 जुलाई को लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर ने होम सेक्रेटरी को तार दी कि "कत्ल के स्थान से लेकर गांव पित्थो रियासत पटियाला तक सात कूकों के पदचिन्ह मिल गये हैं । पटियाला के अफसरों तथा हमारी पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया है ॥"

सेशन जज मेकनाब तथा चीफ़कोर्ट के जज' बोलीनीस के निर्णयों के अनुसार मंगा सिंह तथा भूपा खोजी आठ व्यक्तियों के पद चिन्ह खजान सिंह के डेरे तक ले आये थे । खजान सिंह को पटियाला के थानेदार मुवक्कल हुसैन के सामने प्रस्तुत किया गया। खजान सिंह ने थानेदार तथा गांव धनेर

रियासत पटियाला के नम्बरदार मुनयमखाँ को तीन तलवारें निकलवा दीं, तथा बयान दिया कि छीनीवाल गांव का दल सिंह , नाईवाला गांव का रतन सिंह तथा पित्थों के तीन आदमी बूचड़ों के घातक हैं ।

जुर्म को मनवाने के लिये पुलिस जो व्यवहार दोषियों से करती है उसका सम्पूर्ण वृत्तान्त पंजाब तथा पुरानी रियासतों के ग्रामीण भली भांति जानते हैं । पटियाला की गुप्त पुलिस तो इन बातों के लिए अब तक प्रसिद्ध है। आजकल भी कई पुराने पुलिस अफसर जीवित हैं जो बता सकते हैं, कि निर्दोष व्यक्ति को भी किस प्रकार दो चार घंटे के अन्दर अन्दर दोष मनवा कर मिसलों के पेट भरकर न्यायालयों में पेश कर दिया जाता था । पुरानी बातों को छोड़ो, हम में से कई सज्जनों ने सांडर्स वध केस, कालिका शूटिंग केस, नाभा-पटियाला केस, बब्बर-अकाली केस तथा अनेक मुकद्दमों में पुलिस अफसरों की उस्तादियां देखी हैं ।

दल सिंह को छीनीवाल से लाकर बस्सीयां की कोठी के स्थान पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया गया । दल सिंह ने गुलाब सिंह चूहड़चक वाले का नाम लिया जिसको 23 जुलाई को उसके गांव से पकड़ लिया गया । दल सिंह ने मजिस्ट्रेट के सामने अपने जुर्म को मान लिया । इस पर उसको उसी स्थान पर लाया गया जहाँ तलवारें दबाई हुई थीं। चार तलवारें और निकाली गई । मुनियमखां, फैज अली खां तथा अन्य गवाहों ने सौगंध उठाकर कहा, कि तीन तलवारों पर बिलकुल ताज़ा रक्त लगा हुआ था तथा लहू वाले स्थान पर बालू भी लगा हुआ था। समस्त गवाहों ने शपथ लेकर यह भी बयान दिये, कि एक तलवार के दस्ते के साथ थोड़ा सा मांस और चमड़ी भी लगी हुई थी । पित्थो वाले सिक्खों के पकड़े जाने का वृत्तान्त "सतगुरु बिलास" में इस प्रकार लिखा है :--

"दल्लू पित्थो वालों को जाकर पकड़वाने लगा । तेजा सिंह ढिलवां वाले ने सूचना दी कि तुम को पकड़ने के लिये जेठुपुरा में रिसाला आ उतरा है । तुम अपना प्रबंध करो । समस्त सिंह बन में जा बैठे । दूला सिंह ने कहा तुम भाग जाओ, तुम्हारा उत्तरदायित्व है, तुम नहीं बचोगे । मस्तान

सिंह ने कहा, कि यदि भाग गये तो सिपाही दूसरों को दुःख देंगे। "हमने किया है, अतः हम सहन करेंगे, औरों को दुःख देना ठीक नहीं । कार्य करके भागना न चाहिये । सन्मुख होकर शीश देंगे ।" जो गुरु ने करनी है, वही होगा। देखी जाएगी हम भागते नहीं हैं ।" दोपहर ढलने पर रसाला आ गया। बेगारियों को हुक्म दिया, कि कूकों को एकत्रित करके ले आओ । समस्त कूके एकत्रित करके लाये गये । वे आठ व्यक्तियों को ले गये। दल्लू की स्त्री ने कहा कि तीन तो मेरे घर आये थे । मस्तान सिंह, मेंगल सिंह तथा गुरुमुख सिंह तीनों ही आये। गुलाबू भी घर से पकड़ मंगाया। अतर सिंह दस वर्ष का था, फिरंगी ने कहा इसको क्यों लाये ? उसे छोड़ दिया गया, तत्काल शेष को बेड़ियां पहना दी गई । आठवें ज्ञान सिंह को दल्लू ने नगर खन्ना से जा पकड़वाया । रतन सिंह नाई को भी जा पकड़वाया, कान्हा भी पकड़वा दिया । कान्हा ने गांव बागांवाले के रहने वाले पकड़वा दिये । गुलाबू निंदकः मराणा से पकड़वा दिये । वायदा मुआफ़ गवाह बनने पर बोल उठा-तीनों कहते कि सदूगुरु ने ज्ञानी सिंह को हुक्म दिया था, कि बूचड़ों का बध करो ज्ञानी सिंह ने सिंहों को यही बात कही थी । सतगुरु जी की आज्ञा है कि बूचड़ों का घात करो । सिंहों ने ही बूचड़ मारे हैं । गुप्तचरों के कहने से गुरु राम सिंह जी भी बुलाए गए।"

24 जुलाई 1871 को मि. कावन ने बस्सीयां नामक स्थान से इस घटना की कड़ी की अगली रिपोर्ट पंजाब सरकार को भेजी, जो 27 जुलाई को केन्द्रीय सरकार को भेजी गई। इसमें लिखा था:--""सात पकड़े हुए कूकों में से चार निःसंदेह क़तल के दोषी हैं । उनकी तलवारें भी मिल गई हैं । इनमें से चार तलवारों पर रक्त के छींटे हैं, तथा मांस भी लगा हुआ है । दल सिंह "वायदा मुआफ' गवाह बन गया है । उसने दुखित हृदय से कत्ल की घटनाएं बताई हैं , परन्तु उसकी स्त्री ने जो चतुर दिख पड़ती है, अपने पति को बचाने के लिए सारे मामले को स्पष्ट रूप से बता दिया है । गुलाब सिंह पकड़ा गया है, परन्तु अभी तक वह वसीयां के स्थान पर मजिस्ट्रेट के सामने पेश नहीं किया गया । इन प्रदेशों का सूबा ज्ञानी सिंह है । रत्न

सिंह उसका उपनाम है । ज्ञानी सिंह पहिले भी पटियाला में दो साल की क़ैद पा चुका है तथा मन्द व्यक्ति है ।"

24 जुलाई के पश्चात् गुरु राम सिंह जी तथा अन्य सूबों को भी बसीयां के स्थान पर इस मुकदमे में गवाही देने के लिये बुलाया गया । आप 36 नामधारी सिंहों के साथ 28 जुलाई को बसीयां पहुंचे, तथा अदालत वाले स्थान के पास ही डेरा डाला । इस समय दस घुड़सवार भी आपके साथ थे। आपने बसीयां पहुँच कर दल सिंह वायदा मुआफ तथा शेष झूठे गवाहों के पोल खोली । (टूक सेशन जज वाली मिसल) । सतगुरु बिलास में गुरुजी का बसीयां जाकर गवाही देने का वर्णन इस प्रकार लिखा है :--

"ऊँट सवार आया, परवाना दिखाया, आपको-बसीयां में याद किया है । प्रार्थना करके दीनानाथ जी चले । जब गुजरवाल गांव में आये, तो उन्होंने कहा कि, यदि 80-100 सिंह धर्म हेतु लग जांय तो क्या बड़ी बात है ? यदि धर्म रह जाय । बसीयां आये तो फिरंगी ने पूछा, बाबा राम सिंह तुमने सिंहों को बूंचड़ों को मारने का आदेश दिया है ? गुप्तचर कहते हैं--तुमने स्वयं हुक्म दिया है ।" गुरु जी ने कहा, कि मैंने कब ऐसा कहा ? स्वयं ही जाकर काटते फिरते हैं । हम को कछू खबर नहीं । कान्हा, दल्लू तथा गुंलोने गुलाबु तीनों ही कहने लगे कि तुमने व्यय देकर भेजे हैं, कि जाओ बूचड़ों को काटो। गुरु जी कहने लगे यदि व्यय दिया होगा, तो बही में लिखा होगा । फिरंगी ने बही मंगवाई, किन्तु उसमें नाम न निकला । गोपाल सिंह ने कहा जिसको मैं देता हूं, नाम लिखता हूँ । यदि दिया होता तो लिखा भी होता। गुरुजी ने कहा, यदि हुक्म देना होता, तो क्या इन्हें ही देता? और बहुत से सिंह मेरे पास थे, में उनको हुक्म दे देता। इनको क्यों हुक्म देता ?"

पटियाला और नाभा रियासतों तथा अंग्रेज़ी प्रदेश के पुलिस अफसरों, कर्मचारियों और वकीलों की सहायता से बसीयां के स्थान पर मजिस्ट्रेट ने एक दो दिनके अन्दर अन्दर पूर्ण मिसल तैयार करके दोषियों को सैशन जज के अधिकार में दे दिया । अम्बाला डिवीज़न के सैशन जज साहब

भी बसीयां में पहुंचे हुए थे।

27 जुलाई 1871 को मि. ए. डबल्यू. मेकनाब सेशन जज ने बसीयां के स्थान पर इस मुकदमे में मस्तान सिंह, गुरमुख सिंह, मंगल सिंह पित्थों गांव वालों को तथा गुलाब सिंह चूह-ड़चक गांव वाले को कत्ल के दोषी बताकर प्राण दंड दिया । असैसरों ने भी इन्हें दोषी घोषित किया ।

1 अगस्त 1871 को पंजाब चीफ कोर्ट के जज सो0 बोलीनोस ने चारों दोषियों को फांसी की सज़ा की पुष्टी कर दी । दूसरे जज जे. ऐस. कैम्पबेल ने भी इसी तिथि की इसी निर्णय के साथ अपनी सम्मति दे दी।

इस मुकदमे का विशेष पक्ष यह है, कि चीफ कोर्ट से फांसी का हुक्म देने के पश्चात् गुलाब सिंह को वायदा माफ गवाह बनाया गया । क्या न्याय के अनुसार ऐसा हो सकता था ? परन्तु नामधारिओं पर कानून की बजाय राजनीति लागू थी , क्योंकि उन्होंने बूचड़ो को मार कर सरकारी हुक्म तोड़ा था तथा सरकार का मान मिट्टी में मिला दिया था।

कर्नल बेली ने अमृतसर तार दिया, कि गुलाब सिंह वायदा मुआफ गवाह ने अमृतसर के बूचड़ों के घातकों का पता दे दिया है, तथा वह उसको साथ लेकर अमृतसर पहुँच रहा है ।

इस मुकदमे के दोषी 24 जुलाई को नाभा तथा पटियाला की रियासतों में से पकड़ कर अंग्रेज़ी इलाका के गांव बसीयां में लाये गये। पुलिस अफसरों ने एक दो दिन में मजिस्ट्रेट के सामने इनके बयान दिलवाये। मैजिस्ट्रट ने 27 तारीख तक दोषियों को फांसी के दण्ड दे दिये। इसके पश्चात् चार दिन के अन्दर अन्दर चीफ कोर्ट ने फांसी की सज़ा की पुष्टि कर दी। सारा मुकदमा दिन में समाप्त कर दिया गया ।

28 तारीख के पश्चात् फँसी के दंड प्राप्त तथा दोषियों ज्ञानी सिंह और रतन सिंह गांव नाईवाला को लुधियाना जेल में लाया गया। चीफ़ कोर्ट से सज़ा पक्की होने पर फांसी लगाने का समस्त सामान तथा 3 अपराधियों को रायकोट लाया गया । डिप्टी कमिश्नर मि. एल. कावन स्वयं भी रायकोट पहुंचा । बूचड़खाने के पास ही फाँसी गाड़ी गई, तथा 5 अगस्त 1871 को

सूर्योदय के साथ लोगों के सामने मस्तान सिंह, गुरमुख सिंह तथा मैंगल सिंह पित्थो गांव वालों को फांसी दे दी गई इस समय लगभग दो सौ आदमी फांसी का दृश्य देखने के लिए आए हुए थे। इनमें दस या बारह कूके भी थे। पित्थो से फांसी पाने वाले वीरों के कुटुम्बी पहुंचे हुए थे । वह मृतक शरीरों को गांव पित्थो ले गये जहाँ उनका दाह संस्कार किया गया ।
(टूक --पंजाब सरकार कम्पूनिक नम्बर 1060 मिति 10 सितंबर 1871)

ज्ञानी रतन सिंह तथा रतन सिंह, गाँव नाईवाला को फांसियां

पंजाब के डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस का यह मत था, कि यदि कूकों को कड़े दंड देकर न दबाया गया, तो वह अंग्रेज़ी सरकार से अवश्य टक्कर लेंगे । कई अंग्रेज़ अफ़सरों का विचार था, कि गुरु राम सिंह जी तथा उसके बड़े-बड़े नामी सूबों पर मुकदमे चलाकर बढ़ते जा रहे नामधारी आन्दोलन का नाश कर दिया जाये । ज्ञानी रतन सिंह मंडी वाला नामधारी सिंहों में अच्छा विद्वान, चतुर तथा मान प्रतिष्ठा वाला सज्जन था । नामधारी सिक्खों ने गुरु राम सिंह जी की आज्ञानुसार शासन के सरकारी न्यायालयों का बहिष्कार किया हुआ था। पारस्परिक झगड़े निपटाने के लिये नामधारियों में से ही मुकदमा सुनने वाले पंच, सरपंच तथा न्यायाध्यक्ष भी बनाए हुए थे । ज्ञानी सिंह अथवा ज्ञानी रतन सिंह मंडी वाला हिठाड़ सतलुज के प्रदेशों में नामधारियों का मुख न्यायाध्यक्ष माना जाता था। वह स्वयं प्रत्येक स्थान पर पहुँच कर इनके पारस्परिक झगड़ों तथा मुकदमों में निर्णय देता । इस कार्य के लिये उसको हर समय स्थान स्थान पर आना जाना पड़ता था।

रायकोट के मुकदमे में तीन हत्याओं के लिये तीन दोषियों को फांसी हो चुकी थी । साथ ही साथ इस मुकदमे का हवाला देकर ज्ञानी सिंह अथवा रतन सिंह मंडी गांव वाला तथा रतन सिंह गांव नाईवाला को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 तथा 302 के अनुसार मजिस्ट्रेट ने मुकदमा 21 सितम्बर 1871 को सेशन जज के हवाले कर दिया था। आरोप यह था, कि घातक़ों ने घात इनकी सहायता तथा इनकी प्रेरणा से किये है । मिसलों के पेट गुप्तचरों तथा गवाहों के बयानों से भरे पड़े थे। सैशन जज ने दल सिंह तथा गुलाब सिंह वायदा मुआफ सरकारी गवाहों तथा दल सिंह की स्त्री राम कौर की गवाहियाँ दूसरी बार अपने न्यायालय में लीं । फैसले में सैशन जज

साहब लिखते हैं, कि इस बार दल सिंह की गवाही पहिले मुकदमे की गवाही की अपेक्षा कई नुकतों पर बहुत स्पष्ट है।

सरकारी गवाह गुलाब सिंह ने सैशन जज के सामने यह बयान दिया, कि वह अमृतसर के बूचड़ों के कतल की घटना में कातिलों के साथ सम्मिलित था ।गुरु राम सिंह जी से मालवा (दरिया सतलुज से नीचे का इलाका) में बूचड़ों को मारने की आज्ञा लेकर वह तथा उसके साथी भगवान सिंह, लक्ष्मण सिंह तथा जवाहर सिंह पांचवें दिन गांव खुड्ड़ी में ज्ञानी सिंह के पास पहुंचे । सैशन जज, गुलाब सिंह की गवाही का मूल्य कम समझता था । उसने फैसले में लिखा है , कि मेरे सम्मुख आये गवाहों में से दो जाटों को छोड़कर शेष दीदार सिंह साधु , जीवन सिंह नम्बरदार गांव जोगा, काला सिंह, जवाहर सिंह तथा गुरुदत्त सिंह सबने उतने कड़े बयान नहीं दिए, जितने उन्होंने मजिस्ट्रेट के सामने दिए थे । पता चला है , कि मेरे सामने 23 तारीख को मुकदमा प्रारम्भ होने से एक दिन पहले यह भैणी गए थे । फैसला लिखते हुए जज ने बहुत ही जटिल बातें लिखी हैं । अंत में घूम फिर कर वह गुलाब सिंह के गांव खुड्ड़ी में ज्ञानी सिंह को मिलने वाली बात पर आ जाता है ।

निर्णय वाली पंक्तियों में लिखा है, कि ज्ञानी सिंह तथा रतन सिंह नाई- वाला दोनों का गांव मौड़ के मेले पर उपस्थित होना, तलवारें एकत्रित करना तथा अन्य मनुष्यों को बूचड़ों के घात के लिये प्रेरणा देना इस बात का प्रमाण है कि उन्हें हत्या के षड्यंत्र का पूर्ण ज्ञान था । अंत में ज्ञानी सिंह का गाँव जोगा में जाकर रतन सिंह के आने तक वहीं ठहरना तथा रतन सिंह के साथ आये भगवान सिंह कातिल को मिलना आदि प्रमाणों के होते हुए, इस बात में संदेह नहीं रह जाता, कि ज्ञानी सिंह ने अपराधियों को प्रेरणा तथा सहायता देकर बूचड़ों को कत्ल करवाने में भाग लिया है ॥"

भारतीय दंड विधान की धारा 109 तथा 302 के अनुसार सैशन जज ने ज्ञानी सिंह गांव मंडी तथा रतन सिंह गांव नाईवाला को प्राण दंड दिये । तीनों असैसरों, मीर गुलाम मुहम्मद, श्री चंदूलाल तथा श्री

कन्हैयालाल ने भी दोषियों को हत्या के अपराधी ठहराकर साहब बहादुर के निर्णय की पुष्टि की ।

मुकदमे का फैसला 26 अक्टूबर 1871 को हुआ ।

मैकनब साहब ने फैसले की नकल अपने पत्र नं. 185 मिति 30 अक्टूबर 1871 द्वारा चीफ़ कोर्ट को भेज दी। यह फैसला फौजदारी मुकदमा न. 65 सन् 1871 के हवाले के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 398 के अनुसार चीफ कोर्ट के तीन जजों मिस्टर सी. बोलीनीस, मिस्टर सी. आर. लिन्डसे मिस्टर जे. सी. कॅम्पबेल के बेंच के सामने पेश हुआ। मुकदमे की समस्या इस प्रकार थी ।

"सरकार विरुद्ध (1) रतन सिंह पुत्र बुद्ध सिंह जाति कूका आयु 28 वर्ष गाँव नाईवाला, (2) ज्ञानी उपनाम रतन सिंह पुत्र रामकृष्ण जाति कूका आयु 35 वर्ष गाँव मंडी । अपराध । कत्ल करवाने के लिये प्रेरणा देना भारतीय दंड संहिता की धारायें 109 तथा 302 ।

जज बोलीनोस ने हर नुक्ते पर बड़ी ही खोज तथा चतुराई से तर्क किया । उसने लिखा, कि सेशन जज ने रतन सिंह नाईवाला के बयान को गवाही बनाकर ज्ञानी सिंह को प्राण दंड दिए हैं। कार्यवाही न्याय के मूल नियमों के विरुद्ध दोनों दोषियों पर सम्मिलित रूप से एक ही अपराध में एक ही मजिस्ट्रेट के सामने मुकदमा चल रहा है । इसलिये जो कुछ भी रतन सिंह नाईवालिया ज्ञानी रतन सिंह के विरुद्ध कहता है, न्याय के नियमों के अनुसार इसको गवाही नहीं माना जा सकता । जज साहब ने गुलाब सिंह , दीदार सिंह मौड़वाला, गुरुदित्त सिंह, राम कौर, दल सिंह की गवाहियों के झूठ सच का खूब विश्लेषण किया । यहां तक लिखा, कि दल सिंह तथा राम कौर अपने आपको बचाने के लिये ज्ञानी के विरुद्ध ऐसी गवाहियां देते हैं, जो ठीक मानी नहीं जा सकतीं । यह भी लिखा, कि पुलिस वाले गवाहों को ब्यान पढ़ाते-सिखाते रहे हैं ।

गुलाब सिंह की गवाही के विषय में जज साहब ने लिखा, कि यह गवाह ज्ञानी सिंह के विरुद बहुत कड़ी गवाही देता है, परन्तु उसकी गवाही

एक वादा मुआफ व्यक्ति की गवाही है । तथा इस रूप में इसकी गवाही में वह सारी बनावटें तथा त्रुटियां हैं, जो ऐसे गवाहों की गवाहियों में होती हैं । जीवन सिंह तथा काला सिंह की गवाहियां ज्ञानी के विरुद्ध नहीं जाती ।

अंत में जज साहब लिखता है, कि मैं मुकदमे के सारे पक्षों पर विचार करके प्राण दंड देने से झिझकता हूँ । ऐसे मुकदमे में न्यायाधीश को भी अपनी स्वेच्छा का प्रयोग करने की छूट है । परन्तु मैं बहुत गहराई में अनुभव करता हूं, कि इस मुकदमे में मृत्यु दंड न दिया जावे । मिसल में आई गवाहियों से यह सिद्ध नहीं होता, कि ज्ञानी ने वास्तव में इन हत्याओं में सीधा भाग लिया है । संभव है कि हत्या के विषय में हुये परामर्शों में वह भी अनुमति देता रहा हो। जज साहब ने फैसला दिया, कि मैं ज्ञानी के मुत्यू दंड को बदलकर आजीवन कारावास का दंड देता हूँ , तथा रतन सिंह नाईवालिया को प्राण दंड की बजाय कारावास आजीवन का दंड देता हूँ ।

जज साहब बोलीनोस ने अपना यह निर्णय 11 नवम्बर 1871 को लिखा । जज कैम्पबेल ने अपना फैसला 14 नवम्बर 1871 को लिखा । उसने फैसले में इस मुकदमे को एक अर्ध राजनैतिक रूप देकर अपराधियों के लिये सेशन जज वाली फांसी के दंडों की ही पुष्टि कर दी ।

जज लिंडसे ने 23 नवम्बर 1871 को संक्षेप शब्दों में अपना निर्णय देते हुए ज्ञानी सिंह तथा रतन सिंह नाईवाला को सैशन जज की ओर से दिये गये प्राणदंड का समर्थन किया ।

26 नवम्बर 1871 वाले दिन दोनों नामधारी सज्जनों को लुधियाना जेल के बाहर फांसी दे दी गई । सतगुरु बिलास में इनके फांसी चढ़ने का वृत्तान्त इस प्रकार दिया है :--

“फांसी वाले दिन दही के साथ स्नान किया । सफेद पोशाक कहकर इस दिन के लिए बनवाई थी । सफेद वस्त्रों के साथ फांसी चढेंगे । जेल वाला यह नीला (पहरावा) नहीं पहनना । साथ ही चमड़े की तन्दी गले में नहीं डालनी। कह कर रेशम के रस्से बनवाएं। फांसी गड़वाई, फौज आई । अन्य लोग भी बहुत देखने आये। धर्म के हेतु सिंह शहीद होते हैं। बाबा

ज्ञान सिंह के चेहरे पर शान्ति दमकती है । फिरंगी दोनों निर्दोषों को फांसी देने लगे हैं, कत्ल में साथ नहीं थे । गुप्तचरों के कथनानुसार ही दंड दिया। फांसी के तख्ते पर खड़े हुए बाबा ज्ञान सिंह ने रतन सिंह से वचन किया ।

चूका निहोरा सखी सहेरी ।
भरम गया गुरु पिर संग मेरी ॥

जब बाबा ज्ञान सिंह तख्ते पर चढ़े, तो पास खड़े अंग्रेज़ हाकिम से बोले--"बिल्ले, (अंग्रेज़) मुंह तो सन्मुख रख, पीठ दिए क्यों खड़ा है । 10 मास किसी जाटिनी की कोख में काटकर फिर इस संसार में आ जायेंगे । युवक होकर फिर बदला लेंगे । सुन ओ बिल्ले, तेरी बुद्धि भ्रष्ट देखी है । तुम्हारे न्याय झूठे हैं । अन्याय होने लगा है । मुझे मारकर यह आन्दोलन बन्द नहीं होने लगा है । जिसने तुम्हें मारना है वह रामदासपुरा में बैठा है । पीछे तुम्हारा विनाश करेगा । यह तो अभी बच्चों का खेल हुआ है । शेषनाग तो अभी बैठा है । पीछे तुम्हारा नाश करेगा। यदि एक दो सर्प मार दिया तो क्या हुआ ? तुम्हारा काल तुम्हारे सिर पर बैठा है.....हमें भी कहीं और नहीं जाना है, कोई माता फिर जन्म देगी । नये चोले पहन, युवक होकर पुन: तलवार पकड़ेंगे तुम्हारे अधिकार को उठावेंगे । तुम्हारे साथ युद्ध करेंगे । गीत बोला ।

प्रभु पर स्वमित्व उनका
जिन सिर प्रभु को अर्पित किया ।
संसार से ही उदासीन होकर
प्रभु से सम्बन्ध स्थापित किया।
जैसे करे प्रीत आरम्भ भक्तजन
प्रण पालें कदाचित् न फेरें जिया।
बिनु सिर दिये भगवन् न मिलता
लाखों की मैं एक कही या ।

स्वयं फाँसी के रस्से दोनों ने गले में डाले। सत श्री अकाल बुलाया । पटड़ा पैरों के नीचे से खींच लिया गया। अन्तिम हिलोरा आया । प्राण

पृथक हुए । दोनों सिंहों के मृतक शरीरों को बूढ़ा दरिया के तट पर ले जाकर दाह कर दिया गया ।"

इन मुकदमों को सफलता के साथ सम्पूर्ण करने में हर प्रकार की सहायता देने के कारण अंग्रेज़ी सरकार की ओर से महाराजा महेन्द्र सिंह जी साहब बहादुर का बहुत बहुत धन्यवाद किया गया । इंस्पेक्टर पुलिस सरदार नारायण सिंह को ई. ए. सी. बनाकर लुधियाना में विशेष प्रकार से नामधारियों का दमन तथा विनाश करने की डूयूटी पर लगाया गया । इंस्पेक्टर इमदाद अली को उच्च पद दिया गया।

विदेशी सरकार को नामधारियों की ओर से आशंका

मि. मैकनाब तथा मि. मैकन्डर्यू की रिपोर्ट

यद्यपि अंग्रेज़ शासक नामधारी सूबों तथा नामधारी महन्तों को लोगों की दृष्टि से गिराने के काम में तन्मय होकर लगे हुए थे, तथापि प्रतिदिन नामधारियों की संख्या बढ़ती चली जा रही थी । नामधारियों के स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग के प्रणों तथा विदेशी शासन की ओर से चलाई गई समस्त संस्थाओं, सरकारी न्यायालयों, सरकारी पाठशालाओं, डाकखानों, हस्पतालों, अंग्रेज़ी औषधियों तथा रेल की यात्रा आदि का पूर्ण बहिष्कार शासन के लिये अत्यंत चिंता के कारण बन गये थे । नामधारियों का संगठन, उनका अपना डाक प्रबंध तथा गुरु राम सिंह जी के आदेश पालन होते देखकर विदेशी शासकों के हृदयों में इस आंदोलन के प्रति सन्देह होना स्वाभाविक था। कश्मीर तथा नेपाल की सेनाओं में भर्ती होकर नामधारी जंग के ढंग सीख रहे थे । इन सभी बातों के होते हुए सरकारी कर्मचारियों के हृदय में यह बात पक्की तरह बैठ गई थी कि नामधारी सिंह अवसर मिलने पर अंग्रेज़ी सरकार के विरुद्ध खुल्लम खुल्ला विद्रोह करेंगे ।

5 अगस्त 1871 को रायकोट के बूचड़ों के कत्ल के अपराध में गाँव पित्थो रियासत नाभा के तीन नामधारियों को रायकोट में जनता के सामने फांसी दे दी गई थी, तथा ज्ञानी रतन सिंह मंडी गांव वाले और रतन सिंह गांव नाईवालिये का मुकदमा लुधियाना ज़िले के सेशन जज के सुपुर्द कर दिया गया था ।

8 अगस्त को अमृतसर के बूचड़ों के कत्ल करने के अपराध में मि. क्रिस्टी द्वारा किये हुए सभी अपराधी बीहला सिंह नामधारी के 3 अगस्त के स्वीकृत बयान के बाद छोड़ दिये गये । इस पर कर्नल बेली डिप्टी इंस्पेक्टर

जनरल पुलिस लाहौर में सरकार की इच्छा नुसार मि. मेकनाब कमिश्नर अम्बाला तथा म्रि. मेकेन्डयू डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस अम्बाला को गुरु राम सिंह जी पर बूचड़ों के कत्ल के लिये प्रेरणा देने के अपराध में मुकदमा चलाने के विषय में अपनी सम्मतियाँ प्रकट करने के लिये लिखा । मि. मैकनब ने अपनी रिपोर्ट 4 नवम्बर को उपस्थित की तथा मि. मेकेन्डर्यू ने 20 नवम्बर 1871 को । मि. मैकनब की रिपोर्ट का सार इस प्रकार है :--

(1) आरम्भ में यद्यपि इस आन्दोलन के नेताओं के लक्ष्य कुछ भी हों, परन्तु इस आन्दोलन का झुकाव प्रत्यक्ष रूप में राजनैतिक है ।

(2) सर्व प्रथम सरदारों अथवा धनाढो में से केवल मंगल सिंह बिशन पुरिया ही नामधारी था , परन्तु अब बहुत से सरदार तथा जागीरदार इस आंदोलन में प्रविष्ट हो चुके हैं । उदाहरण के रूप में गुरदित्त सिंह गांव नाईवाला, बीर सिंह गांव दयालगढ़, गुरुशरण सिंह गांव मुस्तफाबाद तथा उसके तीन भतीजे, हीरा सिंह जागीरदार साढौरे वाला तथा साढौरा के अन्य समस्त जागीरदार, दयालगढ़ियो सरदारों के सम्बन्धी, बुढ़ा सिंह जागीरदार गांव सोहाना ज़िला अम्बाला, रियासत कलसिया के जयमल सिंह तथा दिलीप सिंह अम्बाला ज़िला के छोटे-छोटे जागीरदार समय आने पर खालसा राज्य पुनः स्थापित करने के इच्छुक अवश बन जावेंगे ।

(3) पिछले वर्षो में गुरु राम सिंह ने नेपाल के युवराज द्वारा महाराजा के साथ भी सौगातें लीं और दीं।

(4) नामधारी संगठन ज़िला वार सूबों तथा कार्य वाहक सूबों द्वारा संगठित है ।नामधारियों के दूत लखनऊ, हैदराबाद आदि शहरों में जहाँ जहाँ भी सिक्ख रहते हैं, पहुंचते हैं। गुरु राम सिंह साधू, तथा फकीरों की भाँति नहीं रहता । जब कभी भी वह किसी अफसर को मिलता है , तो राजाओं की भाँति कई घुड़सवार तथा बहुत से पैदल उसके साथ होते हैं। अफसर के कमरे में भी राजाओं के दरबारियों के समान उसके साथ कई मनुष्य अन्दर आते हैं ।

उसके अपने तथा नामधारियों के पहने हुए वस्त्र बहुत ही सुन्दर

तथा सफेद रंग के होते हैं । ऐसा संगठन कुछ समय पश्चात् राजनैतिक कार्यक्रम की महान् शोभा बन सकता है तथा नामधारिओं का प्रत्येक कामः इसी लक्ष्य की ओर जाता प्रतीत होता है ।

(5) जितने पदाधिकारी सूबे मुझे मिले हैं, समस्त साहसी पुरुष हैं । कुछ ही को छोड़कर जितने कूके मैने देखे हैं, वह बहुत कसीले तथा हृष्ट-पुष्ट शरीर वाले व्यक्ति हैं ।

(6) सारे पक्षों पर विचार करके में इस परिणाम पर पहुंचा हूं, कि यह आंदोलन पूर्णतः राजनैतिक है, निपट धार्मिक आन्दोलन नहीं, प्रत्यक्ष में चाहे कुछ भी हो ।

(7) गुरु राम सिंह तीक्ष्ण बुद्धि वाला , धैर्यवान , गंभीर तथा उच्च आचरण वाला पुरुष है । उसने अपने हर वचन, तथा प्रत्येक कर्म को अपने वश में किया हुआ है ।

(8) बूचड़ों के कत्ल के मुकदमों की गवाहियों से यही परिणाम निकलता है, कि गुरु राम सिंह ही समस्त बातों के आधारे थे । तथा प्रतीत होता है कि लोग उसी पर भरोसा करते हैं , सूबों पर नहीं ।

(9) हर पढ़ा लिखा कूका अपने पास दीवान बूटा सिंह लाहौर वाले के मुद्रणालय (आफ़ताब प्रेस) की मुद्रित एक पुस्तक रखता है । इस पुस्तक में गुरु गोबिन्द सिंह जी के ग्रन्थ में से युद्ध के लिए उत्साहित करने वाली वाणियां, चंडी पाठ तथा उग्रदंती दी हुई है ।

इन प्रकाशित वाणियों के अतिरिक्त तीन और अप्रकाशित पुस्तके हैं, जिन्हें कूके प्रामाणिक समझते हैं । यह है "सौ साखी ", "बाबा अजित्ता की गोषठ ' तथा 'करनी नामा'। अमृतसर के बूचड़ों के कत्ल की तफ़तीस में इन्स्पेक्टर इमदाद अली ने यह तीनों पुस्तक तलाशी में भाई बीहला सिंह गांव नारली के घर से लाकर म0 टर्टन स्मिथ को दी थी । उसने इसका अनुवाद किया था । अन्त में मि. मैकनाब गुरु राम सिंह जी के विरुद्ध राजनैतिक मुकदमों की रूपरेखा का इस प्रकार उल्लेख करता है :--

"गुरु राम सिंह एक ऐसी सम्प्रदाय का वास्तविक तथा नामी नेता

गुरु है, जो खालसा राज्य को पुनर्जीवित करने की आशा रखती है और अंग्रेज़ी शासन का दुश्मन है । इस सम्प्रदाय के अनुयायियों ने पंजाब के इस भाग में रहने वाले समस्त बूचड़ों को कत्ल करने का षड्यंत्र रचा हुआ है । गुरु राम सिंह को अमृतसर तथा रायकोट के बूचड़ों के कत्ल का पहिले से ही ज्ञान था। मेरे सामने न्यायालय में गवाही देते हुए उसने रायकोट में कत्ल किये गये निर्दोष स्त्री तथा बच्चों के कत्ल की निंदा करने से साफ़ इंकार कर दिया था।"

अपनी व्यक्तिगत सम्मति देते हुए मि. मेकनाब ने लिखा कि "सरकारी तौर पर स्वीकृत विशेष स्थानों पर, अथवा व्यापार कर रहे बूचड़ों का, उद्दंगें के हाथों कत्ल किया जाना सरकार के उद्देश्यों तथा शासन का खुले रूप में विरोध है । इस प्रकार शासन के विरोधी होने की अवस्था में यदि दोषियों को कड़े दंड न दिये जावें तो ये विरोधी किसी न किसी समय हमारे शासन के लिये अति हानिकारक सिद्ध होंगे ।"

"इस बात को सभी मानते हैं कि शासन का विरोध होने अथवा करवाने में सम्प्रदाय के नेता गुरु की पूर्ण सम्मति है । इन कारणों को सामने रखते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है, कि देश के भीतर शांति स्थापित रखने के लिये गुरु राम सिंह को निष्कासन देकर ऐसे स्थान पर रक्खा जावे, जहां उसके श्रद्धालुओं में से कोई भी उसे न मिल सके ।" उसके सूबों को उनके गांवों में नजरबंद कर दिया जावे तथा कूकों के दीवान, मेले और सम्मेलन सरकारी आदेश से बन्द कर दिये जावें। यदि उनके विरुद्ध ऐसे कड़े साधनों का प्रयोग न किया गया, तो जनसाधारण के हृदयों में यह बात बैठ जाएगी कि सरकार नामधारियों के गुरु राम सिंह से डर गई है। वह लोगों के दिलों में पहले से भी उच्च स्थान प्राप्त कर लेगा । यदि उसकी शक्ति बढ़ती गई और उसके श्रद्धालुओं की संख्या में वृद्धि होती गई, तो सरकार को अनेक बाधाओं, दंगों और फसादों का मुकाबला करना पड़ेगा ।"

आगे चलकर मि. मेकनाब रायकोट तथा अमृतसर के मुकदमों के गवाहों के बयानों के आधार पर यह परिणाम निकालने का प्रयास करता है,

कि "बूचड़ों के कत्ल गुरु राम सिंह जी की आज्ञा से हुए हैं ।" वह लिखता है कि यदि उसपर कत्ल की प्रेरणा देने का मुकदमा न्यायालय में सिद्ध न भी हो सके, तो भी उस को मुक्त नहीं करना चाहिये। अपितु यह निर्णय देना चाहिये, कि उसके विरुद्ध खुली अदालत में दोष सिद्ध नहीं हो सका, परन्तु वह दोषी अवश्य ही है। अपराध सिद्ध न होने की अवस्था में उसके विरुद्ध बंगाल एक्ट नं 3 सन् 1818 के अनुसार कार्यवाही करनी चाहिये । मेरी यह दृढ़ सम्मति है, कि गुरु राम सिंह को आयु पर्यन्त कारावास का दंड देकर अंडेमान द्वीप में भेज दिया जावे । परन्तु यह कार्यवाही जनवरी के महीने दिल्ली में होने वाले बड़े सैनिक सम्मेलन से पहिले-पहिले हो जानी चाहिए । लुधियाना में पुलिस की संख्या बढ़ानी चाहिए और कुछ सेना जालंधर में तैयार रखनी चाहिये ।"

आगे चलकर लिखता है "कि गुरु राम सिंह जी को दूतों से यह बात बता दी जावे कि वह अपना प्रचार बन्द कर दे तथा सूबों को भी प्रचार करने से वर्जित कर दे । साथ ही साथ अपने श्रद्धालुओं की कार्यवाहियों का दायित्व अपने ऊपर ले। परंतु मेरा विश्वास है कि इन बातों का उसपर कोई प्रभाव न होगा तथा न ही वह अपना प्रचार बन्द करेगा ।" "इन बातों को सन्मुख रखते हुए मैं यह कहने का साहस करता हूँ, कि सरकार का रोब, आदर तथा दबदबा अब इस बात से ही स्थापित रह सकता है, यदि गुरु राम सिंह जी को अवश्य ही दंड दिया जावे ।"

अंत में मि. मैकनाब बड़ी हास्यास्पद सी बात लिखता है । वह सरकार को चेतावनी देता है, कि उसकी यह रिपोर्ट लाहौर के किसी मुद्रणालय में न छपे । इसके लिए वह यह दलील देता है, कि मुद्रणालयों की बिरादरी में दीवान बूटा सिंह की बहुत मान प्रतिष्ठा है । तथा उसे यह आशंका है कि उसकी रिपोर्ट की नकल मुद्रित होने से पहले ही बूटा सिंह के द्वारा गुरु राम सिंह के पास पहुंच जाएगी ।

मि. मेकेन्डर्यू की 20 नवम्बर 1871 को लिखी हुई रिपोर्ट का सार इस प्रकार है :--

(1) गोबध बंद करने के लिये बूचड़ों को मारने की नीति कूकों ने खोटा गाँव के मेले के पश्चात् अपनाई । यह मेला दमदमा साहिब में बैसाखी के उत्सव के पश्चात् प्रचार हेतु लगा था । गुरु राम सिंह जी भी इसमें उपस्थित थे ।

इस मेले पर बाबा जवाहर सिंह तथा सरदार हीरा सिंह सक्रोदी वालों का आपस में झगड़ा हो गया था । हीरा सिंह अपनी स्त्री का काटा हुआ जूड़ा बांस पर लटकाये फिरता था । जवाहर सिंह उसे ऐसा करने से मना करता था । गुरु राम सिंह ने पारस्परिक झगड़े का समाचार सुनकर तथा दुखी होकर कुछ ऐसे वचन कहे, जिन्हें नामधारियों ने बूचड़ों को कत्ल करने का संकेत समझा ।

(2) रायकोट तथा अमृतसर के मुकदमों की मिसलों में लिखित बयानों से यह प्रतीत होता है. कि यह कत्ल गुरु राम सिंह जी की आज्ञानुसार ही हुए हैं। मै यह नहीं कह सकता कि गुरु राम सिंह जी के विरुद्ध अमृतसर तथा रायकोट के मुकद्दमों में दिये गये सरकारी गवाहों के बयानों के आधार पर चलाया हुआ मुकदमा अदालत के सामने सफल हो सकेगा या नहीं । मेरी यह सम्मति है, कि गुरु राम सिंह जी पर ऐसा मुकदमा चलाना, जिसमें उसको कम से कम आयु पर्यन्त कारागार अथवा देश निर्वासन का दंड न दे दिया जाए, भारी भूल होगी ।" इसलिए सरकार को किसी ऐसे मुकदमा के चलाने का लम्बा चौड़ा स्वांग नहीं भरना चाहिये । किन्तु मुकदमा चलाने के बिना ही शासन की राजनीतिक आवश्यकता के नाम पर तथा देश में शांति स्थापित रखने के लिए गुरु राम सिंह को देश निर्वासन का दण्ड देना चाहिये।

"गुरु राम सिंह जी तथा उसके अनुयायियों ने निःसन्देह ही हुकूमत के न्याय और आज्ञाओं की मिट्टी पलीत कर रखी है । सरकार को इस बात की आड़ लेकर कूकों के विषय में हुकूमत की परेशानी तथा कठिनाई को जो निरंतर दस वर्ष से चली आ रही है, दूर करना चाहिये ।

(3) मि. मेकन्डर्यू लिखता है कि कर्नल बेली कूकों की संस्था को कुछ अधिक ही महत्व देता है । उसका अनुमान मुझे शुद्ध प्रतीत नहीं होता

कि लगभग डेढ़ लाख आदमी इस पंथ में प्रविष्ट हो गये हैं। मेरा अनुमान है कि यदि कूकों की गणना की जावे, तो पचास हज़ार के लगभग होगी ।

(4) अभी तक कूकों की बहुसंख्या लुधियाना, फिरोज़पुर, जालंधर, होशियारपुर तथा सियालकोट के ज़िलों में है। परन्तु साथ ही इस बात में कोई संदेह नहीं कि गुरु राम सिंह बहुत चतुर तथा प्रसिद्ध व्यक्ति है । सूबों के द्वारा लोगों को नामधारी संस्था में परिवर्तित करने में उसको सफलता हुई हैं । इन्हीं कारणों से वह अपनी मान प्रतिष्ठा का प्रयोग करने के लिए ऐसे स्थान पर पहुँच चुका है जो हमारे शासन के लिये हानिकारक होगा । उसने वर्तमान में जो उपनाम धारण किया हैं, उससे उसकी उन्नति का अनुमान लगाया जा सकता है । जब वह हज़रो के गुरु बालक सिंह जी की गद्दी का उत्तराधिकारी बना, तो वह महंत राम सिंह कहलाता था । इसके पश्चात् उसको लोग गुरु राम सिंह के नाम से याद करने लगे । इसके परचात् सद्गुरु राम सिंह कहने लगे और अब सतगुरु पातशाह के नाम से बुलाकर उसका सम्मान करते हैं ।

(5) जैसे जैसे उसके श्रद्धालुओं की संख्या में वृद्धि होती गई, उसकी धन संपत्ति भी बढ़ती गई । अब उसके पास अनेकों व्यक्तिगत सहचर व सेवक हैं । वह दरबार लगाता है । समस्त देश में से हरकारे ,अनुगामी तथा जनता के प्रतिनिधि लोगों के सन्देश लेकर उसके पास आते जाते रहते हैं । बहुत से सिक्ख जागीरदार और सरदार उसके साथ मिल गये हैं तथा नामधारी बन गये है । रियासत कश्मीर में एक कूका पलटन खड़ी करने का प्रयत्न किया गया है। नेपाल राज्य की सरकार के पास भी कूका दूत सौगातें देकर भेजे गये थे । यह सब कार्यवाहीयां महत्वाकांक्षा रखने वाले पुरुष के मनोभावों को प्रकट करती है । पूर्वी महाद्वीप के देशों में पहले की छोटी-छोटी कार्यवाहियों से ही बड़े-बड़े ऐतिहासिक तथा निर्णय जनक परिणाम निकलते रहे हैं ।

(6) मेरे उक्त मनोभाव और भी शक्तिशाली हो जाते है , जब मैं हुकूमत के भारतीय मित्रों, सिक्खों , हिन्दुओं तथा मुसलमानों के दिये हुए

समाचारों, सूचनाओं तथा अनुमतियों पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार करता हूं । वह बताते हैं कि कूका आन्दोलन में कोई अच्छाई नहीं। इसकी प्रवृति तथा लक्ष्य दंगा करना तथा बुराई है। हमारे शासन के भारतीय मित्र यह भी बताते हैं कि अभी तक यह आन्दोलन अपनी बाल्यावस्था में है । हिन्दू तथा मुसलमान इसके विरोधी हैं । इस समय सरकार की ओर से थोड़ी सी शक्ति तथा अनुशासन के बल से इसको एक दम कुचला जा सकता है । शासन के विरुद्ध दंगा तथा बुराई की नींव पर खड़ा किया हुआ यह आन्दोलन भविष्य में बड़ी-बड़ी आशंकाओं तथा तोड़ फोड़ की घटनाओं का जन्मदाता बन जावेगा।"

नवम्बर 1871 के अन्त में यह दोनों रिपोर्ट लेफ्टिनेंट गवर्नर के पास पहुंच गई; उसने इन्हें पढ़कर सर्वथा यही फैसला किया, कि गुरु राम सिंह जी के विरुद्ध बूचड़ों के कत्ल करने वाले अपराधियों को उकसाने तथा संकेत देने के अपराध में अदालत में मुकदमा न चलाया जाए। लाट साहब का यह विचार था,कि गुरु राम सिंह के विरुद्ध स्पष्ट रूप में ऐसे प्रमाण तथा गवाहियाँ मिलने की संभावना नहीं, जिनके आधार पर एक खुली अदालत में उसको अपराधी सिद्ध किया जा सकेगा । यदि सरकार की ओर से चलाया हुआ ऐसा मुकदमा न्यायालय में सिद्ध न हुआ, तो इस घबराये हुए तथा डरे हुए सम्प्रदाय के लोग सरकार की इस वैधानिक हार को अपनी जीत समझेंगे ।

लाट साहब का विचार था कि "अभी तक इस प्रकार की परिस्थितियाँ उत्पन्न नहीं हुईं, जिन्हें आगे रखकर हिन्द की केन्द्रीय सरकार की ओर से बंगाल रेगुलेशन नम्बर 3 सन् 1818 के अनुसार गुरु राम सिंह जी तथा उनके प्रमुख सूबों के विरुद्ध वारंट प्राप्त किये जावे । उनका मत था कि गुरु राम सिंह तथा उनके सूबों के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिये सरकार के पास काफी गवाहियाँ, मसाला तथा सामग्री अपने मुकदमों को पक्का करने के लिये नहीं है । न्याय की विशेष कार्यवाहियां जिनका प्रयोग केवल खास हालतों में ही किया जाता है, यहां नहीं की जा सकतीं । यदि अभी तक सफल अदालती कार्यवाही में ही सन्देह है, तो विशेष वारंट तो दूर की बात

है । लाट साहिब ने अपनी उक्त राय देकर पत्र फायल कर दिये ।
इन रिपोर्टों के आधार पर कूकों के दीवान तथा मेले लगाने बंद कर गये । नामधारियों ने भी धर्म तथा समाज सुधार के प्रचार पर कड़े प्रतिबंध लगने पर विदेशी सरकार से सीधी टक्कर लेने का निर्णय कर लिया । उन्होंने सरकार के गलत हुक्म की अवहेलना करने के लिये प्राण हथेली पर धर लिये ।

❋

शहीदी जत्थे का उत्थान

अंग्रेज़ अधिकारी नामधारियों को विदेशी सरकार के विरोधी समझते थे । पंजाब की सिक्ख रियासतों का उस समय अम्बाला डिवीजन के कमिश्नर से ही सम्बन्ध होता था । गवर्नर पंजाब तथा हिन्द सरकार से इनकी लिखापढ़ी कमिश्नर द्वारा ही होती थी ।

पटियाला, नाभा, जींद तथा फ़रीदकोट की रियासतों में रहने वाले सिख अधिकतर नामधारी बनते चले जा रहे थे । इन रियासतों के कई नामी सरदारों तथा जागीरदारों के कुटुम्ब नामधारी बन चुके थे । सक्रोदी वाले गरेवाल सरदारों में से सरदार हीरा सिंह का पिता महाराज महेन्द्र सिंह पटियाला का सेवक था। सरदार हीरा सिंह भी महाराजा के वस्त्र गृह में प्रतिहारी था । महाराजा महेन्द्र सिंह के समय में पटियाला रियासत में कार्यकर्ताओं के दो दल थे । एक दल के नेता सरदार देवा सिंह तथा बख्शी प्रताप सिंह चाहल थे । देहली वाले मौलवी वंश और बसी वाले पठान वंश के सरकारी अफसर , सरदार गुरुमुख सिंह जान तथा चौधरी चढ़त राम इसी दल में थे । दूसरा दल खलीफा सैयद मुहम्मद हसन मुख्य मंत्री का था । इस दल में बखशी गन्डा सिंह धालीवाल तथा शहराजा के सयद मीर वंश के व्यक्ति थे । मीर वंश को महाराजा अमर सिंह जी ने नवाब अवध की सिफारशों के साथ पटियाला में तोपों की ढलाई तथा तोपखाना स्थापित करने के लिये बुलवाया था ।

महाराजा महेन्द्र सिंह अत्यन्त रंगीली वृत्ति वाला राजा था । राजकाज का सारा काम मुख्यमंत्री साहिब के हाथ में था । खलीफा मुहम्मद हुसेन मुख्यमन्त्री तथा सर हेनरी लैफ्ल ग्रिफन पंजाब सरकार के मुख्य सचिव की आपस में अत्यंत घनिष्ट मित्रता थी। खलीफ़ा साहिब को उस समय के अंग्रेज़ों ने 'विस्मार्क आफ इंडिया' के नाम से संबोधन किया है । पंजाब की रियासतों के प्रबंधन के लिये अंग्रेज़ी सरकार सदा ही उसका परामर्श लेती थी. ।

अंग्रेज़ी सरकार की ओर से नामधारिओं के विषय में कढ़ाई तथा प्रतिबंधों की नीति पर अग्रसर होने के लिये यह आवश्यक था, कि सिक्ख़ रियासतों में भी इसी नीति का समर्थन किया जाता । लेखक को अभी तक रियासतों के कार्यालयों में नामधारियों से सम्बन्धित पुरातन दस्तावेज देखने का अवसर नहीं मिला, इसलिए इस समय इस विषय में सविस्तार नहीं लिखा जा सकता । सिक्ख़ रियासतों के इलाकों में प्रचार करने के लिये गुरु राम सिंह जी ने तीन बड़ी यात्रायें कीं । जिनके परिणाम स्वरूप बराड़, सिद्धू, मान, चाहिल, गिल्ल आदि जाट जातियों के बहुत से वंश नामधारी बन गये थे ।

जनश्रुति है कि जब नामधारी सम्प्रदाय बढ़ने लगा, तो इसकी प्रशंसा महाराजा महेन्द्र सिंह के कानों तक पहुंची । सम्भव है कि हिन्द सरकार ने उन्हें इस सम्प्रदाय के विषय में अधिक जानकारी मालूम करके भेजने के लिये लिखा हो । परामर्श के पश्चात् महाराजा ने एक सिक्ख थानेदार को जो अत्यन्त गुण्डा, बदमाश, दुराचारी तथा मदिरा प्रेमी था भैणी में गुरु राम सिंह जी के पास भेजा । भैणी में जाकर वह चार-पांच दिन रहा । गुरु प्रभाव से उसकी आंखें खुलीं और उसने नामधारी बनने की इच्छा प्रकट की । इस पर उसको अमृत छकाकर नामधारी बनाया गया तथा मर्यादा बता कर भजन दिया गया । जब वह लौटकर पटियाले आया, तो इनामों के प्रलोभन, कड़े बन्दी जीवन की धमकियों, तथा नौकरी से पदच्युत करने की सज़ा के बावजूद भी उसने भजन मर्यादा तथा गुरु मंत्र बताने से इन्कार कर दिया। इस पर उसको नौकरी से निकाल दिया गया ।

गांव सकरौदी वाले सरदार हीरा सिंह ने संवत् 1926 (1869 ई.) असाढ़ महीना में अपने गाँव में ही गुरु राम सिंह जी से अमृत छका था। उसी समय से सरकारी नौकरी छोड़ दी थी । उनके साथ ही उनके चचेरे भाई लहना सिंह तथा अनूप सिंह भी नामधारी बन गये थे। सन् 1871 के अन्त तक फूलकियाँ रियासतों में नामधारी सिंहों की संख्या एक लाख से अधिक हो गई थी ।

जैसे जैसे लोग नामधारी बनते जा रहे थे, अंग्रेज़ी सरकार तथा रियासतों की सरकारें, कष्टों प्रतिबंधों तथा अन्याय से इस आन्दोलन के दमन के यतनों में व्यस्त थी । ज्ञानी रतन सिंह मंडी वाला तथा रतन सिंह नाईवाला को फांसियां होने तथा गुरु राम सिंह जी के सम्बन्ध में सरकार की ओर से देश निर्वासन के परामर्शों से नामधारिओं में बहुत जोश फैल गया था । सिक्ख रियासतों के अफसरों के व्यवहार ने रियासतों के नामधारिओं को अत्यन्त दुखी किया हुआ था।

पानी सर पर से गुजरने के कारण सरदार हीरा सिंह गरेवाल ने अपने साथियों से यह परामर्श किया, कि नित्य प्रति के कष्ट झेल झेल कर मरना कायरता है । बेहतर यही है, कि तन कर शीश दिये जावें, ताकि अंग्रेज़ी सरकार तथा रियासतों की सरकारों के अन्याय, अत्याचार तथा जबरदस्ती का नग्न चित्र संसार के सामने आ जाए । इस कार्य- प्रति के लिये एक शहीदी जत्था प्रस्तुत करना आरम्भ किया गया। इस जत्थे के सदस्यों से धर्म तथा गरीबों की रक्षा के प्रण लिये जाते थे। गाँव दयालगढ़ वाले बसाबा सिंह, भूप सिंह तथा वर्याम सिंह भी इसी जत्था में प्रविष्ट हो गये । थोड़े दिनों के पश्चात् बाबा बिशुन सिंह काबुलवाला भी जत्थे में आ मिला । गाँव गगड़पुर के पाठ भोगों के अवसर पर नन्द सिंह और अतर सिंह भी जत्थे के सदस्य बन गये।

शहीद होने वाले सज्जनों की संख्या थोड़े दिनों में ही बढ़ गई । इसमें अधिक सदस्य सिक्ख रियासतों के गांवों और लुधियाना तथा फिरोज़पुर के जिलों के रहने वाले ही थे । यह एक ऐसा संगठन था, जो किसी न किसी आड़ में जानबूझ कर अत्याचारियों के हाथों मृत्यु को स्वीकार करने की शपथ उठाये फिरता था । इन मृत्यु के मस्तानों का नाम ही "मस्तानों का जत्था" प्रचलित हो गया था ।

विदेशी शासन के विरुद्ध स्वतंत्रता संघर्ष में ऐसे जत्थों का होना आवश्यक हो ही जाता है । कांग्रेस आन्दोलन में भी इस प्रकार के कई जत्थे समय समय पर उत्पन्न होते रहे ।

भैणी में माघी का मेला
12 जनवरी 1871

नवम्बर 1871 में गुरु राम सिंह जी की दर्मपत्नि माई जस्सां की मृत्यु हो गई । पंजाब सरकार ने मि. मैकनाब तथा मि. मैंकन्डर्यू की रिपोर्टों के आधार पर गुरु राम सिंह जी के देशाटन पर तथा कूकों के मेलों और दीवानों पर प्रतिबंध लगा दिये थे । गुरु राम सिंह जी को यह आदेश दिया गया था, कि वह अगली माघी के उत्सव पर मुक्तसर के स्थान पर न जावें ।

इन प्रतिबंधों के कारण माघी का मेला भैणी में ही लगाने का फैसला किया गया । स्थान-स्थान पर हरकारे निमंत्रण पत्र देकर भेजे गये, कि संगतें माघी के अवसर पर भैणी में बढ़ चढ़ कर दर्शन दें ।

जब माघी के मेले की सूचनायें भेजी गईं, तो उस समय मस्तानों अथवा शहीदी जत्थे वाले पुरुषों का मेला गांव गगड़पुर में लगा हुआ था। "सतगुरु बिलास पुस्तक" में इसका वर्णन इस प्रकार आया है।

"जिन सिंहों ने धर्म हेतु शीश देने हों -बाबा बिशुन सिंह जी ने बचन किया । गाय गरीब के निमित्त शीश देना होगा, दो बार तो पहले शीश दिया है, तीसरी बार फिर दो शीश । किसी ने पराजित नहीं होना । धर्म का जहाज छूटेगा । पूर भरने लगा हैं" । सिंहों पर रक्त कान्तियाँ चढ़ गई, कि धर्म हेतु हमारे शीश लगेंगे । जो कर्म भाव है, वही सिंहों के हृदयों में आने लगा । इतने में भैणी से एक सिंह आया। कहने लगा, कि भैणी में पाठ व भोग होंगे । आप को बुलाया है ।

सिक्ख मर्यादा अनुसार हर एक मरे हुए सिक्ख पुरुष तथा स्त्री के निमित्त गुरु ग्रन्थ साहिब जी के पाठ का भोग डालकर उसकी आत्मा की सुख शान्ति के लिये प्रार्थनायें की जाती हैं । अमृततर और रायकोट की घटनाओं से सम्बन्धित फाँसी चढ़ने वाले सिक्खों तथा माता जस्सां की

आत्मशान्ति के हित गुरु ग्रन्थसाहब जी की वाणी के 101 पाठों के भोग सम्पूर्ण करने का काम भैणी में आरंभ किया गया था। गुरु ग्रंथ साहिब जी की 25 प्रतियों को इकट्ठा ही खोलकर इनके पाठ किये जाने लगे ।

सरकार को भी माघी के मेले के विषय में गुरु राम सिंह जी के आदेश का पता चल गया था । सरकार की ओर से भैणी साहेब जाने के लिये नामधारियों को रोकने तथा प्रतिबन्ध लगाने की आवश्यकता न समझी गई। भैणी में माघी का यह पहला उत्सव था ।

सन् 1857 के प्रारम्भ से अब तक भैणी में अटूट लंगर भी चलता आ रहा था । गायें, घोड़े-घोड़ियों तथा पशुओं के लिये तबेले भी बन गये थे । लगभग 50 या 60 मनुष्य हर समय ही गुरुद्वारा भैणी तथा डेरों में उपस्थित रहते थे ।

माघी के उत्सव पर बाहर की संगतें तथा नामधारी 10 जनवरी से ही भैणी पहुँचने आरम्भ हो गये थे। 11 जनवरी को गुरुवार के दिन लोहड़ी का अवसर था, तथा शुक्रवार 12 जनवरी को माघी । बाबा विशुन सिंह काबुलवाला, सरदार हीरा सिंह गरेवाल, सरदार लहना सिंह गरेवाल , अनूप सिंह गरेवाल, मित्त सिंह रविदासिया , दयालगढ़ के सरदार भूप सिंह तथा अतर सिंह, "मस्तानों का जत्था" इस शुभ अवसर पर पहुँच गये थे। सरदार हीरा सिंह के रिश्तेदार रड़वाले सरदार भी इनके साथ ही थे । गगड़पुर वाले खड़ग सिंह, प्रेम सिंह भी शहीदी जत्थे के साथ भैणी आये हुए थे ।

गुरु राम सिंह जी को मस्तानों से असीम मोह तथा प्रेम था । आपने शहीदी जत्थे का पड़ाव डेरा से 200 गज पर अकाल बुंगा कुएं पर करवा दिया ।

माघी के मेले पर सरकारी रिपोर्टों के अनुसार नामधारियों की संख्या 500 तथा 1000 के मध्य थी ।

इस महोत्सव में सम्मिलित होने वाले नामधारियों के हृदयों में अंग्रेज़ी सरकार तथा सिक्ख रियासतों की सरकारों के विरुद्ध बहुत ही रोष तथा क्रोध भरा हुआ था। फाँसी चढ़ने वाले नामधारियों की ख्याति तथा

बलिदानों के विषय में अत्यन्त वीर रस भरे गीत गाये जा रहे थे ।

इस महोत्सव पर गांव फरवाही रियासत मलेरकोटला के नम्बरदार गुरुमुख सिंह ने सिखों को बताया कि "मलेरकोटला के मुसलमान काजी तथा न्यायाधीश ने मेरे साथ अत्यंत अत्याचार किया है । बात साधारण थी, परन्तु उसने मन में द्वेष रखकर मेरे सामने बैल को वध करने का हुकम दिया । मुझे बैल को चिल्लाते, तड़फते, टाँगे फडकाते, बिलख-बिलख कर प्राण देते हुए को देखने के लिए विवश किया गया । मैंने जब उसके अत्याचार के विरुद्ध चीख पुकार की, तो उसने मुझे बुरा भला कहा। मेरा अपराध यह था, कि मैंने एक कुजड़े को जो बैल पर गाजर, मूली लाद कर ऊपर आप बैठा हुआ था, केवल इतना ही कहा था, कि भाई बोझ तो पहले ही अधिक हैं, फिर आप क्यों ऊपर चढ़ा बैठा है ? हृष्ट पुष्ट हो, पैदल चल पड़ो । "इस पर कुंजडा तथा मैं झगड़ पड़े, हम दोनों कोतवाली ले जाकर क़ाजी के सामने पेश कर दिये गये।" "मेरी दुहाई आपके पास है, मैं महापापी हूं, क्योंकि मेरे सम्मुख बैल को बिलखा-बिलखा कर मारा गया । मेरा जीना उचित नहीं, मैं अपने पाप के प्रायश्चित के लिये काज़ी के सर चढ़कर मरना चाहता हूं ।"

गुरुमुख सिंह नम्बरदार की घटना ने नाम धारियों के हृदयों में ज्वाला की चिंगारी डाल दी। मस्तानों का जत्था जो पहले ही सिरों पर कफ़न बांधकर इस महोत्सव पर आया था, यह दुहाई सुनकर विहवल हो गया । जत्थे वालों ने कोटला जाकर प्राण देने की तैयारियां आरंभ कर दी ।

पाठों के भोगों के पश्चात् यात्रियों ने अपने-अपने घरों को जाना आरम्भ कर दिया। 13 जनवरी शनिवार को प्रातःकाल रामसर में स्नान करने के उपरान्त सूर्योदय के समय तक दीवान लगा रहा । बाहर से आये हुये बहुत से यात्री अपने अपने घरों को लौट गए । दोपहर के समय पता चला, कि मस्तानों का जत्था अपने अपने घरों को लौटना नहीं चाहता तथा मलेरकोटला जाकर शीश देने के लिये चलने वाला है ।

हंडियाये गांव वाली 'मस्तानी इन्द कौर ने छत पर चढ़कर दुपट्टा हिलाया, तथा ऊंचे स्वर में कहा कि, "शहीदी जहाज तैयार है जिन्हें चढ़ना है, चढ़

जाओ। धर्म तथा गौ गरीबों की रक्षा के लिये शीश देने वाले आ जाएं।"

आवाहन सुनकर लगभग सवा सौ सिंह आ गये । "रीठों की छील रगड़कर शरदाई तैयार की गई । जो सिंह शहीदी दल के लिये अपना नाम पेश करता उसे रीठों का जल पिला कर एक ओर बिठा दिया जाता ।"

गांव के नम्बरदारों तथा चौकीदार ने यह बात इलाका के थानेदार सरफराज़ खां को बताई, जो इस मेले की देखभाल के लिये यहाँ उपस्थित था। इस पर सरफराज़ खां ने मस्तानों के इस आवाहन के सम्बन्ध में गुरु राम सिंह जी से आकर बातचीत की ।

सतगुरु बिलास में यह सारा वृतांत इस प्रकार दिया है।

"वाणियां दशम् गुरु की पढ़ते हैं। आसा की वार, चण्डी चरित्र, अकाल उसतत, चौपाई। जिसको,वाणी कण्ठस्थ नहीं, वे पुस्तक से पढ़ते हैं । गुरु राम सिंह जी ने बाबा लक्खा सिंह को भेजा। लक्खा सिंह ने हीरा सिंह से कहा "हीरा सिंह, राज फिरंगियों का है, तुम मरने मारने की बातें यों न करो" । लक्खा सिंह सूबा ने आकर कहा "मरने मारने की बातें करने से नहीं टलते । श्री सतगुरु जी बचन किया, चलो हम जाकर हटा आते हैं । अकाल बुग्गा स्वयं आकर बचन किया। "उधर से फिरंगी शक्तिशाली हैं , इधर खालसा शक्तिशाली, मैं बेचारा मध्य में आ फंसा ।"हीरा सिंह के कान में बचन किया, सुना नहीं किसी ने तथा पीठ पर थपकी दी । दीनदयाल जी वचन किया, "हीरा सिंह, पगचिन्ह मिटा देने ।" हीरा सिंह ने कहा, सतवचन, तीन बार कहा सतवचन ।...हीरा सिंह को वचन किया, कि तुमने तीन दिन से अन्न नहीं छका, प्रसाद छको। हीरा सिंह ने कहा कि आपने छकाया नहीं, अत: हमने छका नहीं । दीन- दयाल जी बचन किया, तुम हमारा कहा नहीं मानते.....बलवा न करो, जो तुम्हारी इच्छा है, वह हमारी इच्छा है। धर्म सबको प्रिय है.....परन्तु क्या करें समय नहीं है... ... 'उतावली न करो । सिक्ख कहलाना और गोबध होने पर अन्न खाना अवश्य पाप है , परन्तु क्या करें, समय नहीं है । कुछ समय तक हट जावेगा। तुम उतावली न करो। जो बात तुम करते हो, वह बात पुलिस वाले लिखकर

फिरंगी को भेज देते हैं । हमें कहते हैं, तुम्हारे सिंह बलवा की बातें करते हैं । धैर्य करो, शीघ्रता न करो, सरकार हमें कायल करती है , तुमसे कुछ बन नहीं पड़ता ।.....! एक वर्ष दिन ठहरो । यहीं बैठे ही सब कुछ कर लेंगे..... (पन्ना 406) दीनदयाल जी वचन किया, गले में पल्ला डालकर....."तुम कहते हो हुक्म दो, हुक्म दो, मैं तो कुछ नहीं कहता, क्योंकि पौध छोटी है, समय नहीं है, अभी भजन वाणी करो... तुम्हें कौन हुक्म देता है"..... हीरा सिंह ने कहा, हमें गुरु तेग बहादुर जी आदेश देते हैं । दृष्टिगोचर हो बचन करते हैं ।. ... . .अब तो शीश लगेंगे ही, यदि हम ठहरेंगे तो झूठे होते हैं... .. गुरु तेग बहादुर जी का हुक्म है, कि तुम्हारे शीश लगने हैं..... श्री सतगुरु जी बचन किया, गुरु तेग बहादुर जी की आज्ञा की अवहेलना मैं नहीं कर सकता। फिरंगी की तो झेल लेंगे, किन्तु अकाल पुरुष की नहीं झेली जाती ।. रसद ले लो तथा कुएँ पर जाकर खाना बना लो, देर न करो ।"

भाई हीरा सिंह ने विनय की, "जो यहां से आसन उठायेंगे तो चौदह भवनों को आग लगेगी, आज अपने भंडारा से प्रसाद दो । अन्तिम भंडारा है। भंडारा छककर चढ़ाई करेंगे। त्रिलोकी के तो यहां छकते हैं, हम कहां रसद उठाये फिरेंगे ।" हीरा सिंह ने कहा "चार दिन का तो सारा व्यय है । दो दिन का खाना खाकर बैरियों पर जा पड़ेंगे. । यदि हमने उन्हें मार लिया, तो रसदें बहुत। हम मारे गये तो हमारा व्यय दो दिन उनकी ओर रहा ।"

वचन किया, "तुम तैयार होकर आ जाओ, प्रसाद तैयार करते हैं ।" बचन हुआ, "लक्खा सिंह इन्हें प्रसाद छकाओ , इनका अंतिम प्रसाद है, फिर इन्होंने यहाँ नहीं छकना ।" 13 व्यक्ति थे, उस समय प्रसाद छकने के लिये साथ ही आ गये । आगे थानेदार खड़ा था, पाँच सिपाहियों के संग । श्री सतगुरु जी ने बचन किया "तुम इनके जमाई तथा यह तुम्हारे जमाई हैं । यह तेरह शरीर बेबस हैं । मेरे कहने में नहीं हैं। इनका प्रबंध करो। तुम जानो । कहना नहीं, कि सूचना नहीं दी । हमने सूचना देनी थी, सो दे दी है ।" बाबा जवाहर सिंह ने बचन किया "व्यर्थ शोर मचाते हैं । अभी

पौध छोटी है । कच्चे धागे को बल दे दिया, नंगे धड़ जाकर लड़ेंगे क्या ? कोई शस्त्र भी नहीं है, इनके पास ।" थानेदार ने, कहा, 'इन्होंने क्या करना है, भांग पीकर' शेखियां बघारते हैं । बावले हैं । इन्होंने क्या करना है ।"

गुरु राम सिंह जी के हाथ से खाना खाकर मस्ताने शहीदों का जत्था शीश देने के लिए चल पड़ा । लंगर से निकलते समय लगभग 250 सिंह एकत्रित हो गये "पुस्तक युग पलटाऊ सतगुरु" पन्ना 169 तथा 170 पर इसका वर्णन इस प्रकार है ।

"सरदार हीरा सिंह जी ने अकाल बुंगा स्थान के द्वार से बाहर निकलकर... कटार से धरती पर रेखा खींची तथा गर्जना के स्वर में कहा, जिसने शीश देना है वह रेखा से पार हो जावे। " उधर कुछ सिंहों.ने छत पर चढ़कर आवाहन किया कि "धर्म का जहाज तैयार है, आओ यदि किसी ने चढ़ना है तो चढ़ जाओ।" 250 में से 140 सिंहों ने रेखा पार की ।..... अब सरदार हीरा सिंह जी ने धर्मयुद्ध के लिये प्रस्तुत होने की प्रार्थना की, तथा विदा होते समय सतगुरु जी से पूछा, "महाराज पहला पड़ाव कहां किया जावे ?" सतगुरु जी ने कहा "है भी रब्ब, होसी भी रब्ब ।" इसका अर्थ मस्तानों ने गाँव रब्बों समझा । 13 जनवरी 1871 शनिवार वाले दिवस दिन ढलते ही शहीदी जत्था भैणी से मलेरकोटला की ओर चल पड़ा ।

साहनेवाल के थानेदार ने हवलदार कलंदर खां, हमीर सिंह, सुक्खू नम्बरदार, दौलतराम नम्बरदार तथा भगवाना चौकीदार जत्थे के पीछे कार्यवाही का पता रखने के लिए भेज दिये । गाँव भैणी से चलकर गांव लाटों से होता हुआ जत्था गांव रामपुर कटानी रियासत पटियाला में पहुंच गया। दोनों नम्बरदार गांव लाटों से लौट आये । इस पर अंग्रेज़ी इलाका की पुलिस ने वापिस साहनेवाल आ कर थानेदार को इसकी रिपोर्ट कर दी । थानेदार ने मुकाम दोराहा रियासत पटियाला के थानेदार को यह समाचार भेज दिया, जिसके इलाका में अब जत्था पहुंच गया था।

थानेदार सरफराज खां शाम की गाड़ी से महोत्सव के विषय में, तथा मस्तानों के जत्थे की इच्छा के सम्बन्ध में, लुधियाना रिपोर्ट देने के लिए

पहुंच गया । आते ही उसने अपनी रिपोर्ट ज़िला के पुलिस अफसर को दे दी। क्योंकि यह रिपोर्ट अत्यंत आवश्यक थी, तथा इस सम्बन्ध में विशेष पेश बन्दियों की आवश्यकता थी, इसलिए पुलिस कप्तान डिप्टी कमिश्नर को सारी बात बताने के लिए थानेदार को अपने साथ ही उसके पास ले गया। मलेरकोटला की रियासत की गद्दी का उस समय झगड़ा चल रहा था, तथा उस समय वहां कौंसिल का प्रबंध था । यह कौंसिल डिप्टी कमिश्नर लुधियाना के ही आधीन थी । इसी कारण डिप्टी कमिश्नर ही रियासत के प्रबंध तथा इस में शान्ति स्थापित रखने का उत्तरदायी था। डिप्टी कमिश्नर मि. कावन ने सारी रिपोर्ट सुनकर थानेदार को हुक्म दिया, कि वह स्वयं जाकर फूलकियां रियासतों के लुधियाना में रहने वाले वकीलों को नामधारियों के शहीदी जत्था के मलेरकोटला को प्रस्थान की सूचना दे । रात के दस ग्यारह बजे से पहिले पहिले यह समाचार लुधियाना में रहने वाले रियासतों के वकीलों अथवा एजेंटों को पहुंचा दिये गये।

शहीदी जत्था लाटों, कटानी, रामपुर, पैल गांवों के रास्ते होता हुआ आधी रात से पहिले गाँव रब्बों थाना डेहलों ज़िला लुधियाना में पहुंच गया। रब्बों में नामधारियों के कुएं पर स्नान किया। 14 मिती को सायंकाल तक जत्था यहीं टिका रहा । यहां ही खाना बनाकर खाया । गांव वाले नाम-धारियों ने भी यहां ही खाना खाया। शहीदी जत्थे में सम्मिलित बाबा पहाड़ा सिंह नामधारी का जन्म मलौद का था। वह मलौद के मालक सरदार बदन सिंह का मित्र था। मलौद वाला सरदार एक बार गुरु राम सिंह जी के पास भी उपस्थित हुआ था तथा सेवा के लिये विनय की थी । गांव रब्बों में यह विचार हुआ, कि काज़ी तथा उसके हिमायतियों से बदला लेने के लिये यह आवश्यक है, कि छोटे मोटे शस्त्र पास हों । प्रस्थान के समय सवा सौ के इस जत्थे के पास दातुनें काटने वाली तीन छोटी कुल्हाड़ियां ही थी। शीश भेंट के लिये यह आवश्यक था, कि दो चार विरोधियों को भी पार लगाया जाए, क्योंकि इसके अतिरिक्त शीश भेंट के प्रण पूर्ण नहीं हो सकते थे ।

यह विचार करके निर्णय किया गया, कि सरदार मलौद से शस्त्र

मांगे जायें । रब्बों से चलकर जत्था सूर्यास्त के पश्चात् गांव मलौद में पहुंच गया। पश्चिमी द्वार से जत्थे के समस्त मनुष्य किला में सरदार बदन सिंह के पास आ गये । सरदार पहिले तो बहुत आदर सत्कार से मिला, परन्तु जब शस्त्र देने की बात चली तो उसने स्पष्ट रूप में ना कर दी । इस पर पहाड़ा सिंह की सरदार से तू-तू मैं मैं हो पड़ी । सरदार ने ' स्वाभाविक ही सरदारी का रोब जमाना चाहा । इस पर हड़ियायेवाली माई इन्द कौर ने सरदार को कुल्हाड़ी दे मारी, जिससे उसको थोड़ी सी चोट आई। वह भाग कर अन्दर जा घुसा। किले में शोर मच गया, तथा लोग एकत्रित हो गये। नामधारियों ने सरदार की एक तलवार तथा उसके सेवक जयमल सिंह की एक दुनाली बन्दूक ले ली । तबेले में से एक घोड़ा तथा दो घोड़ियां ही मिल सकीं । सरदार के आदमियों ने खतरे का नक्कारा बजा दिया । साथ के गांव खेड़ी के नम्बरदार तथा 80-90 आदमी मलौद आ पहुंचे । हाथों हाथ लड़ाई होने लगी । सरदार के दो आदमी बूटा तेली कोचवान तथा मुन्शी नबी बख्श मारे गये । सरदार बदन सिंह तथा एक और पुरुष निहाल सिंह घायल हुए। नामधारिओं में से हंड़ियायेवाला नन्द सिंह तथा अतर सिंह खेत रहे ।

❋

शहीदी जत्थे का मलेरकोटला पहुँचना

मलोद की घटना के पश्चात् शहीदी जत्थे ने मलेरकोटला की ओर प्रस्थान किया । पाँच कोस की मंजिल तै करके जत्था आधी रात से पहले ही कोटला की सीमा में पहुंच गया । नगर से बाहर एक कोस पर एक पुराने उपवन में डेरा डाला । सूर्योदय तक यहां ही रहे । रास्ते में जत्थेदारों ने एक बार फिर रेखा खींची और कहा "कि अब आगे वह चले, जिन्हें शीश भेंट करना हो । शेष बेशक लौट जावें ।"

नामधारियों के शहीदी जत्था के मलेरकोटला पहुंचकर सिर देने के प्रणों का समाचार लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर मिस्टर कावन ने 14 तारीख की आधी रात से पहले रियासत मलेरकोटला के अफसरों को पहुंचा दिया था। परिणाम- स्वरूप मलेरकोटला के दरवाज़ों पर गार्द खड़ी कर दी गई थी। रात के समय एक गश्ती गार्द फ़सील के बाहर भी लगा दी गई थी। परन्तु सूर्योदय से कुछ पहले गार्द हट गई थी ।

15 जनवरी प्रातःकाल ही शहीदी जत्था नगर की फ़सील के बाहर ढाबी दरवाज़ा पर पहुंच गया । इस द्वार के अन्दर साथ ही कोतवाली थी। इस मोहल्ले में ही बूचड़ रहते थे, जो जमालपुर के रुहेले पठानों की शह पर गोबध करते थे। यहां एक स्थान से फ़सील टूटी हुई थी। कुछ नामधारियों ने इस टूटी हुई फ़सील के रास्ते अन्दर जाकर बड़े फाटक खोल दिये तथा जत्था नगर में प्रवेश कर गया और चोर मारों के मोहल्ले में पहुंच कर जहां बूचड़ तथा उनके हितैषी रहते थे, जयकारे लगाने आरम्भ कर दिये । नगर में खलबली मच गई। लोग प्राण रक्षा के लिये छत्तों पर चढ़ गए, तथा जत्थे वालों को ईंट पत्थर आदि मारने लगे ।

जत्थे का निशाना गुरमुख सिंह की दुहाई के अनुसार कोतवाल, काज़ी तहसीलदार तथा नाज़िम से बदला लेना था, जिन्होंने गुरमुख सिंह के साथ अन्याय तथा अत्याचार किया था। जत्था जयकारे लगाता हुआ सीधा

किले के चौक में कोतवाली के सामने आ गया । सरदार हीरा सिंह तथा लहना सिंह सबसे आगे घोड़ों पर चढ़े हुए हाथों में तलवारें थामे, शहीदी जत्थे का नेतृत्व कर रहे थे । कोतवाली के सामने चौक में डटकर लड़ाई हुई । कोतवाल अहमदखां तथा उसके सात सिपाही मारे गए। मुन्शी हाफिज अली, शेरा तथा गैंडा सिपाही बुरी तरह घायल हुए। मीरा वक्श, झंडा, कौड़ा तथा जस्सा अधिक घायल हुये तथा बीरा, गंडा , कम्भा, माहियों, सूबेदार शहादत खान, गुलाम मुहम्मद, खुदाइया तथा दीना को चोटें आई ।

घण्टा सवा घण्टे की घोर लड़ाई में जत्थे वालों के सात साथी मरे । वापिस जाते हुए जत्थे वाले अपने सब घायलों को साथ ही ले गये परन्तु वजीर सिंह एवं एक और सज्जन लड़ते-भिड़ते कहीं पीछे ही रह गये, इन्हें कोटला वालों ने पकड़ लिया।

दिन होने पर जत्था केलों वाले द्वार के रास्ते नगर से बाहर आ गया । घायलों की संभाल करने तथा खाना खाने के लिए यह विचार किया गया, कि गांव रड़ पहुंच कर पड़ाव किया जावे । यहां के 6 नामधारी गुरुदित्त सिंह, हीरा सिंह , विशुन सिंह , कर्म सिंह, सुन्दर सिंह तथा हरनाम सिंह शहीदी जत्था के साथ थे । वे शब्द कीर्तन करते, जयकारे लगाते रड़ गांव की ओर चल पड़े। कोटला के अफसर काज़ी खुदाबक्श, रिसालदार मीरांबक्श, रिसालदार सरमस्त खां, शेरखां सवार तथा नत्थू आदि भी जत्थे के पीछे-पीछे चल पड़े। यह लोग जत्थे से सीधी लड़ाई करने का साहस नहीं करते थे। एक दो बार हल्ले किए, परन्तु जब जत्थे वाले पीछे हटकर जयकारे लगाते हुए इनपर पड़ते, तो सब पीठ दिखाकर भाग लेते ।

गाँव भूदन के टीले पर दफादार समुन्द खां ने सरदार हीरा सिंह को हाथों हाथ तलवार के युद्ध के लिये चुनौती दी । सरदार घोड़ा भगाकर समुन्द खां के सामने जा खड़ा हुआ, तथा उसको पहिला वार करने के लिए ललकारा । समुन्द खां ने पैंतरा बांधकर सिर को तलवार चलाई।॥ सरदार ने ढ़ाल न होने के कारण बायां बाजू आगे कर दिया । वार खाली गया । तलवार बाजू को थोड़ा सा चाट गई । सरदार ने थोड़ा बढ़कर कनपटी का हाथ चलाया

। समुन्द खां का सिर कद्दू की भांति कटकर नीचे धरती पर जा गिरा । घायल बाजू पर पट्टी बांधकर सरदार उसी प्रकार जत्थे का नेतृत्व करने लगा । जत्था आगे आगे जा रहा था, तथा कोटला वाले पीछे-पीछे चले जाते थे । जत्थे वाले जब भी लौटकर इन पर पड़ते, तो भाड़े के टट्टू पहले ही भाग निकलते । चलते-चलते इस प्रकार कई झड़पें हुई । मलेरकोटला वालों के साथ एक पुरुष था, जो अच्छा निशानची था। उसके पास केवल एक ही गोली थी । उसने शिस्त बांधकर निशाना मारा ।" गोली हीरा सिंह के हाथ में लगकर घोड़े को चीरती हुई चली गई । घोड़ा तो उसी समय मर गया, परंतु हीरासिंह बच गया । आगे टीला था उस टीले पर जाकर हीरा सिंह ने बर्छा गाड़ कर बचन किया । "बापू जी का हुक्म इतना ही है । हम तो आगे तिनका नहीं तोड़ेंगे"... । सिंह रड़ गांव आये, तलवारों की ढेरी लगा दी । हीरा सिंह ने कहा, हमें जितना हुक्म श्री गुरु तेग बहादुर जी का था, उतना निभा दिया है । अब चले जावो घरों को जिन्हें जाना है । जिसने शीश देना है, वह देगे । तुम चले जाबो अब । अब तलवार नहीं उठानी है, जैसी होगी देखी जावेगी । सिंहों को हीरा सिंह जी वचन किया। "जिनको प्राण प्रिय हो वह अब भी चले जावें ।" (सतगुरु बिलास पन्ना 416)।

रड़ पहुंचने पर गांव वाले साथी तो अपने घरों को चले गये तथा शेष सारे सिंहों ने पीपल वाले कुएं पर पड़ाव किया । तेल कढ़ाई में डालकर गर्म किया गया । सरदार हीरा सिंह ने पहिले नारायण सिंह के टुण्ड को तला । फिर अपना घायल बाजू गरम तेल में डालकर तल लिया । सरदार हीरा सिंह के रिश्तेदारों तथा गांव वालों ने सेवा की । सतगुरु बिलास पन्ना 416 पर लिखा है । "भाई हीरा सिंह ने सावन सिंह को बचन किया, शहीदी देने वाले कितने सदस्य हैं," सावन सिंह ने कहा 70 । हीरा सिंह जी ने कहा 72 चाहिये थे । उसी समय दो किसान हाथों में दरांतीयां लिये आकर जत्थे में बैठ गये । हीरा सिंह ने कहा "तुम क्यों फंसते हो ?" उन्होंने उत्तर दिया "हम भी साथ ही शीश देंगे ।" दूध था ,खीर बनाई, छककर निश्चिन्त होकर विराजे ।"

जत्थे का गिरफ्तार होना

जत्थे के अपने आप को गिरफ्तार कराने, का वर्णन, संत खालसा अर्थात् इतिहास नामधारी, कर्त्ता सरदार हरनाम सिंह गाँव बगुली कलां, ज़िला लुधियाना संवत् 1991 की छपी पुस्तक में इस प्रकार दिया है ।

सुधारे हैं जालिम हमने ।
आओ अब हम भी हों तैयार ॥
गवर्नमेंट के चलकर पास ।
अपने आप हम हों गिरफ्तार ॥
स्वयं ही करें स्वीकार अपराध ।
न हों कहीं को हम फरार ॥
देकर धर्म हित शीश " हरिनाम' ।
अब भवजल से हों हम पार ॥

कर्ता पृष्ठ 37 पर लिखता है, कि "हमारे गांव बगुली के रामसहाय तथा समुन्द सिंह उस समय गांव रड़ आये हुए थे । वे आंखों देखा हाल यू' बताते थे। जत्थे वालों ने परामर्श किया कि शीघ्र ही सरकार के पास चलो और बलिदान प्राप्त करो..---:-" "इस शहीदी जत्थे" ने गांव रड़ आकर कूक-कूक कर कहा, हम मरना चाहते हैं । हमें कोई सज्जन सरकार के पास ले चलो । हम किसी को मारने में वीरता नहीं समझते, बल्कि स्वयं मरने में वीरता समझते हैं।"

गांव रड़ में विश्राम लेकर तथा खाना खाकर जत्था साथ के थाना शेरपुर की ओर चल पड़ा। अपने आप गिरफ्तार होने की अनसुनी तथा असम्भंव सी बात को सुनकर गांव रड़ के जयमल सिंह, उत्तम सिंह, और कई पुरुष तथा रामनगर का नम्बरदार पंजाब सिंह भी जत्थे के साथ ही चल पड़े । जत्थे वाले सत श्री अकाल के जयकारे लगाते तथा - कीर्तन करते हुए

रात के समय शेरपुर पहुँच गये । थानेदार को सारा बृतान्त सुनाकर तथा इकबाली बयान देकर सिंहों ने अपने आपको गिरफ्तारी के लिये पेश कर दिया।

अमरगढ़ का सहायक नाजिम सैय्यद निआज़ अली भी उस समय शेरपुर में ही था। उसने जत्थे को गढ़ी में बन्द कर दिया । महाराजा साहिब बहादुर को पटियाला में तथा कोटला के अफसरों को कोटला में समाचार भेज दिये गये । पटियाला के मुन्शी खाना विभाग ने यह समाचार अपने लुधियाना के एजेंट को अंग्रेज़ी हाकिमों तक पहुंचाने के लिये हुक्म दिया ।

16 तारीख की सायं को महाराजा साहिब पटियाला के लुधियाना वाले एजेन्ट तथा वकील ने कमिश्नर साहब फ़ोरसाईथ को इस प्रकार की सूचना दी, "70 के लगभग कूकों की एक टोली जिनमें कइयों के पास बंदूकें थी, कइयों के पास तलवारें, शेष के पास गंडासे तथा लट्ठ थे, मलेरकोटला से शेरपुर पहुंचे । शेरपुर मलेरकोटला से 13 मील पर है। उन्होंने अपने आपको अमरगढ़ के नाज़म के सुपुर्द कर दिया है । इनमें से तीस आदमी घायल हैं । यह समस्त स्वयं स्वीकार करते हैं , कि वे कोटला के हल्ला में सम्मिलित थे । जो कूके इस हल्ला में सम्मिलित थे उनकी संख्या 125 से अधिक नहीं थी ।" खोज करने पर जत्थे की गिरफ्तारी के सम्बन्ध में पटियाला रियासत वाले एजेन्ट तथा वकील की पहिली रिपोर्ट ही शुद्ध प्रतीत होती है ।

यथार्थ में यह प्रतीत होता है कि नियाज़ अली, थानेदार अथवा कोई और पुलिस का आदमी कूकों के रड़ पहुंचने का समाचार सुनकर डरता हुआ वहां गया ही नहीं था ।

शहीदी जत्थे के मलौद से प्रस्थान करने के पश्चात् सरदार बदन सिंह ने कूकों के साथ लड़ाई होने तथा दोनों ओर के कुछ आदमियों के मरने तथा घायल होने की सूचना इलाके के थानेदार को डेहलों थाना में भेजी । सरदार की सूचनानुसार यह समाचार पुलिस कप्तान को भेज दिया गया। जिसने मि. कावन डिप्टी कमिश्नर से सारी बातचीत की । म्रि. कावन को यह समाचार

सुबह ही मिल गया ।

इस पर मि. कावन तथा ज़िले का पुलिस कप्तान लेफ़्टीनेंट कर्नल परकिंज़ सिपाहियों के साथ मलौद को चल पड़े । ज़िला के सिविल सर्जन मि. जे0 इंज़ को सुबह आठ बजे 15 जनवरी सोमवार को पुलिस कप्तान द्वारा इस अभिप्राय की हिदायत मिली, कि वह भी मलौद की घटना में मरे हुए तथा घायलों का निरीक्षण करने के लिये मलौद पहुंच जाए।

मि. कावन ने मलौद को जाने से पहले पंजाब सरकार के सचिव को जो उस समय गवर्नर के साथ देहली में हो रहे फौजी जलसे पर गया हुआ था, निम्नलिखित तार दिया :--

"200 कूकों ने पिछली रात मलौद के किले पर आक्रमण किया । सरदार बदन सिंह को घायल कर दिया तथा दो पुरुष जान से मार दिये, एक कूका मारा गया है तथा दो बन्दी हैं । मैं अभी जा रहा हूं । शेष रिपोर्ट डाक द्वारा ।"

15 जनवरी को अंबाला के कमिश्नर को भेजी गई अपनी रिपोर्ट में मि. कावन लिखता है:--

"महाराजा पटियाला को तार तथा पत्र द्वारा सूचना दी गई है, कि गांव सकरौदी रियासत पटियाला के हीरा सिंह तथा लहना सिंह इस जत्थे के नेता बताये जाते हैं । उसे कहा गया है कि वह उनको गिरफ्तार करें तथा हमें सहायता दे । मैंने (गुरु) राम सिंह तथा उसके मुख्य सूबों को मलौद में पूछताछ करने के लिए बुला भेजा है । मैं आशा करता हूं कि जत्थे वाले सब आदमी पहचाने जायेंगे।"

पंजाब सरकार के सचिव ने यह तार भारत सरकार के गृह सचिव को उसी दिन भेज दिया, उसने अपनी और से इसमें यह शब्द बढ़ाये ।

"यह अपराध कूकों के बहुत बड़े साहस को प्रकट करता है ।"

इसके उत्तर में वायसराय ने पंजाब के गवर्नर को 16 जनवरी को यह तार दिया ।

"आप का कल वाला तार मिला, अब यह बात आवश्यक है, कि

अधिकतम, अनुभवी अफसर ढूंढकर घटना वाले स्थान पर तफ्तीश के लिये भेजा जाए । सबसे आवश्यक बात यह है, कि इस मुआमले की सब घटनाओं का बिना ढील के विश्लेषण किया जावे तथा तथ्य ढूढ़ा जावे ताकि सरकार को इस अति चिंतादायक उपद्रव के फैलने के वास्तविक कारणों तथा इसमें भाग लेने वाले पुरुषों के सम्बन्ध में किसी असत्य सूचना के मिलने की कम से कम सम्भावना भी न रह जावे ।"

डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस वाले अभी मलौद पहुंचे ही नहीं थे, कि रियासत कोटला के एक सवार ने डिप्टी कमिश्नर को सूचना दी, कि उसी दिन सुबह ही कूकों के जत्थे ने मलेरकोटला पर हल्ला कर दिया था । सवार ने यह भी बताया, कि जब वे कोटला से समाचार लेकर चला था, उस समय कूकों ने शहर के गिरद घेरा डाला हुआ था तथा डटकर लड़ाई हो रही थी । इसपर मि. कावन ने उतावली से एक तार पंजाब सरकार को फौज भेजने के लिये लिखा । कोटला से आये हुए सवार को ही यह तार देकर लुधियाना दफ्तर में भेज दिया ताकि यह तार शीघ्र ही भेज दिया जाये ।

पंजाब का गवर्नर तथा मुख्य सचिव मि. ग्रिफन इन दिनों देहली में एक बड़े फौजी सम्मेलन में शामिल होने के लिये आये हुए थे। महाराजा महेन्द्र सिंह साहब पटियाला भी देहली में ही थे ।

15 जनवरी को दोपहर के लगभग मि. कावन, मि. परकिन्ज़ तथा पुलिस के आदमी मलौद पहुंच गए। मि. इन्ज़ सिविल सर्जन भी घोड़े पर चढ़कर सायंकाल तक उन्हें जा मिला । वर्षा होने के कारण सिविल सर्जन को रास्ते में देर हो गई थी। सहायक सिविल सर्जन मिर्जा अमीर बेग भी औषधियां, डाक्टरी के यन्त्र तथा मरहम पट्टी लेकर सिविल सर्जन के साथ ही मलौद पहुंच गया था । सरदार के पकड़े हुए घायल कूकों को पुलिस ने अपनी हिरासत में ले लिया। मि. कावन लिखता है, कि मलौद पहुंचने पर 7 आदमी दोषियों के रूप में मेरे सामने पेश किये गये । इनमें से चार घायल घटनास्थल पर ही पकड़े गये थे । गवाहियों तथा उनके अपराध स्वीकृति के बयानों से उनके विरुद्ध पूरा-पूरा प्रमाण बन जाता है। भगवान सिंह , ज्ञान सिंह तथा थम्मन

सिंह रियासत पटियाला के रहने वाले हैं । मेहर सिंह अलावलपुर ज़िला जालंधर का है। यह सब कूके हैं । बाकी तीन के विषय में अभी सन्देह है, कि वे आक्रमण में सम्मिलित थे अथवा नहीं । उन पर और अपराधों में मुकदमा चलाने के लिये उन्हें संरक्षण में रख लिया गया है ।"

सिविल, सर्जन ने अपनी रिपोर्ट में लिखा, कि मलौद वालों के दो आदमी मारे गए तथा दो घायल हुए । तथा कूक़ों में से दो मरे और चार घायल हुए ।

मि. कावन ने 16 जनवरी की सुबह को निम्नांकित तार कमिश्नर को दिया जो पंजाब सरकार ने उसी दिन हिंद सरकार को कलकत्ता भेज दिया । "तफ्तीश चल रही है। मैं आशा करता हूं, कि समस्त घटनाओं तथा इनमें भाग लेने वाले समस्त पुरुषों के नामों का पता चल जायेगा । मैं आज रात अथवा कल कोटला चला जाऊंगा । यह निश्चित रूप में पता नहीं चला, कि विद्रोही कूके कहां हैं ?"

16 जनवरी मंगलवार वाले दिन दोपहर को 11 बजकर 50 मिनट पर पंजाब के गवर्नर ने दिल्ली से वायसराय को कलकत्ते में निम्नलिखित तार दिया ।

"मलौद पर कूकों के आक्रमण की रिपोर्ट पहले दी गई है । इसके साथ ही कूकों ने प्रात:काल कोटला पर आक्रमण कर दिया। कोटला के सात आदमी मारे गये हैं । कूकों की संख्या 500 के लगभग थी। डिप्टी कमिश्नर लुधियाना के फौज की मांग करने पर एक देसी पैदल रेजिमेंट, गोरखों की कम्पनी, रसाला के दस्ते आज सुबह ही अम्बाला तथा लुधियाना के मध्य-स्थान गांव खन्ना में भेज दिये गये हैं। डिप्टी कमिश्नर ने तार दी है, कि बहुत से कूके मलेरकोटला में घेर लिये गये हैं तथा नाभा से रसाला भी उसके पास पहुंच गया है। परन्तु मैंने फिर भी इस फौज को जाने से नहीं रोका । पहली घटनाओं के साथ ही इन उपद्रवों के होने से यह पता चलता है, कि इस सम्प्रदाय के नेताओं ने एक भयानक विनाशकारी षड्यंत्र की रचना की हुई है । जब तक यह नेता आज़ाद हैं, हमारे शासन को भय ही भय है ।

इसलिये मैने अपनी ओर से मि. फोरसाईथ को गुरु राम सिंह तथा मुख्य सूबों को पकड़ने के अधिकार दे दिये हैं । रिपोर्ट डाक द्वारा ।"

इसके उत्तर में वायसराय ने कलकत्ता से गवर्नर पंजाब को 16 जनवरी को यह तार भेजा, "तुम्हारी कार्यवाही की पूरी पूरी पुष्टि करता हूँ । अधिक गतिविधि की प्रतीक्षा में हूँ ।"

मलौद पर आक्रमण का तार जब गवर्नर साहब को देहली में मिला, तो उसने शीघ्र ही अम्बाला डिवीजन के कमिश्नर मिस्टर फोरसाईथ को लुधियाना पहुंचकर पूर्ण रिपोर्ट भेजने के लिये आवश्यक हिदायतें कर दी । उसके गाड़ी चढ़ने से पहले कोटले के आक्रमण की रिपोर्ट भी गवर्नर को मिल गई थी । इस पर उसने कमाण्डर-इन-चीफ (प्रधान सेनापति) के साथ परामर्श किया, तथा यह प्रबंध किया गया, कि एक नम्बर गोरखा पलटन, बारह नम्बर रेजिमेन्ट की कंपनियां, तथा एक खच्चरों की बातरी कोटला के निकट खन्ना में पहुँच जावे। 12 रसाला का एक ट्रुप भी इनके साथ ही जावे । लुधियाना की रक्षापंक्ति को दृढ़ करने के लिए 45 नम्बर पलटन की तीन कम्पनियां तथा गोरखों के तोपखाने की आधी टुकड़ी को वहां भेज दिया जावे ।"

16 तारीख को गवर्नमेंट पंजाब के कार्यवाहक सचिव मिं. एल. एच. ग्रिफन ने हिंद सरकार के सचिव मि. ए. सी. बेली को लिखे पत्र के अन्त में लिखा ;

"गवर्नर साहब ने गुरु राम सिंह तथा उसके बड़े और सम्माननीय सूबों साहब सिंह, रूढ़ सिंह, लक्खा सिंह, काहन सिंह, ब्रहमा सिंह , जवाहर सिंह, मलूक सिंह तथा हुकम सिंह को पकड़ने के आदेश दे दिये हैं । गुरु राम सिंह की गिरफ्तारी शीघ्रातिशीघ्र की जावेगी । गिरफ्तारी के विषय में सब बातचीत और विस्तृत परामर्श अंबाला के फौजी डिवीजन के जनरल मि. टायटलर , और अम्बाला के कमिश्नर के साथ कर लेंगे । यदि यह सारे व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये, तो सबको तत्काल इलाहाबाद भेज दिया जाएगा, क्योंकि गवर्नर साहब के विचारानुसार इन्हें पंजाब में रखना ठीक नहीं । इन

सबको इलाहाबाद से आगे कहां भेजा जाय, यह गवर्नर साहब पश्चात् विचार करके भेजेंगे । इस समय हम विनय करते हैं, कि वायसराय साहब बहादुर इन समस्त उक्त सज्जनों के विरुद्ध रेग्यूलेशन नं. 3 सन् 1818 के अनुसार वारन्ट जारी कर दें।"

"अभी तक इतने कम समाचार मिले हैं, कि जिनके आधार पर इसी समय यह कहना कठिन है, कि कूके भविष्य में कौन सा पथ अपनायेंगे ? गवर्नर साहब को इस बात की आशा है, कि उक्त कार्यवाहियां करने से देश में तत्काल शान्ति तथा विश्वास पुनः स्थापित हो जावेगा । गवर्नर साहब इन कार्यवाहियों का होना नितान्त आवश्यक समझते हैं तथा इन्हें विश्वास है कि वायसराय साहब बहादुर इन कार्यवाहियों के लिए अपनी सम्मति देंगे।"

16 तारीख को गुरु राम सिंह जी 5 सूबों के सहित घोड़ों पर चढ़कर भैणी से दोपहर के समय तक मलौद पहुंच गए । आप डिष्टी कमिश्नर के निमंत्रण पर ही यहां आये थे । डिष्टी कमिश्नर कोटला जाने के लिए बहुत उत्सुक था। डिष्टी कमिश्नर ने आपसे थोड़ी सी बातचीत की तथा कहा कि यदि आपकी आवश्यकता हुई, तो आपको लुधियाना में बुला लिया जायेगा । आप ने मि. कावन के इस प्रकार के व्यवहार को बहुत बुरा माना ।

गुरु राम सिंह जी के मलौद जाने का प्रसंग सतगुरु बिलास" पृष्ठ 417 पर इस प्रकार अंकित है--"थानेदार ने कहा कि मलौद में फिरंगी ने याद किया है। वे 5 सिंहों के साथ चले। बाबा जवाहर सिंह, बाबा काहन सिंह , बाबा साहिब सिंह, खज़ान सिंह तथा जोगा सिंह । गुरु जी लाल घोड़ी पर सवार हुये। साथ एक गाड़ी थी, जब आध कोस गये तो आप गाड़ी में बैठे और घोड़ी एक साथी को दे दी। रात गुड़थुड़ी गांव में जाकर रहे। रातको विराजे नहीं। साथियों से कहा कि इस समय तुम्हारा झाड़-झाड़ बैरी है । प्रात:काल चलकर मलौद गये... जब फिरंगी के पास गये तो फिरंगी ने कहा यह देखो तुम्हारे सिंहों ने लड़ाइयां की हैं । एक दरोगा मारा, दूसरा काज़ी मारा है । तुम्हारे सिंह भी दो मरे हैं, मलौद के सरदार के पुत्र को कुल्हाड़ी मारी है ।"

गुरु राम सिंह जी मलौद से लौटते हुए गांव सियाड़ आकर ठहरे । गांव भिक्खी वाले बनिये नामधारी सावन सिंह ने यहीं आकर मलेरकोटला के आक्रमण का वृत्तान्त सुनाया ।

16 जनवरी की रात तथा 17 जनवरी के दिन भी सियाड़ में टिके रहे। सियाड़ बैठे ही 17 जनवरी को सायं को मलेरकोटला में चलने वाली भरमार तोपों के धड़ाके तथा गूंजें अपने कानों सुनीं । इन तोपों से नामधारी उड़ाए जा रहे थे ।

मलौद से चलने से पहिले मि. कावन ने निम्नलिखित तार लिखकर लुधियाना से पंजाब सरकार के नाम भेजने के लिये हरकारे के हाथ भेजा :--

"मि. कावन की ओर से, स्थान मलौद । सचिव पंजाब गवर्नमेंट देहली के लिए; तारीख 16 जनवरी 1872 ।

"मलौद के चार हत्यारों के विरुद्ध पक्का प्रमाण है । आज्ञा दें कि मैं उन्हें घटनास्थल पर ही फांसी देकर मार दूं'। शीघ्रतम दंड देना अत्यन्त आवश्यक है । मैं कोटला जा रहा हूं ।" यह तार लुधियाना से 16 तथा 17 तारीख की अंतर्गत रात को 9 बजे देहली भेज दिया गया ।

16 तारीख की दोपहर को डिप्टी कमिश्नर, पुलिस कप्तान, सिविल सर्जन मि. इन्ज़ तथा शेष कर्मचारी मलौद से मलेरकोटला की ओर चल पड़े । रास्ते में जींद तथा नाभा के रसाले कोटला की ओर जाते हुये उन्हें मिले । सैयद नियाज़ अली भी कोटला से होकर मि. कावन को मिलने के लिये सड़क पर आता हुआ मिला । सैयद नियाज़ अली ने मि. कावन को बताया, कि उसने कूकों का पूर्ण जत्था गिरफ्तार करके शेरपुर की गढ़ी में बन्द कर दिया है । यह समाचार सुन कर मि. कावन ने मलेरकोटला पहुँच कर गवर्नर पंजाब को तार दिया--"शान्ति पुनः स्थापित हो गई है । 100 के लगभग कूकों में से कुछ मारे गये हैं, कुछ घायल हुए हैं, तथा कुछ बन्दी किये गये हैं॥ पटियाला, नाभा और जींद के नरेश पूर्ण सहायता दे रहे हैं।"

मि. कावन तथा उसके साथियों ने कोटला नगर के लोगों को धैर्य दिलाया। सिविल सर्जन ने मरे हुये कूकों को देखा तथा घायलों की मरहम

पट्टी की । मि. कावन ने सायं को साढ़े सात बजे निम्नलिखित पत्र मि. फोरसाइथ कमिश्नर को लिखा :--

(1) "आपके कल वाले तार, जिसमें आपने मुझे बताया था कि आप आज सायंकाल तक लुधियाना पहुंच जावेंगे तथा जिसमें यह आदेश भी था कि आपके पहुंचते ही समस्त रिपोर्ट आपको मिल जावे," के उत्तर में निवेदन हैं कि यह तार मुझे अभी मिला है, इस पर मैं आपको रिपोर्ट देता हूं, कि शान्ति पूर्ण रूप से स्थापित हो गई है तथा अब आपके कोटला पहुंचने की कोई आवश्यकता नहीं ।"

(2) विद्रोही नामधारियों का टोला, यद्यपि कोई और (उचित) नाम उनके कार्य के विषय में नहीं दिया जा सकता, 125 से कभी अधिक नहीं हुआ। इनमें से दो तो मलौद में ही मारे गए तथा 4 बन्दी बनाये गए थे । कोटला में आठ मारे गए तथा 31 घायल हुए । इन घायलों में से पच्चीस अथवा छब्बीस घटना स्थल से बच निकले । परंतु 68 मनुष्य जिनमें से 27 घायल हैं , रियासत पटियाला के गांव रड़ में पकड़ लिये गये हैं । लगभग संपूर्ण गिरोह तितर बितर हो चुका है। मैं इन बन्दियों को कल प्रातः सूर्योदय के साथ ही तोपों से उड़ा दूंगा अथवा फांसी पर लटका दूंगा।"

(3) इनका अपराध साधारण नहीं हैं । वे केवल हत्या तथा डाका डालने के दोषी ही नहीं, वह खुल्लम खुल्ले रूप में विद्रोही हैं। उन्होंने न्याय पर आधारित शासन का धृष्टता पूर्ण तथा हठ भरा मुकाबला किया है । इस रोग को बढ़ने से पहिले ही यह अत्यन्त आवश्यक है, कि इनके विरुद्ध शीघ्रातिशीघ्र अति कड़ी निरोधात्मक दमनकारी कार्यवाहियां की जावें ।

(4) मैं जिस बड़े दायित्व को उठाने लगा हूँ, उसके विषय में भली प्रकार सचेत हूँ, परन्तु इस बात से संतुष्ट हूँ , कि मैं यह काम सरकार के हित में कर रहा हूँ, क्योंकि इस विद्रोह की जड़ आरम्भ में ही उखाड़ देनी चाहिए ।"

यह पत्र पढ़ते ही मि. फोरसाईथ ने लुधियाना से मि. कावन के नाम यह नोट लिख भेजा । "जब तक मेरी भेजी हुई गार्द अपराधियों को

लुधियाना लाने के लिये तुम्हारे पास न पहुँचे, अपराधी शेरपुर ही में रखे जावें । लुधियाना लाकर इन पर यथाविधि न्यायालय में मुकदमा चलाया जायेगा।" मि. कावन को यह नोट दूसरे दिन जत्थे के कोटला पहुंचने से पहले ही मिल चुका था, परन्तु उसने इसको पढ़कर जेब में रख लिया तथा इस पर कुछ अमल न किया । वास्तव में मि. कावन स्वेच्छा से ही बिना किसी बड़े शासक तथा सरकार की आज्ञा के कूकों को मारने की दृढ़ प्रतिज्ञा किये बैठा था ।

मि. फोरसाईथ , मि. कावन के तारों तथा पत्रों से इस परिणाम पर पहुँचा था, कि मि. कावन जोश तथा शेखी में आकर बन्दी कूकों को नियम विरुद्ध मार देने के लिए प्रस्तुत है । इसलिये उसने 17 जनवरी की सुबह ही निम्नलिखित पत्र लिखकर मलेरकोटला भिजवा दिया--"मैं आपके 16 जनवरी की 7 बजे कोटला से लिखे हुये पत्र की पहुंच देता हूँ । "कूकों का जो जत्था अब पटियाला रियासत की सीमा में पकड़ा हुआ है, उसने दो पृथक् पृथक् अपराध किये हैं । एक अपराध अंग्रेज़ी राज्य की सीमा में किया है, दूसरा अपराध रियासत मलेरकोटला की सीमा में । जो जुरम मलेरकोटला की रियासत की सीमा में किये गये हैं, उनके लिये रियासत के कर्मचारियों को अपराधियों पर मुकदमें चलाने तथा दंड देने के पूर्ण अधिकार हैं । परन्तु यदि अपराधियों को प्राण दंड दिये जावें तो दंड को क्रियात्मक रूप देने के लिये मुकदमों की फाइल कमिश्नर के पास स्वीकृति के लिये भेजनी आवश्यक है ।"

"इसलिए मैं प्रार्थना करता हूं कि आप उन आदमियों के विरुद्ध, जिन्हें आप प्राण दंड के योग्य समझते हैं, मुकदमे की मिसलें तैयार कर रखें, उन पर मैं शीघ्र ही आदेश दे दूंगा । आपकी तत्काल आदेश मांगने की दृढ़ इच्छा को अधिक आवश्यक नहीं समझता । इसलिए हमें न्याय की अति सरल रूप रेखा पर ही चलना चाहिये । मैं शीघ्राति-शीघ्र मलेरकोटला पहुंचने का निश्चित किये बैठा हूँ ।"

मि. कावन ने इसके पश्चात् अपनी सफाई देते हुए अपने बयान में

यह माना था, कि यह पत्र उसको उस समय मिला, जब वह 42 आदमियों को तोपों से उड़वा चुका था तथा एक को तलवारों से काट दिया गया था। यह पत्र पढ़ कर उसने और कुछ करना उचित न समझा तथा पत्र पढ़ कर मिं. परकिंग्र को दे दिया । इस पत्र में दिये गये आदेश को न मानने के लिये मि. कावन ने अपनी सफाई में बहुत भोंड़े यत्न किए तथा बहाने बनाये ।

मि. फोरसाईथ अत्यन्त घबराया हुआ था । एक उत्तरदायी अधिकारी होने के नाते वह इस बात से भयभीत था, कि मि. कावन कहीं अपनी इच्छा अनुसार ही काम करके सरकार के गले व्यर्थ निन्दा न डाले । अतः उसने उसी दिन एक और पत्र मि. कावन को लिखा, जो इस प्रकार है ।

"मेरे प्यारे कावन, आपने प्रशंसा योग्य काम किया है, परन्तु भगवान के लिए कोई ऐसा काम न कर बैठना, जिससे सारे काम की सफलता में बाधा आ जावे ।"

"कोटला के इलाके में जो दोषी पकड़े गए हैं, उनको चीफ कोर्ट की स्वीकृति लेने के बिना ही न्याय के रूप में तत्काल फांसी दी जा सकती है। साधारण नियम यही है, कि ऐसे मुकदमे कमिश्नर अथवा मेरे पास स्वीकृति के लिये भेजे जाते हैं । मैं इस समय यह संकट दूर करने के लिये शीघ्रतम कोटला आ रहा हूँ। मैं गुरु राम सिंह वाली बात का निर्णय करके यहां से चलूंगा । परन्तु यदि तुमने बन्दियों को स्वयं ही फांसी पर लटका दिया तो तुम पूर्ण सफलता के स्थान से नीचे गिर जाओगे । मैं केवल गुरु राम सिंह के कल प्रातः तक यहां पहुंचने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। उसके पश्चात् में तत्काल चल पड़ूंगा ।"

इस पत्र के पहुंचने का कुछ पता नहीं चलता । अनुमान है. कि यह पत्र मि. कावन को अवश्य मिला होगा, परन्तु उसके सिर पर खून सवार था। यह पत्र भी उसने इधर उधर कर दिया था ।

16 तारीख को कमिश्नर फोरसाईथ ने पंजाब सरकार के सचिव को देहली में यह तार दिया जो उसने हिंद सरकार के गृह सचिव को कलकत्ता भेज दिया । "जालंधर की गोरा फौजी कंपनियां लुधियाना आ गई हैं। अब

यहां पूर्ण शान्ति है । 70 कूके जो कोटला के युद्ध में अति घायल हुए थे, पटियाला की रियासत के गांव शेरपुर में पकड़े हुए हैं । सम्भव है कि इनकी संख्या इतनी ही हो । पहले बताई गई संख्या, दोषियों की दी गई सूचनाओं के अनुसार स्पष्टतया अकथनीय थी । गुरु राम सिंह जी आज मि. कावन के पास था, और उसको यहां आने के लिए बुलावा भेजा गया है ।"

17 तारीख बुधवार को महाराजा पटियाला ने पंजाब सरकार को देहली में निम्नलिखित तार भेजा :--

"कल 16 जनवरी 11 बजे सुबह मेरे अमरगढ़ के उपनाजम न्याज़ अली ने केवल कुछ आदमी साथ लेकर उन 68 कूकों को पकड़ लिया है, जिन्होंने कोटला तथा मलौद में उपद्रव किये हैं । उनमें से 29 घायल हैं । उनके नेता हीरा सिंह तथा लैहना सिंह भी पकड़े गये हैं । विस्तृत विवरण डाक द्वारा ।"

16 जनवरी को जब उप नाजिम न्याज़ अली मि. कावन को मिला, तो मि. कावन ने शेरपुर की गढ़ी में बन्द समस्त नामधारियों को कोटला लाने का आदेश दिया । मि. कावन का विचार था, कि कूके बंदी सूर्योदय से पहले ही मलेरकोटला पहुंच जाएंगे तथा वह उनको सूर्योदय से पहले पहले जान से मारकर काम समाप्त कर देगा, परन्तु बन्दी सूर्योदय से पहले न पहुंचे इस समय मि. कावन ने 17 जनवरी प्रात:काल कमिश्नर अम्बाला को जो अभी लुधियाना में ही था, पूर्ण परिस्थिति का परिचायक एक पत्र लिखा। इस पत्र की निम्नलिखित बातें ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं ।

1. जत्था भैणी से 13 जनवरी को दो बजे दोपहर के पश्चात् चला । 10 बजे रात गाँव रब्बों पहुँचा ।रब्बों मलौद से 3॥ मील है । जत्था गांव रब्बों से बाहर एक कुँए पर जो गांव से 400 या 500 कदम है, ठहरा । साहनेवाल के थानेदार ने 13 तारीख की रात को लुधियाना के डिप्टी कमिश्नर को जत्थे की इच्छाओं के सम्बन्ध में सूचना दी । डिप्टी कमिश्नर ने रात के 11 बजे के लगभग कोटला तथा पटियाला के रियासती एजेंटों को अपनी अपनी हकूमतों के

जत्थे के विषय में सूचनायें भेजने के लिये आदेश दे दिये ।

2. 13 तारीख की रात तथा 14 का दिन कूके गांव रब्बों में रहे । उनकी संख्या लगभग 150 थी। रब्बों से जत्था सायंकाल चला। रात्रि के समय मलौद पहुंचा । मलौद में पारस्परिक लड़ाई में दो आदमी मरे। सरदार घायल हुआ । मलौद से कुकों के हाथ तीन घोड़े, एक बन्दूक तथा एक तलवार लगी । कूकों के दो आदमी मारे गए तथा 4 घायल कैदी बनाये गये।
3. मलौद से कूके कोटला की ओर चले, जो 9 मील की दूरी पर है । 15 तारीख की प्रातः को ही वे मलेरकोटला आ पहुँचे । रियासत के कर्मचारियों को कूकों के आक्रमण का समाचार 14 की रात को ही पहुँच गया था । अत; उन्होंने गार्ड का प्रबंध किया हुआ था। कूकों ने सात बजे आक्रमण किया, वह सीधे राजमहल और कोतवाली की ओर गये । कोतवाल अहमद खाँ तथा उसके आदमियों से किले के चौक के सामने लड़ाई हुई । अहमद खाँ दिलेरी से लड़ता हुआ मारा गया । सात और भी मरे तथा 15 घायल हुए । कूके यहाँ से दो घोड़े तथा कुछ तलवारें साथ ले गये। कोटला के बहुत से आदमी कूकों के जत्थे के पीछे पीछे चल पड़े। आपस में भाग दौड़ की लड़ाई होती रही। कोटला वाले दूर से ही बन्दूक़ें चलाते रहे तथा उन्होंने बहुत से कूके घायल कर दिये । आते जाते दोनों दल रियासत पटियाला के गांव रड़ पहुँच गये । कूके अपने घायलों को साथ ही उठा कर ले गये। रड़ में एक घायल कूके ने कोटला के कर्मचारियों को बताया कि जत्था अभी लौटकर जाना चाहता है तथा दुबारा कोटला पर आक्रमण करेगा । कोटला के अफसरों ने यह सुनकर इसी बात में चतुराई समझी कि शेरपुर में रहने वाले रियासत पटियाला के अफसरों को कूकों के विषय में समाचार भेजकर वापिस कोटला पहुंचा जावे ।
4. कूकों के कोटला पर आक्रमण तथा रड़ गांव पहुंचने की सूचना

मिलते ही नाज़म शेरपुर से रड़ आ गया । उनके साथ केवल तीन सवार थे। कूके एक टीले पर बेठे हुये थे। वह भूखे थे तथा थके हुये थे । थोड़े से वाद-विवाद के पश्चात् कूकों ने अपने शस्त्र दे दिये तथा सबने ही अपने आपको उप नाज़िम के हवाले कर दिया । इनमें एक स्त्री भी थी । 29 घायल थे । जिनमें से 7 तो अत्यन्त ज़ख्मी थे । नाभा तथा जींद के राजाओं ने सूचना मिलने के एक घण्टे के अन्दर अन्दर तोप खाना, पैदल तथा रसाले कोटले भेज दिये हैं ।

इस पत्र के अन्तिम अनुच्छेद में मि. कावन कूकों के विषय में अपने मन के क्रोध तथा घृणा के उदगारों को दबा न सका और उसने लिखा कि "मैं प्रतिक्षण गांव रड़ वाले बन्दियों के पहुंचने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ । मैं उन सबको जो मलौद तथा मलेरकोटला के आक्रमण में सम्मिलित थे, एक दम मार डालना चाहता हूं । यद्यपि मुझे इतने अधिकार मिले हुए नहीं हैं, परन्तु यह एक असाधारण विषय है । मैं उस उत्तरदायित्व को जो मैं अपने अधिकारों से बाहर जाकर ले रहा हूँ, अच्छी तरह समझता हूँ । ये व्यक्ति साधारण अपराधियों की भांति नहीं हैं । यह शासन के विरोधी तथा विद्रोही हैं । इनका तत्कालीन उद्देश्य तथा इच्छा लूटमार फसाद करके हुकूमत का तख्ता उलटने का है । यह निश्चित है कि यदि उनके पहिले यत्न सफल हो जाते अथवा वह अपने आपको समर्थ करने में सफल हो जाते तथा उनके अधिकार में घोड़े और कोष आ जाता तो सारे देश के छठे हुये दुर्जन व्यक्ति उनके साथ मिल जाते । तब इनको बड़ी कठिनाइओं से ही मलियामेट करना पड़ता । कोटला में उनके आक्रमण के विरुद्ध समय पर तैयारी करने से उनके पहिले यत्न असफल हो गये हैं । पटियाला के अफसरों के तत्कालीन सफल परिणामों से शासन के विरुद्ध किया गया दुर्भाग्यपूर्ण तुच्छ यत्न जड़ से ही उखाड़ दिया गया है । ऐसे स्वभावों तथा विचारों के अन्य पुरुषों को इस प्रकार के कुपथ पर चलने से रोकना आवश्यक है । चेतावनी अथवा सूचना बहुत ही कड़ा प्रभाव डालने वाली होनी चाहिये । मुझे पूर्ण विश्वास हैं कि पंजाब सरकार इन बन्दियों को

जो घटना करते हुए ही पकड़े गये हैं, मेरी एकदम मार देने की कार्यवाही की प्रसन्नता पूर्वक पुष्टि करेगी ।

16 तारीख को प्रातः 7 बजे सिविल सर्जन मि. इन्ज़ मलौद से कोटला की ओर चल पड़ा । डिप्टी कमिश्नर तथा शेष सरकारी अफसरों को कोटला पर आक्रमण का समाचार मलौद में ही 15 तारीख की सायं तक मिल चुका था, परन्तु डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस कप्तान गुरु राम सिंह जी की मलौद में प्रतीक्षा करते रहे । 15 तारीख को वर्षा आरंम्भ हो गई तथा 16 को तो इंद्रदेव ने मानों मेघ कोष ही खोल दिया । 7 बजे प्रातः: का चला हुआ सिविल सर्जन 10 बजे मलेरकोटला पहुँचा। उसके पहुँचने के पहिले ही कोटला वालों ने अपने आठ मरे हुए आदमियों का दाह कर्म कर दिया था और कर्मचारियों ने सिविल सर्जन को यही बताया कि मृतकों में से एक नगर का कोतवाल था तथा 7 सिपाही थे । सिविल सर्जन की रिपोर्ट के अनुसार, 'सात मरे हुए कूकों की देहों का थाने के साथ वाले एक कमरे के फर्श पर ही ढेर लगा पड़ा था। उनके रूप बहुत ही बिगड़े हुए थे । उनके सिर तथा वक्षस्थलों पर बहुत धाव थे । एक का सिर तो शरीर से थोड़ा सा ही अड़ा हुआ दिखाई देता था । कोहनी से ऊपर कटी हुई एक दाई भुजा भी इन देहों में पड़ी थी। दो घायल कूकों में से एक का नाम वज़ीर सिंह था। इसके पेट में तलवार का 5 इंच लम्बा घाव था । दूसरे के दायें कंधे पर तलवार का घाव था । तलवार से कटकर गिरी हुई भुजा किसी मृतक को नहीं, बल्कि जत्थे के साथ के किसी जीवित व्यक्ति की थी ।'

कोटला के बहुत से घायल अपने अपने घरों में ही पड़े हुए थे । सिविल सर्जन ने इन सबको देखा, औषधि तथा चिकित्सा की प्राथमिक सहायता करके इनको कोटला के सरकारी अस्पताल के देशी डॉक्टर के सुपुर्द कर दिया । कूके घायलों को भी इसी अफसर के हवाले किया गया। सिविल सर्जन डिप्टी कमिश्नर को अपनी रिपोर्ट देकर 16 तारीख के रात के आठ बजे लुधियाना पहुंच गया । दोनों घायल कूकों के साथ क्या हुआ, यह आज तक भी खोज का विषय है ।

नामधारी सिंहों का तोपों से उड़ाया जाना

नायब नाज़िम नियाज अली 16 तारीख को 5 अथवा 6 बजे मि. कावन का आदेश सुनकर कोटला से चला और रात को शेरपुर पहुँचा। उस दिन वर्षा हो रही थी। गाड्डियों वा बेगारियों तथा फौजी गार्द का प्रबंध तत्काल रात्रि के समय नहीं हो सकता था। बन्दियों को शेरपुरा से कोटला ले जाने के लिये मि. कावन के हुक्म के अतिरिक्त महाराजा पटियाला का हुक्म भी आवश्यक था। साथ ही यह अफ़वाहें भी उड़ रहीं थीं कि बहुत से नामधारी एकत्रित होकर कोटला पर दोबारा आक्रमण करने वाले हैं। समस्त प्रबंध पूर्ण करके हुक्म आने पर 17 तारीख को सुबह सेय्यद न्याज़ अली ने नामधारी बन्दियों को गाड़ियों पर बिठाया । जो अत्यन्त घायल थे, उन्हें बेगारियों ने खाटों पर डाल कर उठा लिया। जो चल सकते थे, उन्हें साथ चलाया गया । पटियाला की फौज की पैदल तथा रिसाला की गार्दों के पहरे में शहीदी जत्थों को शेरपुर से कोटला की ओर भेजा गया । सिक्ख इतिहास ने अपने को दुहराया। 156 वर्ष पहिले बाबा बन्दा तथा उसके साथी भी मुगल साम्राज्य के विरुद्ध विद्रोह के अपराध में पकड़े हुये इसी प्रकार वध करने के लिये गुरदास नंगल की गढ़ी से दिल्ली लाये गये थे। सन् 1716 से 1747 तक इसी प्रकार सिंहों के जत्थे के जत्थे विदेशी राज्य के विरुद्ध फसाद करने के अपराध में गांवों से पकड़कर लाहौर लाये जाते तथा शाही आज्ञा अनुसार शहीद गंज लाहौर के स्थान पर कत्ल कर दिये जाते । सन् 1849-50 में भी लाहौर का सिक्ख राज्य समाप्त होने के पश्चात् अंग्रेज़ी शासन के विरोधियों को पकड़कर दंड देने के लिए इसी प्रकार लाया जाता था ।

सन् 1857 के विद्रोह के पश्चात् भी अंग्रेज़ों ने विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष में भाग लेने वालों को गांवों से पकड़-पकड़ कर फांसी पर चढ़ाया तथा तोपों से उड़ाया । इस विद्रोह के 15 साल पश्चात् पहली बार नामधारी सिक्खों का यह जत्था वध स्थान की ओर ले जाया जा रहा था, परन्तु इस

जत्थे की विशेषता यह थी कि बन्दी होने के पश्चात् नामधारी सिंह मृत्यु के लिए बहुत उतावले थे । मि. कावन भी सरकारी कानून, उच्च अफसरों के हुक्म, मुकदमों से संबंधित आवश्यक कार्यवाहियों, आदि को परे फेंक कर नामधारियों के लिए यमदूत का रूप धारण किये खड़ा था । अंग्रेज़ी सरकार को सुरक्षा, रौब तथा सम्मान वह इसी बात में समझता था, कि कोटला पहुँचते ही कूकों को तत्काल मौत के घाट उतार दिया जाए । उसके हृदय को यह अंधा विचार खाये जा रहा था, कि यदि इतना कड़ा दंड न दिया गया तो थोड़े दिनों में ही देश में विद्रोह की ज्वाला पुनः भड़क जावेगी ।

मि. कावन का विचार था कि बन्दी, सूर्योदय से पहले कोटला पहुंच जाएंगे, तथा वह एक दो घंटे में ही अपना काम समाप्त कर देगा, परन्तु 12 बजे दोपहर तक बन्दी न पहुंचे, इस पर मि. कावन अत्यन्त व्यग्र था।

शहीदी जत्थे के कोटला में लाये जाने के विषय में लुधियाना का पुलिस कप्तान अपने 6 फरवरी वाले पत्र में लिखता है :-

"क्योंकि कैदी बारह बजे तक नहीं पहुंचे थे, इसलिये डिप्टी कमिश्नर से परामर्श करके मैं घुड़सवारों को साथ लेकर बन्दियों को अपनी रक्षा में लाने के लिये, जो इस समय कोटला से 6 मील पर बताये जाते थे, चल पड़ा। सड़कें बहुत ही बुरी तरह टूटी हुई थीं । बैल गाड़ियों के बैल गिर-गिर पड़ते थे तथा खड्ढ़ों में से बहुत कठिनाई से निकलते थे । पुलिस कप्तान जत्थे के नेताओं हीरा सिंह तथा लैहना सिंह से मिला और वार्तालाप करता रहा । हीरा सिंह ने कप्तान को यह भी बताया, कि उनके जत्थे के समस्त व्यक्ति बन्दी हो गये हैं । मि. परकिन्ज लिखता हैं कि 'हीरा सिंह तथा लहना सिंह ने बहुत बढ़िया पोशाक पहनी हुई हैं तथा वह धनवान् व्यक्ति हैं । उनके नखशिख तथा मुद्रा से पता चलता है कि वह साहसी तथा दृढ़ विश्वासी पुरुष हैं ।! आगे चल कर वह लिखता है, 'बन्दियों में से बहुत से गालियां देते थे और खुल्लम खुल्ला कहते थे कि हम यह सरकार नहीं रक्खेंगे, हम अपना राज्य बनायेंगे ।

पुलिस कप्तान कोटला में फिर तीन बजे आ गया और शेष बैल

एकत्रित करके बन्दियों की गाड़ियों को जल्दी से जल्दी कोटले लाने का प्रबंध किया । तीन बजे जत्था कोटला से तीन मील दूर था । चार बजे के लगभग शहीदी जत्था कोटला में पहुंच गया।

जत्थे के व्यक्तियों की संख्या 68 थी। जिनमें से दो स्त्रियाँ भी थीं । शेष 66 आदमियों में से मि. कावन के 17 जनवरी के पत्र अनुसार 22 घायल थे । उसके एक अन्य प्रथम पत्र के अनुसार 7 तो मरणासन्न थे तथा 22 अल्प घायल ।

पुलिस कप्तान लिखता है, "कि कैदियों को देखते ही डिप्टी कमिश्नर ने निर्णय कर लिया था, कि इनमें से 50 को उसी दिन कोटला में ही तोपों से उड़ा दिया जावे तथा शेष 16 को दूसरे दिन गाँव मलौद ले जाकर फांसी देकर मार दिया जावे ।

नामधारी बन्दी कोटला के निकट आ गये थे। मि. परकिन्ज पुलिस कप्तान शेष बैल गाड़ियों को लाने के लिए भेज चुका था । दोनों अंग्रेज़ अफसर तथा सिक्ख रियासतों की फ़ौजें अपनी अपनी तोपों सहित कैदियों के आने की प्रतीक्षा कर रहे थे । इस समय मि. कावन को मि. फोरसाईथ कमिश्नर का लुधियाना से लिखा वह नोट मिला, जिसमें उसने बहुत दृढ़ता से हुक्म दिया था कि जब तक मेरी भेजी हुई गॉर्ड न पहुँचे बन्दियों को शेरपुर की गढ़ी में ही रक्खा जावे, तथा बन्दियों को व्यापक कार्यवाहियां पूर्ण करके ही दंड दिये जायें । हिंद सरकार के सचिव की ओर से पंजाब सरकार के कार्यवाहक सचिव के नाम लिखे गये पत्र नं 857 दिनाँक 30 अप्रैल 1872 में यह बात कही गई थी कि कमिश्नर साहब का उक्त नोट मि. कावन को नामधारिओं को बध करने से कई घंटे पूर्व मिल चुका था। मि. कावन ने इस नोट के विषय में कहा कि "मैंने यह नोट लेकर जेब में डाल लिया और इस विषय में कुछ न सोचा, क्योंकि इसमें ऐसा मत दिया हुआ था , जिसपर उस समय कोई विचार नहीं हो सकती थी । कारण यह भी था कि बन्दी कूके अब कोटला के निकट पहुंच चुके थे।'

चार तथा पांच बजे के मध्य जत्थे के पहुंचते ही उसे जमालपुर गांव

के पास परेड मैदान में लाया गया । पटियाला, नाभा तथा जींद की सिक्ख रियासतों की सेनाओं के 750 सैनिक तथा अफसर 9 तोपों के साथ 16 तारीख को ही कोटला में पहुँच चुके थे ।

मि. कावन ने जत्थे के नेताओं हीरा सिंह तथा लहना सिंह से बातें की । अपनी 17 जनवरी की रिपोर्ट में वह लिखता है कि "इन बन्दियों का वर्ताव अत्यन्त निर्भयता पूर्ण था। वह अंग्रेज़ीं सरकार तथा देशी रियासतों के राजाओं को गालियाँ दे रहे थे । वें समस्त मानते थे कि वह मलौद तथा कोटला पर हुए आक्रमणों में सम्मिलित थे । वह अत्यंत गर्व से यह बात स्वीकार करते थे ।"

सतगुरु बिलास पृष्ठ 418 पर इस प्रसंग का उल्लेख इस प्रकार किया गया है।

"बिल्ले (अंग्रेज़ के प्रति घृणा का शब्द) ने हीरा सिंह से पूछा-तुमने क्यों गदर मचाया है । हीरा सिंह ने कहा हम फिरंगियों और उनके कुत्तों देशी राजों, नवाबों का राज्य नहीं चाहते। हम अपने भाइयों का भाइचारे का राज चाहते हैं । जब तक तुम्हारा और इनका राज समाप्त नहीं होता, गदर मचायेंगें । सिर लेंगे तथा देंगें, तुम्हें यहाँ से निकाल कर दम लेंगे। पुनः पुनः जन्म लेंगे तथा तुम्हें मारेंगे। तुम गोबध करते हो । हम गोबध सहन नहीं कर सकते । बिल्ले ने कहा--"हम जानते हैं कि तुमने राज्य के लिये गदर मचाया । परंतु राज्य हमें भगवान् का दिया हुआ है ! यों ही नहीं छीना जा सकता ।",.....हीरा सिंह ने कहा "समुन्द खां पठान का कोई लड़का है ?" कहा कि है । उत्तर दिया--कि बुलवाओ । दो लड़के थे, आये । दोनों के सर पर हाथ रख कर कहा "कि समुन्द खाँ ही असल बीर पठान था, अन्य सब जुलाहे, धुनिये ही एकत्रित हुए हैं । अगर किसी को कुछ इनाम देना है, तो इन लड़कों को देना चाहिये।"[9]

---

[9] नामधारी सिंहों के आचरण का कितना ऊँचा उदाहरण है । सरदार हीरा सिंह ग्रेवाल शूरवीर था , इसलिए उसने अपने बैरी समुन्द खाँ की शूरवीरता का मरते

9 तोपें जोड़ कर गारदें लगा दी गई । नामधारियों को लाकर मैदान में गार्ड के पहरे में तोपों के निकट बैठा दिया गया। जत्थे के साथ दो स्त्रियाँ थीं, जिनको पटियाला के सेनानायक इनायत अली के हवाले कर दिया गया। नामधारियों को भी हुक्म सुना दिया गया, कि उनमें से 50 को इस स्थान पर तोपों से उड़ा दिया जायेगा।

प्रबंध यह किया गया कि सात तोपों से तो नामधारी उड़ाये जायें और दो तोपें फौज तथा गार्द की रक्षा के लिये भरकर तैयार रक्खी जाँये । ढंग यह बनाया गया कि हर बार सात नामधारी सात तोपों के आगे लाकर खड़े किये जावें । तोपों को इकट्ठे ही फलीते (आग) दे दिये जायें । शेष दो तोपें भरकर परेड मैदान की रक्षा के लिये तैयार रक्खीं गई, ताकि यदि आवश्यकता हो, तो इनका उपयोग किया जाए । अफसरों को यह भय खा रहा था, कि अन्तिम समय पर नामधारियों के जत्थे सहसा ही कहीं से न आ पड़ें, तथा कोई भयानक दुर्घटना न बन जाये ।

मृत्यु सन्मुख देखकर नामधारियों के मुखों पर रक्त कान्तियाँ चढ़ गई। वह सत श्री अकाल के जयकारे लगाने लगे । मैदान में कोटला तथा आसपास के कस्बों और गांवों के सहस्रों स्त्री-पुरुष देशभक्त शहीदों की मृत्यु का दृश्य देखने के लिये एकत्रित हो गये थे । स्थान स्थान पर समाचार पहले ही पहुँच गये थे कि कूके तोपों से उड़ाये जावेंगे ।

सतगुरु बिलास पृष्ठ 419 पर तोपों से उड़ाए जाने का वृतांत इस प्रकार दिया है :--

'फिरंगियों ने राजाओं की तोपें मंगवा लीं । फिरंगी ने सिंहों को उड़ाने का हुक्म दे दिया । पटियाला की तोप तथा नाभा की तोप, संगरूर की तोप तथा मालेर कोटला की तोप इस प्रकार 9 तोपें जोड़ दीं। भाई हीरा सिंह तथा लैहना सिंह अपने पांच साथियों समेत स्नान करके तोपों के सम्मुख

समय भी अभिनन्दन किया तथा शासकों को कहा कि समुन्दखां के पुत्रों के पोषण का ध्यान रखना आवश्यक है, क्योंकि यह शूर वीर पठान के पुत्र हैं ।

खड़े हुए । बिल्ले अंग्रेज़ ने भंगी को कहा-- इन्हें रस्से डालकर तोपों के आगे करो-सिंहों ने भंगी को कहा, परे हो जा, हम आप ही तोपों के आगे जा खड़े होंगे । बढ़कर आगे जा खड़े हुए । बिल्ले ने कहा पीठ करो। सिंहों ने कहा, पीठ नहीं करेंगे, सम्मुख होकर मरेंगे । सम्मुख वक्षस्थल तानकर साहसी सिंह खड़े हुए । तीन बार बत्ती लगाई तोप पलीता चाट गई...जब चौथी बार बत्ती दी. तो तोपें चली । जो शरीर के जोड़ थे, वे पृथक्-पृथक् होकर जा पड़े। जो हीरा सिंह का सीस था वह दस्तार सहित आकाश को उड़ा । दस कदम पर शीश धरती पर गिरा। तीन बार धरती से गेंद की भांति उछलकर ठंढा हुआ।...स्नान करके सिंह स्वयं ही तोपों के सन्मुख जा खड़े. होते। तोप चलती, साथ ही सत् श्री अकाल बुलाते । तोपों के गोलों के लगने से सिंहों के शरीरों के अंग छिन्न भिन्न होकर दूर दूर जा पड़ते ।"

नामधारियों में से बिशन सिंह ने फौजी गार्द के घेरे से निकल कर मि. कावन को गले से जा पकड़ा । साहब की टोपी उतर गई, तथा मृत्यु उसके सिर पर नाचने लगी । इसी समय गार्द के सिपाहियों ने तलवारों से बिशन सिंह को शहीद कर दिया ।

जब 43 सिंह तोपों से उड़ाये जा चुके थे, तो मि. फोरसाईथ का दूसरा पत्र मि. कावन को मिला जिसमें यह हुक्म दिया गया था कि "बन्दी हुए कूकों को मारा न जाये, बल्कि उन पर नियमानुसार मुकदमा चलाने के लिये जीवित ही रक्खा जावे ।"

इस हुक्म को मानने के सम्बन्ध में मि. कावन अपने आठ अप्रैल के पत्र में लिखता है कि, "मुझे यह पत्र 17 जनवरी को सूर्यास्त से कुछ समय पहले मिला । मैं उस समय परेड मैदान में खड़ा था। मेरे तथा तोपों के मध्य देशी रियासतों के सिपाहियों की एक पालि खड़ी थी । इस पत्र के मेरे हाथ में दिये जाने से पहले विद्रोहियों में से 42 अथवा 43 व्यक्ति मारे जा चुके थे । शोष 7 तोपों के सामने थे । बिगुलची संकेत मिलते ही फायर का आदेश बजाने की प्रतीक्षा में खड़ा था। कर्नल परकिग्र तथा देशी रियासतों के चोटी के अफसर मेरे साथ थे। मि. फोरसाईथ के हुक्म का पत्र मैंने यह

कहकर कर्नल परकिन्ज़ को दे दिया कि जो आदमी तोपों के सामने हैं, उनको मारने से रोकना अब असंभव है । यदि ऐसी कार्यवाही की गई, तो समस्त लोगों पर जो हमारे आस पास खड़े हैं, बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ेगा" ।

मि. ई. परकिन्ज़ डिप्टी सुपरिटेंडेंट पुलिस ने परेड मैदान के वध-स्थान से आकर "अपराध की विशेष सूचना" में यह अंकित किया :--

"कोटला 17 जनवरी 7 बजे सायं वधस्थल से मैं अभी लौटा हूँ । प्रबंध बहुत बढ़िया था ।सात तोपों से 49 विद्रोही उड़ाये गये। एक को, जब उसने डिप्टी कमिश्नर पर कड़ा आक्रमण किया, तलवारों से टुकड़े-टुकड़े कर दिया गया । जब हम दोषियों को जान से मारने का काम समाप्त करने वाले थे, तो कमिश्नर का पत्र मिला कि इन छूटेरों हत्यारों पर रियासतों के दोषियों को लेने देने के बने हुए नियमानुसार, मुकदमे चलाये जाये।"

50 नामधारी सिंहों को मरवा देने के अनन्तर मि. कावन कार्यवाहक डिप्टी कमिश्नर ने अम्बाला के कमिश्नर को पूरी स्थिति की जानकारी का पत्र लिखा । वह दूसरे अनुच्छेद में लिखता है कि समस्त बन्दियों ने अपना दोष मान लिया है । तीसरे अनुच्छेद में लिखा कि मेरी इच्छा बन्दियों में से 50 को तो आज कोटला में ही उड़ा देने की थी, तथा शेष 16 को कल मलौद ले जाकर मरवा डालने की है। इनमें से एक आदमी फौजी गार्दों के लगे पहरे में से निकल कर आया तथा उसने बहुत क्रोधित होकर मुझपर आक्रमण किया और मुझे दाढ़ी से पकड़ लिया तथा मेरा गला घोंट कर मारने का यत्न किया। यह बहुत ही शक्तिशाली पुरुष था, अत: मुझे अपने आपको उससे छड़ाने के लिये अत्यंत परिश्रम करना पड़ा। उसने फिर मेरे पास खड़े देशी रियासतों के कुछ अफसरों पर बहुत भयानक आक्रमण किया, इन अफसरों ने अपनी तलवारें निकाल लीं और उसको टुकड़े-टुकड़े कर दिया । दोषियों को तोपों से मरवाने का काम मेरे लिये अति कष्टकर था । जब मुझे आप का पत्र मिला तो यह मेरे लिये और भी कष्टतर बन गया। पत्र मिलते समय अन्तिम टोली तोपों के सम्मुख थी । अपने दिये गये दंडादेश पर स्वयं ही अमल करवाने में मैंने ईमानदारी तथा सच्चाई से, इस दृढ़ विश्वास को सम्मुख

रखकर यह कार्य किया, कि मैं सरकार के महान् हित के लिये यह काम कर रहा हूँ । इस विद्रोह का, जिसने विशाल रूप धारण कर लेना था, उठते ही सर फोड़ दिया गया है । मेरे विचार में तत्कालीन दिये गये भयानक दंड ऐसे विद्रोहों के दुबारा सिर उठाने से रोकने के लिये आवश्यक हैं । मैं अत्यन्त ईमानदारी से यह् विश्वास करता हूं कि आप मेरी इस सविस्तार लिखित मत का अध्ययन करने के पश्चात् मेरे काम की प्रशंसा तथा पुष्टि करेंगे ।"

"आप का पत्र पहुंचने पर शेष 16 अपराधियों के विषय में, जिनको अभी दंड नहीं दिये गये हैं ', मैं बहुत ही कड़ी दुविधा में फंस गया हूं। जैसा कि मैं पहले आप को बता चुका हूँ , मेरी इच्छा इन 16 को मलौद ले जाकर मरवा देने की थी तथा मैं अब भी इसी मत पर स्थिर हूं । इसलिये मैं आप से सच्चे हृदय से प्रार्थना करता हूं, कि आप मुझे इस दंड का प्रयोग करने के लिये शीघ्रतम स्वीकृति एवं आज्ञा भेजें, ताकि मैं शेष 16 को भी जान से मरवा दूँ । मैं विश्वास करता हूं, कि प्राणदंड का बहुत प्रभाव हुआ है तथा भविष्य में भी अत्यंत प्रभाव रहेगा। जिधर भी मैं जाता हूं लोगों के व्यवहार, चर्चा, तथा वार्तालाप में इसका प्रभाव हुआ प्रतीत होता है ।

"मैं कल तक रियासतों के फौजी दसतों को वापिस भेजने की इच्छा रखता हूँ । मैं कल दोपहर तक आप की ओर से विद्रोही कूकों को दंड देने की स्वीकृति की आज्ञा आने की आशा में यहाँ ही ठहरूंगा । यदि आप ने इन्हें शीघ्र ही मारने की स्वीकृति न भेजी, तो मैं छानबीन आरंभ करके तथा मुकदमे की फाइल बना कर आप के पास आदेश के लिए भेज दूंगा ।

"'विद्रोहियों के जत्थे के नेता हीरा सिंह तथा लहना सिंह जिन्होंने इस विद्रोह के लिये अन्य विद्रोहियों को उकसाया था तोपों से उड़ा दिये गये हैं ।"

"जब मैं इस पत्र को बन्द कर रहा था, तो घुड़सवारों का जत्था, जिसे मैंने मालूपुर में छिपे कूकों के पीछे भेजा था, काहन सिंह तथा तीन अन्य कूकों को लेकर लौट आया है। यह काहन सिंह सम्माननीय एवं प्रतिष्ठित सूबा है, तथा भैणी में ही रहता है। मैं आज सारा दिन अत्यंत भयभीत सा

रहा हूँ, इसलिये मैं इन आदमियों के मुकदमे की छानबीन कल करूंगा ।

कमिश्नर ने इस पत्र का कोई उत्तर न दिया । 17 तथा 18 तारीख की रात को प्रात:काल 4 बजे की गाड़ी में गुरु राम सिंह जी तथा उनके चार सूबों को दिल्ली वाली गाड़ी में बिठाकर, 18 तारीख को सुबह ही कमिश्नर घोड़े पर चढ़कर कर्नल गफ तथा रसाला के एक दस्ते के साथ मलेरकोटला पहुंच गया । जत्थे के 16 नामधारी कैदियों को, मि. कावन, कोटला के नाज़िम, तथा तहसीलदार तीनों के बैंच की अदालत के सामने अपराधियों के रूप में उपस्थित किया गया । समस्त कार्यवाही न्यायानुसार की गई तथा पूर्ण फाईल तैयार की गई। बेंच की अदालत ने 16 दोषियों को भी प्राण दंड दिया जो कमिश्नर ने झटपट स्वीकार कर लिया। इन 16 नामधारियों को 18 जनवरी वाले दिन अंग्रेज़ अफसरों, मलेरकोटला तथा पड़ोस की सिक्ख रियासतों के वकीलों तथा फौजी अफसरों के सामने दोपहर से पहले तोपों से उड़ा दिया गया ।

नामधारियों को तोपों से उड़ाने के पश्चात् कमिशनर फोरसाइथ ने सायंकाल एक दरबार किया । इसमें उसने मि. कावन की सिफारिश पर निम्नलिखित व्यक्तियों को मलेरकोटला के आक्रमणकारी कूकों को गिरफ्तार करवाने की उच्च सेवा करने के उपलक्ष्य में रियासत मलेरकोटला के कोष में से अपने हाथ से इनाम बाँटें ।

1. न्याज़ अली उप नाजिम रियासत पटियाले का अफसर - 1000
2. पंजाब सिंह दरबारी, रामनगर, रियासत पटियाला - 300
3. जयमल सिंह गाँव रड़ रियासत पटियाला - 200
4. मस्तान अली - 100
5. उत्तम सिंह - 50
6. रतन सिंह - 50
7. गुलाब सिंह - 50
8. प्रताप सिंह - 50

कमिश्नर ने रियासत के नाजिम को अहमद अली कोतवाल के कुटुम्ब

तथा अन्य मारे गये सरकारी कर्मचारियों के कुटुम्बों की सहायता करने के आदेश दिये ।

रियासत मलेरकोटला की ओर से कृतज्ञता के पत्र महाराजा पटियाला, राजा साहब जींद तथा राजा साहब नाभा को लिखे गये तथा दरबार में उपस्थित उक्त राजाओं के वकीलों को उन तक पहुंचाने के लिए दिए गए ।

इस पत्र में ही कमिश्नर ने लिखा कि, "अभी तक सात आदमी शेष हैं, जो मलौद के आक्रमण में सम्मिलित होने के दोषी हैं । इनमें से चार को मलौद वाले सरदार के आदमियों ने पकड़ लिया था । क्योंकि यह अपराध अंग्रेज़ी इलाके में किया गया है, इसलिये इन दोषियों को सेशन जज के न्यायालय में 19 तारीख को उपस्थित किया जाएगा । अगर इनको प्राण दंड हुए तो नियमानुसार चीफ़कोर्ट से दंड की पुष्टि करवा कर इनको फांसियाँ दी जावेंगी ।

19 तारीख को मि. फोरसाइथ मलौद पहुंच गया । मि. फोरसाइथ जब मलौद पहुंचा तो सरदार मित सिंह ने उसको मिलकर प्रार्थना की कि दोषी कूकों को जरुर ही प्राण दंड दिये जाए । फोरसाइथ ने सेशन जज के रूप में दोषियों का मुकदमा सुनना आरम्भ किया उसके साथ मीर हाशम खां बहादुर रसालदार, गुलामकादर सुपरिंटेन्डेन्ट गांव अबोह तथा महताब सिंह नम्बरदार गांव दोद असैसरों के रूप में बैठे । सात में से केवल चार अपराधी भगवान सिंह, ग्यान सिंह , थम्मन सिंह तथा मेहर सिंह ही अदालत में उपस्थित किये गये ।

मि. कावन ने चारों दोषियों को भारतीय दण्ड विधान की धारा 366 के अनुसार सदन के सुपुर्द करते की फाइल मलौद जानें से पहिले कोटला में ही मि. फोरसाइथ को दे दी थी । मि. कावन के हुक्म अनुसार शेष तीन दोषियों को ज़िला के कप्तान पुलिस के पास भेज दिया गया।

मि. कावन ने 15 तारीख को मलौद वाले चार दोषियों की मिसल तैयार करके उनको कत्ल तथा डाकों के अपराधों में सेशन सुपुर्द कर रक्खा

था । तथा उच्च अधिकारियों को तार दे दिये थे कि उसे इन चारों को फांसी का दंड देने की आज्ञा दी जाये ।

इन दोशियों का मुकदमा मि. फोरसाइथ ने सेशन जज की हैसियत में सुनना आरंभ किया । उसके सामने सबसे पहिले सरकार की ओर से साहनेवाल ज़िला लुधियाना के थानेदार सरफ़राज़ अली खां की गवाही हुई । उसने अपनी गवाही में उन तेरह आदमियों के नाम पढ़कर सुनाये, जिन्होंने गुरु राम सिंह जी के कथनानुसार उनकी आज्ञा नहीं मानी थी। यह थे - लैहना सिंह पुत्र महताब सिंह, हीरा सिंह, अनूप सिंह ,उदम सिंह , नन्द सिंह , जोगा सिंह, वर्याम सिंह , भाग सिंह, गांव रड़ के नारायण सिंह , साहब सिंह , सुजान सिंह, दलेहड़ा गांव के ज्ञान सिंह तथा काहन सिंह । सेशन जज के प्रश्नों के उत्तर में थानेदार ने बताया, कि मेरे कहने पर गुरु राम सिंह जी ने मस्तानों के जत्थे से गले में पल्ला डालकर अपने अपने घरों को लौट जाने की प्रार्थना की थी । इस पर जत्थे वालों ने कहा कि हमें भोजन कराओ, हम चले जायेंगे । गुरु राम सिंह जी ने उनको रोटी खिलाई और वे चले गये । गुरु राम सिंह जी ने उनके चले जाने की सूचना मुझे दे दी थी । " मैंने रात की गाड़ी लुधियाना में पहुंच कर दस बजे के लगभग यह सारी बात पुलिस कप्तान तथा डिप्टी कमिश्नर को बताई । आदेश मिलने पर यही सारी सूचना मैंने रियासतों के वकीलों को भी दे दी थी । मस्तानों का जत्था वार वार कोटला की ओर जाने की बातें करता था ।" इसके पश्चात् और गवाहियां ली गई । सरदार बदन सिंह ने कहा कि मैं बहुत बीमार हूं, इसलिये अदालत में उपस्थित नहीं हो सकता। अतः उसका 16 तारीख वाला ब्यान जो उसने मि. कावन के सामने दिया था सैशन जज वाली फ़ायल पर गवाही के रूप में लगा लिया गया ।

जब अपराधी कूकों को गवाहों से विवाद तथा प्रश्न करने के लिये कहा गया तो उन्होंने ऐसा करने से बिल्कुल ही इन्कार कर दिया। नामधारियों नें इस घटना से 16 वर्ष पूर्व अंग्रेज़ी न्यायालयों तथा न्याय का परित्याग किया हुआ था तथा वह अपनी इस प्रतिज्ञा पर स्थिर थे।

सैशन जज ने अपराधियों को धारा 396 के अनुसार कत्ल तथा डाके के अपराधी ठहराया। तीनों असैसरों ने सेशन जज की हाँ में हाँ मिलाई। अतः नामधारी बंदियों ने अपने स्वीकृत बयानों में अपराध अपने सिर ले लिये थे । सेशन जज ने चारों दोषियों को प्राण दंड का आदेश सुनाया ।

मिस्टर टी. डी. फोरसाइथ ने पंजाब सरकार के सचिव को भेजे गये 20. जनवरी के अपने पत्र में इस मुकदमे का वर्णन करते हुए लिखा है कि "चार आदमी इस मुकदमे में पेश किये गये। उनके स्वीकृत बयानों पर उनको प्राणदंड के आदेश दिये गये, परन्तु मेरी इच्छा इस दंड को प्रयोग में लाने की नहीं है, क्योंकि पहले ही कड़े दंडों से प्राप्त चेतावनी हो चुकी है । साथ ही यह चारों आदमी अतिः घायल हैं, इनमें से दो की हड्डियां टूटी हुई हैं। मेरी इच्छा है कि कुछ दिन पश्चात् इनके प्राणदण्ड को काले पानी तथा आजीवन कारावास के दण्ड में परिवर्तित कर दूं ।" दोषियों को मलौद से लुधियाना जेल में लाया गया ।

❋

गुरु राम सिंह जी पे क्या बीती ?

नामधारी केन्द्र भैणी साहब से शहीदी जत्थे के प्रस्थान के समय जत्थे के नेता सरदार हीरा सिंह के यह कहने पर कि हमें गुरु तेग बहादुर जी महाराज का आदेश शीश देने का ही है , गुरु राम सिंह जी ने कहा था: गुरु तेग बहादुर जी महाराज के आदेश की अव्हेलना हम भी नहीं कर सकते । हम फिरंगी का दण्ड सहन कर लेंगे, परंतु अकाल पुरष की अवज्ञा सहन नहीं हो सकती।"

मस्तानों के जत्थे के अरदास (प्रार्थना) के पश्चात् बहुत से सिंहों ने शहीदी जत्थे के साथ मिलने की प्रार्थना को, परन्तु आपने कहा, यहां इन्ही के शीश लगने हैं, अन्य जहाज़ भी काफ़ी छूटने हैं ।" कई सूबों तथा अन्य व्यक्तियों ने भी जाने की आज्ञा के लिए विनय की , परन्तु आपने सबको यही कहा कि अभी समय नहीं है । एक और सिंह की विनय पर आपने कहा कि, "देखो तुम साथ जाने के लिये कहते हो ! अवसर आया तो कछहिरे[10] उतार कर कोनों में फेंकोगे तथा लंगोट पहन लोगे। तुम अपने अपने घरों को चले जाओ, जो रहेगा वह दुखी होगा ।"

डिप्टी कमिश्नर मि. कावन का मलौद में आने का निमंत्रण पाने पर गुरु राम सिंह जी पांच सात सिक्ख साथियों के साथ 16 जनवरी को सूर्यास्त के ,समय मलौद पहुंचे तथा एक पहर के लगभग डिप्टी कमिश्नर तथा पुलिस कप्तान से वार्तालाप करते रहे ।

उसी रात को आप और आप के साथी गांव सियाहड़ में लौट आये तथा भाई बेला सिंह नामधारी के घर ठहरे । दूसरे दिन 17 तारीख बुधवार को लगभग 5 बजे तक आप गांव सियाहड़ में ही थे । जब कोटला में मि. कावन के हुक्म से नामधारी सिंह तोपों से उड़ाये जाने आरम्भ हुये, तो आपको पहली बाड़ की आवाज़ तथा गूंजें सुनाई दीं । सतगुरु बिलास में इसका वर्णन

---

[10] बड़ा कच्चा सिख मर्यादा का चिन्ह

इस प्रकार है :--

श्री सतगुरु सियाहड़ उतरे हुये थे । उन्होंने काहन सिंह को कहा, कि देखो तो तोपों के चलने की आवाजें हैं । जब उसने आवाज़ सुनी तो कहने लगा, हां तोपें भरमार हैं । सतगुरु जी ने कहा, "चढ़ गये हैं (बलिदान दे दिया है), नहीं तो अविश्वासी हो जाते, अब अच्छा हुआ ।" आप जी ने बचन किया- "दो शस्त्र हैं, प्रथम झुक जाना, द्वितीय यह है, कि जो कुछ हाथ में आवे चाहे जूता ही हो, लेकर आगे की ओर जाये , वापिस न लौटे, चाहे सिर जाये । आगे को जाना शूरवीर का धर्म हैं, परन्तु बड़ा शस्त्र झुकना है "

तोपें चलने की आवाज सुनकर आपने उच्च स्वर में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी महाराज का यह सवैया बार बार पढ़ना आरम्भ किया।

देहु शिवा बर मोहि इहै ।
शुभ कर्मन ते कबहुँ न टरौं ॥

कमिश्नर फोरसाइथ को दिल्ली से प्रस्थान समय गवर्नर पंजाब ने यही आदेश दिया था कि गुरु राम सिंह जी तथा प्रसिद्ध नामधारी सूबों को बन्दी करके तत्काल दिल्ली भेज दिया जाये । कमिश्नर को लुधियाना में पहुंच कर यह ज्ञात हुआ कि डिप्टी कमिश्नर मलौद को जाने से पहिले , गुरु राम सिंह जी को मलौद पहुंचने का बुलावा दे गया है, परन्तु कमिश्नर को यह ज्ञान नहीं था कि डिप्टी कमिश्नर ने आपके साथ वार्तालाप तथा जाँच पड़ताल करने के पश्चात् आपको भैणी साहिब जाने के लिए कह दिया था । कमिश्नर ने साहनेवाल के थाना में हुक्म पहुंचा दिया था, कि गुरु राम सिंह जी को सूबों सहित 17 जनवरी की दोपहर तक बन्दी करके लुधियाना में लाया जाए ।

जब दोपहर तक भी इनमें से कोई न आया तो कमिश्नर को अति घबराहट हुई। उसने लेफ्टिनेंट कर्नल बेली, डिप्टी इंस्पेक्टर जनरल पुलिस को जो इस समय लुधियाना में ही था, एक पत्र द्वारा यह हुक्म दिया कि "फौज तथा पुलिस की सहायता से गुरु राम सिंह जी तथा नामधारी सूबों को शीघ्रातिशीघ्र भैणी से बन्दी करके लुधियाना में पहुँचा दिया जाये । इनसे लठूठ, सोटे, गंडासे तथा हर प्रकार के शस्त्र ले लिये जावे । शस्त्रों तथा अन्य

लिखित पत्रों के लिये इनकी पूरी तलाशी ली जावे । यदि कूकों की ओर से मुकाबला अथवा बाधा की आशंका हो, तो साहनेवाल से गोरखों की एक कम्पनी मंगवा ली जाये तथा गिरफ्तारियां कर ली जायें । गिरफ्तारियों तथा तलाशियों की सूचना भेजी जाये ।

दूसरा आदेश मिलने तक पुलिस तथा फौजी दस्ता भैणी में रहने दिया जाये ।" (कमिश्नर फोरसाइथ का मि. बेली के नाम पत्र 17 जनवरी 1872)

इस पर मि. बेली लेफ्टिनेंट ग्रीन की कमांड में 12 नम्बर रिसाला के 25 सवार तथा पुलिस के कुछ आदमी लेकर 17 जनवरी को सायंकाल 4 बजे के लगभग मलौद की ओर चल पड़ा ।

जब मि. बेली गांव डेहलों पहुँचा तो उसको पता चला, कि गुरु राम सिंह जी साथियों सहित मलौद से लौट कर भैणी की ओर चले गये हैं। इस पर कर्नल बेली फौजी गार्द तथा पुलिस के सिपाहियों को साथ लेकर साहनेवाल के थाने में पहुँच गया । थाने से यह पता चला कि गुरु राम सिंह जी मलौद से वापिस भैणी पहुंच गये हैं एवं साहनेवाल से डिप्टी इन्स्पेक्टर शाह वली खाँ तथा डिप्टी इंस्पेक्टर गुलाब सिंह गार्द लेकर भैणी पहुंचे हुए हैं ।

इस पर मि. बेली साहनेवाल में ही ठहर गया तथा भैणी से दूसरे समाचार पाने की प्रतीक्षा करने लगा । एक घंटे के बाद रात को शाह वली खाँ ने आकर रिपोर्ट दी , कि गुरु राम सिंह जी चार अन्य नामधारियों के सहित डिप्टी इंस्पेक्टर गुलाब सिंह की गार्द के पहरे में भैणी से लुधियाना की ओर चले गये हैं ! उधर गुरु राम सिंह जी के मलौद से लौट कर भैणी पहुंचने का समाचार कमिशनर फोरसाइथ को कर्नल बेली के प्रस्थान पश्चात् आधी रात से कुछ समय पहिले ही मिल चुका था।

मि. फोरसाइथ लिखता है, कि 17 जनवरी की सायं को तोपों की गूंज सुनते ही गुरु राम सिंह जी सियाहड़ से अपने साथियों सहित घोड़ो पर चढ़ कर भैणी की ओर चल पड़े। रायकोट-रोपड़ वाली कच्ची सड़क का रास्ता साहनेवाल के थाने के पास होकर जाता था। थाने में आपके लौटने का

समाचार सुनकर थानेदार शाह वली खाँ भी आपके पीछे पीछे ही भैणी में पहुंच गया था ।

अभी आप तथा आपके संगी घोड़ों से उतरे ही थे कि थानेदार ने आपको कमिश्नर का यह हुक्म सुना दिया, कि आप शीघ्रतम सूबों के साथ लुधियाना पहुँच कर कमिश्नर के सामने पेश हो जाएं ।इस समय गुरु जी के छोटे भाई महाराज बुद्ध सिंह जी ने डिप्टी कमिश्नर के सम्मुख पेश होकर समस्त अपराध अपने ऊपर लेने तथा इकबाली बयान देने की इच्छा प्रकट की, परन्तु आपने आज्ञा न दी ।

सतगुरु बिलास पृष्ठ 425-26 पर इस घटना का प्रसंग इस प्रकार दिया हैं । "भैणी पहुंचते ही यह हुक्म दिया, कि सब सिंह अपने अपने घरों को चले जाओ । बचन किया चले जाओ घरों को, जो यहां रहेगा दुखी होगा । न जाने यहां क्या होगा । "गोपाल सिंह हम तो सबका उद्धार ही करते हैं, गृहस्थी लोग हैं, यदि घरों को चले जायें तो - अच्छी बात है ।".....! फिरंगियों को भी भय था। मिलजुलकर परामर्श करके एक थानेदार चार सवार लेकर रामदासपुरा में आया । सवार सड़क पर खड़े किये। सतगुरु जी को कहने लगा--आपको लुधियाना में याद किया है । दीन दयाल जी ने बचन किया, हमें तो भंगी भी बुलाने आता तो चलना था । साथ ही बचन किया, घोड़े थक गये हैं, गड्डा तैयार करो । हुक्म हुआ, गुरुदित्त सिंह गड्डा तैयार करो । बचन किया--हमने यहां बैठे नहीं रहना है। हम तो खेल करने आये हैं, हमने तो जाना ही था, कब तक बैठते, अंत को हमारे चले बिना कार्य नहीं चलेगा। हम चलेंगे तो कार्य चलेगा। है भी सत्य, जो जिस कार्य के लिये आता है, अवश्य करना पड़ता है । हम इसी काम को आये हैं ।

"पुखली लगा कर गड्डा तैयार किया, कनात की भांति हो गया । ससियां (ऊन की पगड़ी) शीश पर बांधी, एक काली कमली ऊपर ओढ़ी । बचन किया अरदास (प्रार्थना) मैं करता हूँ । आप अरदास (प्रार्थना) की । कमली ओढ़ कर गड्ड़े में आ बैठे। नानू सिंह साथ प्रस्तुत हुआ । बाबा जवाहर सिंह, बाबा साहब सिंह, गुरुदित्त सिंह चारों के साथ गड्ड़े पर बैठे । बाकी

सब बैलों से आटा पीसने वाली चक्की के पास खड़े कर दिये। कहा आगे कोई नहीं आये ...बचन क्रिया, 11 ।) रुपये का कड़ाह प्रसाद करना, बांट कर अपने अपने घरों को चले जाना । रात को सोना नहीं, पाठ करो। यदि जप साहब की बाणी कण्ठस्थ न हो तो माला फेरो। रात को कोई न सोये। जब बैल गाड़ी सड़क पर गई , तो दो सवार आगे तथा दो पीछे साथ साथ चले । लुधियाना ले जाकर डाक बंगले के भीतर ले गये, तीनों सिंह बाहर बिठा दिये। बैल गाड़ी लौटा दिया ।"

पंजाब सरकार के सचिव के नाम 18 तथा 19 जनवरी के पत्रों में मि. फोरसाइथ लिखता है, कि "गुरु राम सिंह जो दो सूबों साहब सिंह तथा जवाहर सिंह और दो सेवकों गुरुदित्त सिंह तथा नानू सिंह के साथ मेरी आज्ञा-नुसार लुधियाना में 17 तथा 18 की मध्य रात के एक बजे पहुंच गये हैं। मैं गुरु राम सिंह जी से बहुत से प्रश्न करता रहा, जिसके उत्तर वह मुझे देते रहे ।" मि. फोरसाइथ ने 18 तारीख वाले पत्र में अमृतसर तथा रायकोट के बूचड़ों के मारे जाने तथा मलौद और कोटला के आक्रमणों के विषय में आपसे हुई वार्तालाप का वर्णन करते हुये सरकार को अपनी अनुमति इस प्रकार लिख भेजी । "यदि सामूहिक रूप में सारे पंजाब की शान्ति के लिये नहीं, तो कम से कम ज़िला लुधियाना में शांति स्थापना के लिये मैं अति आवश्यक समझता हूँ, की कूका सम्प्रदाय के नेता गुरु राम सिंह जी को शीघ्रतम पंजाब से देश निर्वासित कर दिया जाय । उसको इलाहाबाद भेज दिया जाय । हिंद सरकार द्वारा उसके विषय में अन्तिम दृढ़ निर्णय के आदेश तक उसको इलाहाबाद ही निगरानी में रक्खा जाय । कमिशनर ने अति सबल शब्दों में लिखा, कि ऐसे आदमी को मुक्त रहने की आज्ञा देना व्यापक रूप में हानिकारक है ।

पत्र के अंत में यह भी अंकित था, "मुझे भरोसा हैं , कि जो कार्यवाही मैं करने लगा हूं, सरकार उसकी स्वीकृति दे देगी तथा गुरु राम सिंह जी और उनके सूबों के विरुद्ध कानून नं 3 सन् 1818 के अनुसार नज़र बन्द तथा बन्दीगृह में रखने के वारंट जारी कर दिये जायेंगे । मैं इन सबको एक दो दिनों के अन्दर बन्दी करके इलाहाबाद के मजिस्ट्रेट के पास भेज दूँगा।"

गुरु राम सिंह जी के लुधियाना पहुंचने से लेकर प्रातः: चार बजे तक मि. फोरसाइथ आप से वार्तालाप करता रहा।

प्रातः चार बजे की डाक गाड़ी के एक विशेष डिब्बे में मि. जेक्सन की गोरखा गार्द के पहरे में गुरु राम सिंह जी, बाबा जवाहर सिंह , बाबा साहब सिंह , बाबा लक्खा सिंह तथा नानू सिंह पांचों को सीधा इलाहाबाद भेज दिया गया । बाबा लक्खा सिंह को लुधियाना में ही बन्दी कर लिया गया था।

गाड़ी में चढ़ाकर तथा 18 तारीख वाला पत्र डाक में भेजकर मि. फोरसाइथ कोटला की ओर चला गया तथा गोरखों की एक कम्पनी को साहनेवाल पहुंचने का आदेश दे गया । कम्पनी इसी गाड़ी में प्रातः साढ़े चार बजे साहनेवाल पहुंच गई ।

सूबों की गिरफ्तारी के सम्बन्ध में कैप्टन मेंन्ज़ी के 18 जनवरी के पत्र का अनुवाद यह है जो उसने लुधियाना से लिखा:

"मेरे प्रिय कर्नल , मैं मि. परकिन्ज को विशेष रिपोर्ट जो मुझे अभी मिली है बंद करके भेज रहा हूं । इससे यह प्रकट होता है, कि मि. कावन ने सब कुछ अपने उत्तरदायित्व के आधार पर किया है। जो मनुष्य पटियाला रियासत की सीमा में पकड़े गये थे, उनमें से अधिकतर को जान से मार दिया गया है। मि. फोरसाइथ यहां से कोटले को चला गया है। मैं विचार करता हूं कि वह शेष व्यक्तियों पर मुकदमा चलायेगा तथा कानूनी ढंग से दंड देकर उन्हें जान से मार देगा । प्रतीत यह होता है कि ये व्यक्ति बिलकुल ही काबू से बाहर हो गये थे। मैं पिछली सारी रात गुरु राम सिंह जी, लक्खा सिंह तथा जवाहर सिंह को यहां से भेजने के प्रबंध में व्यस्त रहा हूं । इन्हें मि. जेक्सन की निगरानी में गोरखा सिपाहियों की गार्द के साथ इलाहाबाद भेज दिया गया है। गुरु राम सिंह जी केवल चार साथियों के साथ यहाँ आये । वह दो बजे के लगभग आधी रात पश्चात् यहां पहुंचे और चार बजे यहाँ से भेज दिये गये । इस बीच के समय में मि. फोरसाइथ उनसे प्रशन करके हालात पूछता रहा ।

"मि. बेली 25 सवारों तथा पुलिस को साथ लेकर पिछली रात ही

मलौद की ओर गुरु राम सिंह जी को लुधियाने लाने के लिए चला गया था । परंतु गुरु राम सिंह जी वापिस भैणी चले गये थे । इसलिये मि. बेली रात को साहेनवाल ही ठहर गया । दूसरे दिन सुबह लुधियाना से 40 गोरखे तथा 12 पुलिस के आदमी रेल द्वारा साहनेवाल भेज दिये गये थे । इनको साथ लेकर मि. बेली भैणी की ओर शेष सूबों को गिरफ्तार करने तथा गुरुद्वारा में शस्त्रों और अन्य कागज़ों की तलाशी लेने को तैयार हुआ । जब वह साहेनवाल से चलने ही लगा था, तो 5 अन्य सूबे लैहना सिंह, पहाड़ा सिंह , हुक्म सिंह , काहन सिंह निहंग तथा गोपाल सिंह थाना के मुन्शी सारजंट के साथ साहनेवाल के थाने में पहुंच गये । मि. बेली ने इनको प्रातःकाल गाड़ी में लुधियाना भेज दिया । यह सूबे अब मेरे पास लुधियाना में गोरख़ों की गार्द के पहरे में हैं । मैं किसी यूरोपियन अफ़्सर की प्रतीक्षा कर रहा हूँ, जिसकी गार्द के पहरे में इन्हें यहाँ से आगे भेज दूंगा । हर एक बात शान्त हुई प्रतीत होती है। मैंने समस्त ज़िलों के अफसरों को अपने-अपने ज़िलों के बन्दीखानों तथा धनकोषों पर सहसा आक्रमणों के बचाव के लिये गार्दों को पक्का करने के लिये हुक्म भेज दिये थे। मलूक सिंह को छोड़कर शेष सब बड़े बड़े नामधारी पकड़ लिये गये हैं । मलूक सिंह भैणी में ही बताया जाता है । आज प्रातः ही मि. बेली उसको साथ लेकर यहाँ पहुँच जावेगा । मैं गुरु राम सिंह जी को देश निर्वासन का दंड देने के विरुद्ध था, परन्तु मि. फोरसाइथ ने कहा, कि वह गुरु राम सिंह जी को मलेरकोटला जाने से पहले लुधियाना से अवश्य ही बाहर भेज देगा।

नोट--मि. परकिन्ज की 17 जनवरी की सायं को कोटला से लिखी हुई विशेष रिपोर्ट के अनुसार रियासत नाभा के रसाला की गार्द , काहन सिंह को गाँव मूलोपुर से, जो कोटला से 5 कोस पर है, डिप्टी कमिश्नर मि. कावन के हुक्म से गिरफ्तार करके कोटला में ले आई थी । काहन सिंह को भी साहनेवाल लाया गया तथा इन पांचों के साथ ही साहनेवाल से लुधियाने को भेज दिया गया था।

❋

गुरुद्वारा की तलाशी, तालाबन्दी तथा पुलिस चौकी का बैठना

साहनेवाल के थाने से सूबों को रेल द्वारा लुधियाना भेजने के पश्चात् लेफ्टिनेंट कर्नल बेली, गोरखों की कम्पनी, 12 नम्बर रिसाला के 25 सवार तथा पुलिस के सिपाहियों को साथ लेकर 18 जनवरी गुरुवार को सूर्योदय के साथ ही गुरुद्वारा भैणी साहिब में पहुँच गया । आस-पास के गाँवों के नम्बरदार भी बुला लिये गये थे।

मि. बेली ने पहुंचते ही गुरुद्वारा को घेरा डाल दिया, तथा आदेश दिया, कि गुरुद्वारा में उपस्थित प्रत्येक पुरुष, स्त्री, बालक, और वृद्ध को निकाल कर गाँव से बाहर रस्ते पर खड़ा कर दिया जाये । सूबा मलूक सिंह को नहर के स्थान से बुलाकर भैणी में लाया गया । आदेश मिलते ही गोरखों और घुड़सवारों तथा पुलिस के सिपाहियों ने पलभर में गुरुद्वारा खाली करवा दिया । जिस प्रकार भी कोई खड़ा था उसी प्रकार उसे शरीर के कपड़ों में भूखे पेट ही रास्ते पर लाकर गिरोह में मिला दिया गया । केवल गुरु राम सिंह जी के पिता, भाई, सुपुत्री, दुकान का प्रबंधक भाई वरियाम सिंह , तथा निजी सेवक भाई मक्खन सिंह को घर में रहने दिया गया । आपके 82 पशुओं गायों, भैंसों, घोड़ों तथा ऊंटों की देखभाल के लिये 11 आदमी और रहने दिये गये । शेष समस्त जत्थे को गार्दों के पहरे में भैणी से लुधियाना पैदल लाया गया। बच्चों, स्त्रियों, वृद्धों को भी साथ ही पैदल चलाया गया। 5-6 घंटे की भूख, प्यास, चिन्ता, पैदल चलने के कष्ट सहन करता हुआ नामधारियों का यह जत्था दोपहर उपरान्त लुधियाना में पहुंचा । गुरुवार का यह दिन भयानक दिन था । गुरु राम सिंह जी तीन सूबों के सहित निर्वासित हुये गार्दों के पहरों में इलाहाबाद की ओर रेलगाड़ी में ले जायें जा रहें थे । 5 सूबे लुधियाना में गार्दों के पहरे में बैठे थे । 16 नामधारी कोटला में तोपों

से उड़ाये जा रहे थे । 172 नामधारियों का यह जत्था भैणी से लुधियाना तक फौजी गार्दों के पहरे में बारह कोस तक पैदल चलाकर लाया गया था।

19 जनवरी शुक्रवार को लुधियाना से पंजाब सरकार को निम्नलिखित तार भेज दिया गया, जो पंजाब सरकार के सचिव ने हिंद सरकार के गृह सचिव को उसी दिन भेज दिया ।

'कमिश्नर ने कल अन्य 16 बन्दियों को कोटला में तोपों से उड़वा कर मरवा दिया है। चार पटियाला वालों के हवाले कर दिये गये हैं। जो 7 मलौद में पकड़े गये थे, उन पर आज नियम पूर्वक मुकदमा चलेगा। मि. बेली अभी भैणी में ही है। उसने भैणी से सबको निकालकर गुरुद्वारा खाली करवा दिया है। जो 172 दोपहर पश्चात मेरे पास पहुंचे थे, मैंने उनमें से 122 को टोलियों में उनको अपने अपने ज़िलों में भेज दिया हैं । अभी 50 शेष हैं जिनका भैणी के अतिरिक्त कोई निवासस्थान नहीं । इनको मैंने कमिशनर के हुक्म अनुसार पहरे में रक्खा हुआ है । लाहौर से आया मि. समिथ , काहन सिंह तथा अन्य सूबों को आज दोपहर उपरान्त इलाहाबाद को ले जायेगा ।"

19 जनवरी को एक बजे वायसराय ने निम्नलिखित अति आवश्यक तार पंजाब के लेफ्टिनेंट गवर्नर के नाम भेजा ।

"स्पष्ट पक्के हुक्मों के बिना कुकों को झटपट मार डालने को बन्द करो।"

लेफ्टिनेंट गवर्नर ने इसका निम्नलिखित उत्तर भेजा :--

"आपका तार मिला । मि. कावन के 50 कूकों को मार डालने के पश्चात्, कल कमिश्नर ने मलेरकोटला पहुंचकर विचार पूर्वक तथा चौकसी से 16 अन्य को अपने ही हुक्म से मरवा दिया। अंग्रेज़ी इलाके में पकड़े गये कूकों पर बाकायदा मुकद्दमे चलाये जायेंगे । इसके बाद किसी को भी झटपट मौत के घाट नहीं उतारा जाएगा । "

गुरुवार तथा शुक्रवार दोनों दिन गुरुद्वारा की तलाशी होती रही । कर्नल बेली ने एक एक वस्तु को स्वयं अपनी आंखों से देखा तथा प्रत्येक

बात की पूरी-पूरी तफ़तीश की । मि. बेली ने अपने 30 जनवरी की रिपोर्ट में तलाशी में निकली निम्नलिखित वस्तुओं की सूची दी है।

(1) नेपाल से सौगात के रूप में आई हुई दो खुखरियाँ

(2) सोने चांदी के आभूषण, मूल्य नहीं लिखा

(3) नकदी 1500 के लगभग

(4) टकुए अथवा कुल्हाड़ियाँ 36

(5) गंडासे 6

(6) लठ् तथा चक्कर संख्या नहीं दी,

(7) कागज पत्र--विशेष नहीं मिले ।

कर्नल बेली ने नकद रुपये, सोना चांदी के आभूषण, बहुमूल्य दुशाले, ज़री की कशीदाकारी के बहुमूल्य चोगे, आदि समस्त वस्तुयें एक सन्दूक में बन्द करवाकर लुधियाना के सरकारी कोष में भेज दीं । गुरु राम सिंह जी की बहुमूल्य पोशाकों तथा पहनने के वस्त्रों के सन्दूक लुधियाना सदर के दफ्तर में भेज दिये ।

गुरुद्वारा को ताले लगा दिये गये। थानेदार उमराव अली के आधीन 20 सिपाहियों की चौकी बिठा दी गई । चौकी के सिपाहियों ने गुरुद्वारा की डयोड़ी में डेरे लगाकर हुक्के गुड़गुड़ाने आरम्भ किये । गुरु राम सिंह जी के परिवार को नज़रबन्दों के रूप में मकान की दो कोठड़ियों में रहने की आज्ञा दी गई । कुटुम्ब के बंदों की बाहर जाते तथा घर लौटते समय तलाशियाँ ली जाती । किसी नामधारी को भैणी में आने की आज्ञा नहीं थी। जो भी आता, उसे तुरन्त ही पकड़ लिया जाता । 51 साल अथवा सन् 1923 तक पुलिस की चौकी दरवाज़े में बैठती रही ।

20 जनवरी शनिवार को मि. फोरसाइथ ने भारत के आज़ादी के इतिहास के नामधारी आन्दोलन के इस खूनी सप्ताह के सम्बन्ध में पूर्ण विवरण देते हुए पंजाब सरकार के सचिव को एक पत्र लिखा जिसका सार यह हैं :--

1. "मैं कल 19 जनवरी को मलौद पहुँच गया था, चार अपराधियों को

फांसी के दण्ड दिये गये । चारों के चारों बुरी तरह घायल थे. दो की हड्डियां टूटी हुई थी।

2. मुझे कप्तान मेन्ज़ीस डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल की ओर से रिपोर्ट मिली है कि कर्नल बेली 172 कूकों को भैणी से लुधियाना ले आया है। इनमें से चार सूबे इलाहाबाद भेज दिये गये हैं । फतह सिंह , हीरा सिंह, गुरुमुख सिंह, खजान सिंह, हरनाम सिंह, हर्सा सिंह, समुन्द सिंह, अतर सिंह तथा धर्म सिंह सूबे और प्रसिद्ध नामधारी हुकम आने तक लुधियाना में ही गार्द के पहरों में रक्खे हुए हैं। 122 आदमियों को अपने अपने घरों को भेज दिया गया है । शेष 50 आदमियों के न घर हैं न घाट तथा नाही उनकी जीविका के कोई साधन । वास्तव में यह लोग इस सम्प्रदाय के खतरनाक आदमियों में से हैं, जिन्होंने सम्पत्तियाँ तथा घर घाट बेच दिये हैं । अब अपने नेता का हर हुक्म मानने के लिए प्रस्तुत बैठे हैं। मैं इनसे जमानतें माँगूगा । यदि इन्होंने जमानतें न दी, तो न्याय अनुसार इनको 2-2 साल की कैद का हुक्म दे दूंगा । मैंने हुक्म दे दिया हैं कि इस समय भैणी में पुलिस की चौकी बिठा दी जाये ।

3. अभी तक यह भय है, कि नामधारी फिर कोटला पर आक्रमण करेंगे। पिछले सप्ताह चारों ओर से कूकों की टोलियों के कोटला की ओर प्रस्थान के समाचार मिलते रहे हैं तथा कोटला से एक अथवा दो मील पर आकर आगे इन टोलियों के विषय में कुछ पता नहीं चलता था । इस पर मैंने कोटला के नाजिम को हुक्म दिया है, कि 100 नये आदमी नौकर रखकर बढ़िया शस्त्रों से सन्नद्ध करके शहर की रक्षा करें ।

4. कूकों का प्रचार तथा दीवान बन्द किये जायें । कूकों को दस अथवा 12 आदमियों से अधिक किसी प्रकार का कोई सम्मेलन करने की आज्ञा न दी जाये ।

5. उस समय तक लुधियाना में फौजी दस्ते रक्खे जायें, जब तक कूका सम्प्रदाय के आदमी अपनी खतरनाक कार्यवाहियां बन्द नहीं करते।

6. मैं डिप्टी कमिश्नर मि. कावन के श्रम से किये गये यत्न भी आपके सामने लाना चाहता हूँ । उसकी तुरन्त की गई कार्यवाही के कारण आने वाला एक भयानक विद्रोह समाप्त कर दिया गया है । मुझे अत्यन्त शोक है, कि मुकदमा चलाने के बिना तत्काल दोषियों को मारने की कार्यवाही ने उसकी अच्छी सेवा को कुछ नीचे गिरा दिया है । परन्तु मैं विश्वास करता हूँ, कि जिन परिस्थितियों में उसने यह कार्यवाही की हैं , उन पर भी विचार किया जायेगा। मेरा हुक्म मिलते ही उसने यह कार्यवाही बन्द कर दी थी, तथा शेष कैदियों के विरुद्ध नियमानुसार कानूनी कार्यवाही की गई ; इस पूरे समय में कर्नल परकिन्ज भी मि. कावन के साथ ही रहा तथा उसने बहुत होशियारी दिखाई ।
7. दोनों डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरलों, कर्नल बेली तथा कैप्टन मेन्ज़ीस ने भी बहुत ही अच्छी सहायता दी है। पहले भी महाराजा साहब पटियाला, राजा साहब जींद तथा राजा साहब नाभा की ओर से तत्कालीन दी गई सहायता का वर्णन कर चुका हूँ । मैं विश्वास करता हूँ कि लेफ्टिनेंट कर्नल साहब बहादुर इनकी सेवा स्वीकार करके इनका धन्यवाद करेंगे।
8. अब गोरी फौज की लुधियाना में कोई आवश्यकता नहीं रही । मैं सिफारिश करता हूं, कि 54 नम्बर का ट्रूप तथा तोपखाना जालंधर को वापिस भेज दिये जायें । कर्नल ग्रीन के 12 नम्बर रिसाला के सौ सवार तथा गोरखों की पलटन को अभी लुधियाना में ही रक्खा जाये ।
9. मैं अब वापिस अम्बाला जा रहा हूँ ।

नोट - पश्चात लिखा--जब मैं यह रिपोर्ट लिख चुका था, तब आपका तार मिला, कि बिना लाट साहब के स्पष्ट हुक्म के किसी के प्राण न लिए जाएं । आपको मेरी रिपोर्ट से पता लग जाएगा, कि मैंने पहले ही ऐसा किया है । यहां मैं यह बताना चाहता हूँ, कि मेरे कोटला पहुँचने पर तीस आदमी मेरे सामने पेश किये गये थे, जो कोटला के हमले में शामिल थे। इनमें से 16 को मैंने कमिश्नर के अधिकारों का उपयोग करके प्राणदण्ड दिए। चार को देश निर्वासन के दण्ड दिए गए । शेष दस को अभी दण्ड नहीं दिया ।

19 जनवरी को हिन्द के वायसराय के दफ्तर फोर्ट विलियम से फाइल नंबर 7 सन 1872 के द्वारा एक रिपोर्ट हिन्द विभाग के सचिव को लंदन में भेज दी गई। इसके साथ ही 14 तारों की नकलें भी भेजी गई । इस रिपोर्ट का सार यह है :--

1. कूकों के कुछ गिरोहों ने लुधियाना ज़िले में राजप्रबन्ध में रुकावट पैदा की ।
2. इनकी और से दो आक्रमण किये गये । पहिला 14 जनवरी की रात को लगभग 200 आदमियों ने किला मलौद पर किया, तथा अनुमान यह है कि इसी टोली के लगभग 500 आदमियों ने 15 जनवरी को प्रात ही मलेरकोटला पर दूसरा आक्रमण किया । आक्रमणकारियों को दोनों स्थानों से भगा दिया गया ।
3. डिष्टी कमिश्नर लुधियाना के प्रार्थना करने पर उसकी सहायता के लिये फौजी दस्ते दिल्ली तथा जालंधर से लुधियाना भेज दिये गये थे । साथ ही राजा जींद , महाराजा पटियाला तथा राजा नाभा ने यथा समय पर तुरन्त सहायता की है। लगभग सौ कूकों में से जो कोटला के हल्ला से सम्बन्ध रखते थे, कुछ मार दिये गये हैं , कुछ घायल हैं और कुछ बन्दी हैं । इनके नेता हीरा सिंह, तथा लहना सिंह मार दिये गये हैं। 17 तारीख को डिष्टी कमिश्नर ने तार भेजा है, कि शांति स्थापित हो गई है ।
4. कूका सम्प्रदाय के नेता गुरु राम सिंह जी को गवर्नर पंजाब ने तत्काल दिल्ली लाने का आदेश दिया था। उसको तीन सूबों के सहित फौजी गार्द के पहरों में इलाहाबाद भेज दिया गया है ।
5. अब तक हमें यही समाचार मिले हैं । लेफ्टिनेंट गवर्नर की पूरी रिपोर्ट आने पर शीघ्र ही शेष समाचार आपकी सेवा में भेज दिये जायेंगे ।

❋

शहीद हुए नामधारी सिंह

17-18 जनवरी 1872 मलेरकोटला में शहीद हुए नामधारी सिंहों की सूचि पटिआला रिकॉर्ड मुताबक।

अमृतसर साके के शहीद

अमृतसर बुचड़-बुद्ध साके में 15 सितंबर 1871 ई. को फांसी दी गई।			
क्रमांक	**नाम**	**पिता का नाम**	**गांव**
1	हाकम सिंह पटवारी	स. रूपा सिंह	मौड़े
2	बीला सिंह	स. निहाल सिंह	नारली
3	लहणा सिंह तरखान	स. मुसद्दा सिंह	पंनव
4	फतह सिंह	स. हाकम सिंह	अमृतसर
अमृतसर बुचड़-बुद्ध साके में अगस्त 1873 ई. को फांसी दी गई।			
5	झंडा सिंह		ठठा
अमृतसर साके में उम्रकैद की सजा देकर अंडमान भेजा गया, वहीं शहीद हुए।			
6	लाल सिंह सिपाही	स. दल सिंह	चहल
7	लहणा सिंह मिस्त्री	स. बुलाका सिंह	अमृतसर

रायकोट साके के शहीद

रायकोट साके में 5 अगस्त 1871 ई. को फांसी दी गई।			
8	मंगल सिंह	स. समुंद सिंह	पिथो
9	मस्तान सिंह	स. किशन सिंह	पिथो
10	गुरमुख सिंह	स. मोहर सिंह	पिथो
रायकोट साके में 26 नवंबर 1871 ई. को लुधियाना में फांसी दी गई।			
11	ज्ञानी रतन सिंह	स. राम किशन	मंडी कलां

12	रतन सिंह	स. बुद्ध सिंह	नाईवाला

लाहौर में शहीद

11 सितंबर 1871 ई. को फांसी दी गई।			
13	बिशन सिंह सुनयारा		लाहौर

मलौद साके के शहीद

मलौद साके में 14 जनवरी 1872 ई. को लड़ते हुए शहीद हुए।			
14	अतर सिंह		रुड़का
15	नंद सिंह		हंडाइया
मलौद साके में उम्रकैद की सजा देकर काले पानी भेजा गया, वहीं शहीद हुए।			
16	भगवान सिंह	स. राम सिंह	नंगल
17	थम्मण सिंह	स. अलबेल सिंह	फुलेड़ा
18	ज्ञानी सिंह	स. दल सिंह	फुलेड़ा
19	महिर सिंह	स. गुलाबा सिंह	अलावलपुर

मलेरकोटला के शहीद

मलेरकोटला साके में 17 जनवरी 1872 ई. को तोपों से शहीद कर दिया गया।			
20	हीरा सिंह	स. काहन सिंह	सकरौदी
21	लहणा सिंह	स. महताब सिंह	सकरौदी
22	मित सिंह	स. बुध सिंह	सकरौदी
23	भूप सिंह	स. मेहर सिंह	दयालगढ़
24	वसावा सिंह	स. सौधा सिंह	दयालगढ़

25	वरियाम सिंह	स. लहना सिंह	दयालगढ़
26	नरायण सिंह	स. महताब सिंह	रड़
27	हीरा सिंह	स. महताब सिंह	रड़
मलेरकोटला साके में 17 जनवरी 1872 ई. को तलवार से शहीद किए गए।			
28	बिशन सिंह	स. महताब सिंह	रड़
मलेरकोटला साके में 17 जनवरी 1872 ई. को तोपों से शहीद कर दिया गया।			
29	सद्दा सिंह	स. महां सिंह	रड़
30	हरनाम सिंह	स. चढ़त सिंह	रड़
31	गुरदित सिंह	स. रबी सिंह	रड़
32	गुरमुख सिंह लंबरदार	स. खज़ान सिंह	फरवाही
33	बुप सिंह	स. खज़ान सिंह	फरवाही
34	स. हरनाम सिंह	स. जय सिंह	घनौरी
35	प्रेम सिंह	स. मान सिंह	गगड़पुर
36	चढ़त सिंह	स. धर्म सिंह	बालियां
37	चढ़त सिंह	स. राम सिंह	बालियां
38	स. काहन सिंह	स. डल्ला सिंह	लहरी (थाना सुनाम)
39	जीवन सिंह	स. धौंकल सिंह	लध
40	कटार सिंह	स. टेक सिंह	धनौला
41	वरियाम सिंह	स. मख्खण सिंह	बरनाला (अनाहदगढ़)
42	नत्था सिंह	स. बुध सिंह	बरनामा (पटियाला)
43	चतर सिंह	स. गुलाब सिंह	गुमटी
44	रतन सिंह	स. चतर सिंह	गुमटी
45	वरियाम सिंह	स. निगाहीया सिंह	मूम

46	बीर सिंह	स. सुहेल सिंह	मूम
47	मोगा सिंह	स. साहब सिंह	महराज
48	अतर सिंह	स. भाग सिंह	महराज
49	हरनाम सिंह	स. दलेल सिंह	मंडी (कलां)
50	महां सिंह	स. मंगल सिंह	चाओ के
51	बसंत सिंह	स. सुजान सिंह	सेलबराह
52	खज़ान सिंह	स. भगवान सिंह	पीर के कोट
53	काहन सिंह	स. हरगुलाल सिंह	संगोवाल
54	वज़ीर सिंह	स. बारा सिंह	रब्बों
55	रूड़ सिंह	स. जसा सिंह	बिशनपुरा
56	भूप सिंह	स. भूरा सिंह	दीवा (मंडेर)
57	देवा सिंह	स. हकूमत सिंह	लोहगढ़
58	गुरमुख सिंह	स. बहाल सिंह	लोहगढ़
59	निहाल सिंह	स. बूटा सिंह	लहरा (थाना डेहलौं)
60	काहन सिंह	स. अकरद सिंह	लहरा (थाना डेहलौं)
61	उत्तम सिंह	स. महिर सिंह	रुड़का
62	चढ़त सिंह	स. माघ सिंह	रुड़का
63	जय सिंह	स. गंडा सिंह	भदलथूहा
64	अतर सिंह	स. देसा सिंह	मछराए कलां
65	जवाहर सिंह	स. देसा सिंह	मछराए कलां
66	दसौंधा सिंह	स. बीर सिंह	बिलासपुर खमाणों
67	सदा सिंह	स. रूपा सिंह	जोगा
68	खजान सिंह	स. वज़ीर सिंह	मल्लो के
69	बख्शा सिंह उर्फ परसा सिंह	स. तारा सिंह	जंडवाला

18 जनवरी 1872 ई. को तोपों से मलेरकोटला में शहीद किए गए कूका सिंह।			
70	अनुप सिंह	स. महताब सिंह	सकरौदी
71	भगत सिंह	स. दयाल सिंह	कांझला
72	अलबेल सिंह	स. सुजान सिंह	बालियां
73	जवाहर सिंह	स. उद्दम सिंह	बालियां
74	रुड़ सिंह	स. बूटा सिंह	मलूमाजरा
75	हीरा सिंह	स. वीर सिंह	पिथो
76	केसर सिंह	स. ध्यान सिंह	गिल कलां
77	वरियाम सिंह	स. अमरीक सिंह	महराज
78	सुजान सिंह	स. सुच्चा सिंह	रब्बों
79	बेला सिंह	स. राम सिंह	रब्बों
80	सोभा सिंह	स. दया सिंह	रब्बों
81	सेंधा सिंह	स. दया सिंह	रब्बों
82	सोभा सिंह	स. खजान सिंह	भदलथूहा
83	शाम सिंह	स. वीर सिंह	जोगा
84	स. हाकम सिंह उर्फ गुलाब सिंह	स. बुद्ध सिंह	झबाल, तरनतारन
85	वरियाम सिंह	स. मइया सिंह	बहादुर सिंह वाला
मलेरकोटला में 15 जनवरी 1872 ई. को लड़ाई में 7 कूके शहीद हुए और 1 गंभीर रूप से घायल हुआ, जिसकी बाद में मृत्यु हो गई। अब तक 5 शहीदों के नाम ही मिल सके हैं और 3 नामों की खोज जारी है।			
86	नथा सिंह		रब्बों
87	वज़ीर सिंह		
88	खजान सिंह		रब्बों
89	सुजान सिंह		फुलेड़ा

90	सुहेल सिंह		लहरा
ये दो वीरांगनाएँ मलेरकोटला साके की ध्वजवाहक थीं।			
91	माई खेम कौर		
92	माई इन्द कौर		हंडाइया
मलेरकोटला में शहीद हुए तीन सिंहों के नाम अब तक नहीं मिले प्रयास जारी हैं।			
93	अज्ञात		
94	अज्ञात		
95	अज्ञात		

नज़रबंदी के दौरान शहीद हुए सूबे

1818 ई. के बंगाल रेगुलेशन के तहत अलग-अलग स्थानों पर 'स्टेट प्रिजनर' के रूप में नज़रबंदी के दौरान ही शहीद हो गए।			
96	सूबा साहब सिंह	स. दयाल सिंह	बनवालीपुर
97	सूबा रुड़ सिंह	स. दयाल सिंह	बनवालीपुर
98	सूबा जवाहर सिंह	स. दल सिंह	डरोली (भाई)
99	सूबा पहाड़ा सिंह	स. हेमा सिंह	मलौद
100	सूबा लक्खा सिंह	स. रण सिंह	मलौद

वापस आकर गंभीर बीमारियों के कारण शहीद हुए सूबे

जला-वतन साके में 16-16 साल की कैद काटकर 1887-88 ई. में बीमारी की हालत में रिहा होकर आए और वापस आकर शीघ्र ही शहीद हो गए।			
101	सूबा काहन सिंह	स. नथा सिंह	चक (मलेरकोटला)

102	सूबा ब्रह्मा सिंह	स. गुलाब सिंह	दरयापुर (कैथल)
103	सूबा मलूक सिंह	स. सुख्खा सिंह	फुलेवाल
104	सूबा हाकम सिंह	स. मेहर सिंह	पिथो
105	सूबा मान सिंह	स. मख्खन सिंह	सैदोकी

मोरिंडा (बागांवाले) साके में शहीद

1871 ई. में मोरिंडा, 1874 ई. में काले पानी भेजे गए और वहीं शहीद हो गए।			
106	धोंकल सिंह	स. देवा सिंह	किला रायपुर
1875 ई. में घर में पाठ कराने को गैरकानूनी इकट्ठ बताया गया और पंजाब सरकार ने कैद की सजा दी, कैद के दौरान ही शहीद हो गए।			
107	अतर सिंह	स. हकूमत सिंह	लोहगढ़

नोट: अमृतसर साके के भगवान सिंह अड़बंगी मरहाणा, महिर सिंह लोपोके, लछमन सिंह चहल सारी उम्र मफरूर रहे। ये तीनों हमारे ज़िंदा शहीद थे।

स.स. विरक

धन्यवाद सहित: स. जसविंदर सिंह हिस्टोरियन